आयंस-सिक्खाविही

(आदर्श शिक्षाविधि)

मंगल आशीर्वाद :

परम पूज्य सिद्धान्त चक्रवर्ती, क्षपकराज शिरोमणि

आचार्य श्री विद्यानंद जी मुनिराज

ग्रंथकार :

आचार्य वसुनंदी मुनि

ग्रंथ : आयंस-सिक्खाविही (आदर्श शिक्षाविधि)

मंगल आशीर्वाद : प.पू. सिद्धान्त चक्रवर्ती श्वेतपिच्छाचार्य
श्री विद्यानंद जी मुनिराज

ग्रंथकार : प्राकृतभाषा चक्रवर्ती आचार्य
श्री वसुनंदी जी मुनिराज

व्याख्यान, भाषानुवाद
एवं सम्पादन : आर्यिका वर्धस्व नंदिनी

संस्करण : प्रथम (सन् 2025)

प्रतियाँ : 1000

ISBN : **978-93-94199-40-8**

मूल्य : 115/- (Not for Sale)

प्रकाशक : निर्ग्रन्थ ग्रंथमाला समिति (रजि.)

प्राप्ति स्थल : निर्ग्रन्थ ग्रंथमाला समिति कार्यालय
मो. 9971548889, 8800091252

मुद्रक : मित्तल इंडस्ट्रीज़, नई दिल्ली
मो. 9312401976

Visit us @ www.acharyavasunandi.com

संपादकीय

ज्ञान चेतनाका सर्वप्रधान गुण है। ज्ञानको चेतनाका लक्षण और शाश्वत स्वभाव भी माना गया है। ज्ञानके माध्यमसे ही चेतनामें सम्यक्त्वादि अन्य गुणोंका प्रकटीकरण सम्भव है। जिस प्रकार दुग्धका सार घृत, फलोंका सार रस, पुष्पोंका सार गन्ध, रत्नाकरका सार रत्न, दीपकका सार ज्योति मानी जाती है उसी प्रकार नरभवका सार ज्ञान माना जाता है। आचार्य भगवन् श्री कुन्दकुन्द स्वामीने दर्शनपाहुड़में लिखा भी है–

णाणं णरस्स सारो, सारो वि णरस्स होइ सम्मत्तं।
सम्मत्ताओ चरणं, चरणाओ होइ णिव्वाणं।।31।।

ज्ञान मनुष्यका सार है। सम्यक्त्व भी मनुष्यका सार है। सम्यक्त्व से चारित्र और चारित्र से निर्वाण होता है।

आचार्य भगवन् श्रीकुलभद्रस्वामीने सारसमुच्चयमें कहा है–

ज्ञान नाम महारत्न, यन्न प्राप्त कदाचन।
संसारे भ्रमता भीते, नानादु:ख विधीयते।।

हे आत्मन्! अनेक प्रकारके शारीरिक एवं मानसिक दु:खों से व्याप्त इस संसारमें भ्रमण करते हुए तूने ज्ञानरूपी महारत्नको कभी प्राप्त नहीं किया। इस समय यदि किसी पुण्य उदयसे तुझे सम्यग्दर्शन सहित जो यह सम्यग्ज्ञान प्राप्त हुआ है तो पञ्चेन्द्रिय विषयों में लुब्ध होकर प्रमादी मत बन।

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्नगुप्तं धनं,
विद्या भोगकरी यशः सुखकरी विद्या गुरूणां गुरुः।

विद्या बंधुजनो विदेशगमने विद्या परं दैवतम्,

विद्या राजसु पूज्यते नहि धनं विद्याविहीनः पशुः॥ नी.श.20

विद्या नरका अत्यधिक रूप है, छिपाकर रखा हुआ गुप्तधन है, विद्या भोगको करनेवाली है, यश व सुखकी कारिका है, विद्या गुरुओंकी गुरु है, विद्या विदेशयात्रा में बन्धुजन है, उत्कृष्ट देवता है, विद्या गुणोंके भण्डाररूप है जो राजाओंमें पूजी जाती है। विद्यासे रहित मनुष्य पशु तुल्य होता है।

विद्या कामदुधा धेनुर्विद्या चिन्तामणिर्नृणाम्।

त्रिवर्गफलितं सूते विद्या सम्पत्परम्पराम्॥ आ.पु.1/16/101

विद्याकामधेनु है, मनुष्योंके लिए चिन्तामणिरत्न है, विद्या त्रिवर्गरूप फलको उत्पन्न करती है तथा सम्पदाओं की सन्ततिको जन्म देती है।

जीवनमें सुविद्या और सम्यग्ज्ञानका जो उच्चतम स्थान है वह स्थान अन्य किसीको नहीं दिया जा सकता। उत्तमविद्या शिक्षा, ज्ञान, सुसंस्कार, सदाचार, संयम, तप और प्रशस्तध्यानकी उत्पत्तिमें समर्थ निमित्तकारण है। वर्तमानकालमें सुविद्या और सुशिक्षाके संस्कार ह्रासमान अवस्थाको प्राप्त हो रहे हैं तथा साक्षरता सम्भवतः वृद्धिको प्राप्त हो रही है। साक्षरता से अधिक महत्त्वपूर्ण सम्यक्शिक्षा व सुसंस्कार होते हैं, सुविद्या व श्रेष्ठ कलाएँ होती हैं क्योंकि इनके माध्यम से स्वपरका जीवन तो समृद्ध होता ही है इसके साथ-साथ चेतनाके अन्य गुणोंकी उत्पत्तिके विशिष्ट आयाम प्राप्त होते हैं।

सुशिक्षा व सुसंस्कारोंकी उत्तम उर्वराभूमिमें चैतन्य गुणोंका विकास उसी प्रकार होता है जिस प्रकार शुक्लपक्षमें चन्द्रमाकी कलाओंका और प्रावृट्कालमें जलाशयोंमें जलका। यूँ तो भारतवर्ष व अन्य सभी देशोंमें शिक्षा देने वाले करोड़ोंकी मात्रामें स्कूल, विद्यालय महाविद्यालय, विश्वविद्यालय, पाठशाला, शिक्षाकेन्द्र एवं शिक्षाशिविर आदि सञ्चालित हैं किन्तु सफलतम वही शिक्षाकेन्द्र माने जा सकते हैं जिनमें साक्षरताके प्रमाणपत्रोंके साथ-साथ आत्महितार्थ, समाजसेवा एवं जीवमात्रकी रक्षाके संस्कार दिए जाएँ तथा आध्यात्मिक विद्याकी पृष्ठभूमि भी तैयार की जाए।

पुरातनकालमें भले ही शिक्षाकेन्द्र कम थे किन्तु शिक्षाका स्तर उच्चकोटिका था। वह शिक्षा बहुफलवान् व पुष्पयुक्त अल्प वृक्षोंके समान थी। अथवा बहुजलसे पूरित अल्पजलसंसाधन कूप-जलाशयके समान थी। आज जल संसाधनों की सङ्ख्या में निःसंदेह वृद्धि हुई है किन्तु जलका स्तर उतना ही नीचे चला गया है। सम्भव है उसी तरह शिक्षाकेन्द्रोंका विस्तार व सङ्ख्यावृद्धि होने पर भी सदाचार, सुसंस्कार, सहनशीलता, विनम्रता, प्रेम, वात्सल्य, सेवा, परोपकारकी भावना इत्यादि मानवीयगुणोंका ह्रास दृष्टिगोचर हो रहा है।

नशेमें डूबी वर्तमान युवापीढ़ीने आज की शिक्षापद्धति (Education system) पर एक प्रश्नचिह्न लगा दिया है। शिक्षाकेन्द्रोंको सुसंस्कारित व सुशिक्षित मानव निर्माणकी फैक्ट्री कहा जाता है और यदि फैक्ट्रीसे production अच्छा प्राप्त न हो तब कमी माल की नहीं, फैक्ट्रीकी है। इसी

प्रकार गुमराह पीढ़ीको देखकर सर्वप्रथम ध्यान शिक्षाकेन्द्रों व शिक्षापद्धतिकी ओर आकर्षित होता है।

अच्छी बात, हितकरशिक्षा, लाभदायक औषधिके समान सदा ही महत्त्वपूर्ण रही है। अतः अच्छी बातें, शिक्षा व संस्कार सदा स्वयं ग्रहण करते रहो और बिना स्वार्थके दूसरोंको उदारताके साथ लुटाते रहो। चाहे भले ही अधिक परिश्रमका सुफल अल्परूपमें ही प्राप्त हो किन्तु उत्तम बीजोंको बोना बन्द मत करो। सर्वोत्तम फसल, सर्वोत्तम बीजोंसे ही प्राप्त होती है किन्तु उसकी मात्रा कम होती है। जघन्यतम बीजोंसे जघन्यगुणवाले फल बहुत मात्रामें सम्भव हो सकते हैं, उतनी बहुतायत अच्छी किस्मके फलोंके संभव नहीं है।

सम्भव है इन सभी बातोंको स्मरणमें रखते हुए आचार्य गुरुवरने 'आयंस-सिक्खाविही' (आदर्श शिक्षाविधि) ग्रन्थका प्ररूपण किया हो अथवा यूँ कहें कि आचार्यश्रीने मानवताके हितार्थ सङ्क्लेशतम दयापूर्वक संस्कृतिके संवर्द्धन व संरक्षणके भावोंको शब्दाङ्कित किया है।

परम पूज्य अभीक्ष्णज्ञानोपयोगी, प्राकृतभाषा चक्रवर्ती आचार्यश्री वसुनन्दी जी मुनिराज एक महान् चिन्तक हैं, एक साधु व तपस्वीका यह उत्कृष्ट रूप हैं जिनका जन्म ही मानो स्वपरकल्याणके लिए हुआ है। वैश्वानरकी कान्ति, मिहिर सा ओज लिए पदत्राणरहित पृथ्वी पर गमन करता हुआ यह साधक झोपड़ीसे लेकर राजमहलों तक ज्ञानकी अलख जगा रहा है, तभी तो देश, राष्ट्र, विश्व, समाजादि सभीके हितके लिए इन योगीकी लेखनी विभिन्न विषयों पर प्रवर्तमान रहती है।

कभी नारी, कभी पुरुष, कभी युवा, कभी प्रौढ़ तो कभी समस्त मानवोंको लक्ष्य करते हुए आचार्य भगवन्ने ग्रन्थलेखन किए। चिकित्सक, वैद्य, वकील, न्यायाधीश, व्यापारी, कृषक, मंत्री, राष्ट्रपति आदि सभीके लिए अपनी कलम चलायी और अब देशका भविष्य कहे जाने वाले विद्यार्थियोंके लिए समीचीन व आदर्श शिक्षा पद्धतिका लेखन कर प्रत्येक वर्ग पर उपकार किया है।

प्रस्तुत ग्रन्थ **'आयंस-सिक्खाविही'** में शिक्षाकी आदर्श पद्धति वर्णित है, जिसमें शिक्षा न केवल धनार्जन की हेतु है अपितु संस्कारों की वर्द्धिका भी है। वह मानव को सदाचार, नैतिक मूल्य वा मानवताका उत्पादन करती है। शिक्षाका प्रारूप, लक्षण, कब व क्या पढ़ायें, कैसे पढ़ायें, विद्यार्थी व शिक्षकका स्वरूप, शिक्षा पद्धतिमें आवश्यकपरिवर्तन, योग, क्रीड़ादिके महत्त्वका वर्णनभी आचार्य भगवन्ने प्रस्तुत ग्रन्थमें किया है।

यह ग्रन्थ अत्यन्त प्रासङ्गिक है। आचार्य गुरुवर द्वारा रचित ये गाथाएँ अत्यन्त प्रेरक व शिक्षा के क्षेत्र में सम्यक् क्रान्ति को जन्म देने वाली हैं। अतः गुरुवर की ही कृपादृष्टि से इस ग्रन्थ का व्याख्यान अल्प शब्दों में किया गया एवं शिक्षा के क्षेत्र का हर व्यक्ति इससे जुड़ सके अतः उसका अनुवाद इंग्लिश में भी किया गया है। यह कार्य हमने अपने भाषा ज्ञान के प्रदर्शन हेतु नहीं किया है अपितु पिछले लम्बे समय से वर्तमान पीढ़ी के, ग्रन्थों के इंग्लिश वर्जन के, निवेदन पर एवं शिक्षा ग्रन्थ जनोपयोगी बनाने हेतु ही किया है।

यद्यपि सरसों के दाने में सागर की समानता रखने वाली इन गाथाओं के गाम्भीर्य को पूर्णतः प्रकट करना हमारे द्वारा सम्भव नहीं तद्यपि भावार्थ में ग्रन्थकार के भावों को दर्शाने का प्रयास उन्हीं के मार्गदर्शन व आशीर्वाद से सम्भव हुआ।

'आयंस-सिक्खाविही' (आदर्श शिक्षाविधि) ग्रन्थका सम्पादन मुझ अल्पज्ञाके द्वारा किया गया, यह पूज्य गुरुदेवका आशीर्वाद ही है। यदि प्रमादवश कोई त्रुटि रह गई हो तो नीर-क्षीर विवेकी हंसके समान गुणग्राही दृष्टिसे ग्रन्थाध्ययन करते हुए विज्ञजन मुझे क्षमा करें।

ग्रन्थवाचन में सहयोगी प्राचार्य डॉ. अनिल भैया जी, डॉ. नरेन्द्र कुमार जी, डॉ. पुलक गोयल, डॉ. आशीष बमौरी जी व प्रतिष्ठाचार्य मनोज शास्त्री जी सभी विद्वत्गणों व मुद्रण प्रकाशनमें सहयोगी सभी महानुभावोंके लिए पूज्य गुरुदेवका शुभाशीष। आचार्य गुरुवरका उत्तम स्वास्थ्य हम सभीको वरदानके रूप में प्राप्त हो, उनकी संयमसाधना शुक्लपक्षके चन्द्रमाके समान सदैव प्रवर्द्धमान व सम्वर्द्धित रहे। पुनः प्राकृतभाषा चक्रवर्ती, अभीक्ष्णज्ञानोपयोगी आचार्य भगवन् श्री वसुनन्दी जी गुरुवरके श्रीचरणोंमें सिद्ध-श्रुत-आचार्य भक्ति सहित कोटिशः नमोस्तु! नमोस्तु! नमोस्तु!

-आर्यिका वर्धस्व नन्दिनी

दो शब्द

सन्तिकारगा हिदकारगा मुत्तिदायगा सम्मसिक्खा

(सम्यक् शिक्षा, शान्तिकारक, हितकारक एवं मुक्तिदायक है।)

प्रस्तुतिः प्रो. जयकुमार उपाध्ये, नई दिल्ली

दिनांकः 20-09-2025

प्राचीन भारत में अनेक ग्रंथ प्राकृतभाषा में लिखे गए हैं। प्राकृतभाषा ने जनभाषा के रूप में प्रसिद्धि पाकर लोकभाषा कहलायी है। जनसामान्य के मध्य बोल-चाल की भाषा प्राकृतभाषा रही है। आदिनाथ की अवधी प्राकृतभाषा आज भी अवध प्रान्त में बोली जाती है। नेमिनाथ की शौरसेनी प्राकृतभाषा वर्तमान में मथुरा प्रदेश में प्रचलित है। पार्श्वनाथ की भोजपुरी प्राकृतभाषा जनबोली में वाराणसी प्रदेश में प्रयुक्त है। वर्तमान में भारत देश की राष्ट्रभाषा हिन्दी है। उसकी माँ अपभ्रंश भाषा है। उस हिन्दी भाषा की नानी प्राकृतभाषा है।

2600 वर्ष पूर्व मगध प्रदेश में जन्में भगवान महावीर ने मागधी प्राकृतभाषा में अपने लोक कल्याणकारी उपदेश दिये हैं। उनके प्रथम शिष्य गौतम गणधर ने 12 अंगों के श्रुतज्ञान को प्राकृतभाषा में सुरक्षित रखा है। परवर्ती श्रुतधर आचार्यों ने प्रचुरता से प्राकृतभाषा में आगम ग्रन्थों की रचना की है। आज स्वतंत्र भारत में 22 भाषायें राजपत्रित भाषा हैं, उनमें 11 भाषाओं को शास्त्रीय भाषा की मान्यता प्राप्त हुई

है। उन शास्त्रीय भाषाओं में प्राचीनतम प्राकृतभाषा भी एक समृद्ध भाषा रही है। भारतीय प्राचीन ज्ञान परम्परा के संरक्षण संवर्धन में भारत सरकार सजग होकर वर्तमान सन्दर्भ में अनेक शैक्षणिक आयामों को विकसित कर रहे हैं।

शौरसेनी भाषा की प्रकृति संस्कृत भाषा है। महाराष्ट्री प्राकृत भाषा की प्रकृति शौरसेनी भाषा है। प्रकृति का अर्थ समानता है। यह प्राकृतभाषा देश की सर्वाधिक प्राचीन भाषा है। भारतीय भाषाओं को परस्पर में जोड़ने की आधारभूत कड़ी प्राकृतभाषा है। मानव के लौकिक और पारलौकिक जीवन की समृद्धि की प्रक्रिया इस भाषा में व्यवस्थित निरूपित किया है। प्राकृतकाव्य अमृत समान है।

परम पूज्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शान्तिसागर जी मुनिराज के आचार्य पद प्रतिष्ठापना शताब्दी महोत्सव के पावन उपलक्ष्य में, सिद्धान्तचक्रवर्ती आचार्यश्री विद्यानंद जी मुनिराज के जन्मशताब्दी समारोह के पावन पर्व पर उनके परम प्रियशिष्य प्राकृतभाषा चक्रवर्ती आचार्यश्री वसुनंदी जी मुनिराज ने **आयंस-सिक्खाविही (आदर्श शिक्षाविधि)** नामक प्राकृत भाषा में अनुपम ग्रन्थ रचना की है।

आपने आज तक प्राकृतभाषा के 160 ग्रन्थों को निर्माण कर श्रमणसंघ में कीर्तिमान को स्थापित किया है। इनमें से अधिकांश ग्रंथ प्रकाशित होकर स्वाध्यायी धर्मात्माओं के आध्यात्मिक आनन्द को वृद्धिंगत कर रहे हैं। आपने अद्यतन प्राकृतभाषा के एक लाख गाथाओं की रचना की है। उन्हीं

रचनाओं में से अनेक प्रासंगिक कल्याणकारी ग्रंथों का जन्म हुआ है। जो वर्तमान युग में श्लाघनीय सारस्वत कार्य है।

पूर्व संचित सुकृत पुण्यकर्म के उदय से आचार्यश्री वसुंनदी जी मुनिराज द्वारा विरचित नवीन ग्रन्थ **'आयंस-सिक्खाविही' (आदर्श शिक्षाविधि)** मुझे प्राप्त हुआ। उसे आदि से अन्त तक मनोयोग पूर्वक पढ़ा।

गुरुदेव की लेखनी से प्रसूत इस अनुपम ग्रन्थ का स्वाध्याय करते हुए अपूर्व आनन्द का अनुभव किया। शौरसेनी प्राकृतभाषा की गाथाओं के मध्य यह एक अनुपम काव्य रचना सृजित है। समूचे तपोमय जीवन काल में आपने जो समग्र भारतीय वाङ्मय का गहराई से अध्ययन एवं मनन किया है। उन प्राचीन आचार्यों के मूल मन्तव्यों का चिन्तन इस रचना में सहजता से प्रकाशित हो रहा है।

यहाँ पर अंकित प्राकृतभाषा के छन्दों ने उसके प्राण तत्त्व को उद्घाटित कर रहे हैं। आपके द्वारा अंकित प्राकृत की कवितायें लोकजीवन की गाथाओं का विस्तार से कथन कर रहे हैं। इस काव्यमयी छन्दों में लय, ताल, स्वर की प्रधानता है। इसकी गाथा के गेय मुख के सुख को बढ़ा रहा है। माधुर्य गुण से समाविष्ट इस काव्य के श्रवण से श्रोताओं को अपूर्व आल्हाद प्राप्त हो रहा है।

मंगलाचरण के तीन गाथाओं से प्रस्तुत ग्रन्थ को प्रारम्भ किया है। इस ग्रन्थ में शिक्षा के लक्षण, उसकी वर्तमान में उपादेयता का सुन्दर कथन है। उत्तम संस्कार को प्राप्त करने के लिए सम्यक् शिक्षा की आवश्यकता है। भगवान

ऋषभदेव की स्त्री शिक्षा का विवेचन सारभूत है। युग के आरम्भ में अपनी दोनों पुत्रियों को अंकविद्या, अक्षरविद्या की शिक्षा प्रदान कर स्त्री शिक्षा का सूत्र-पात किया है।

शारीरिक शिक्षा का उपदेश देते हुए देश की मर्यादा एवं संस्कृति की रक्षा हेतु अस्त्र-शस्त्र संचालन का प्रशिक्षण आवश्यक है। शिक्षा के भेद-प्रभेदों का विवेचन करते हुए गुरुकुल परम्परा के मध्य विद्यार्थी जीवन को सफल बनाने हेतु सेवा करना, कृषि करना, पशु-पालन करना, विकारों से रहित होकर योगाभ्यास करने के अनेक महत्त्वपूर्ण विषयों का प्रतिपादन किया है।

मन की पवित्रता के लिए सशक्त उपदेश करते हुए विषम परस्थितियों में धैर्य धारण करना, मनोबल को ऊँचा रखना, सम्यक् श्रम करना, सहनशीलता को बढ़ाना, एकाग्रता को बढ़ाना, ओंकार प्रणव बीजाक्षर का ध्यानमूलक आश्रय लेना अनिवार्य बताया गया है।

उपमा अलंकार के मध्य काव्य वैभव को दर्शाते हुए विद्यार्थियों के मूल्यों को बढ़ाते हुए, जैसे तिलों को पेलने से तेल का उत्पन्न होना, मेहंदी के लेप से शीतलता को प्राप्त करना, सोने को 16 ताप से संस्कारित कर उसके मूल्य को वृद्धिंगत होना, आदि प्रसंग कवित्व के प्रतिभा को प्रकट कर रहे हैं। जैसे आकाश मण्डल में सूर्य के उदय से सम्पूर्ण लोक प्रकाशित होता है, उसी तरह अध्यात्मरूपी सूर्य के उदय से आत्मा में ज्ञान का प्रकाश प्रकट होता है।

शिक्षा के स्वरूप को बताते हुए उत्तम शिक्षा वह है जो क्लेशनाशक, भाररहित, सारभूत, आधारभूत प्रेमभाव को उत्पन्न करने वाला हो। उत्कृष्ट शिक्षा विधि चिन्ता से, विषाद से, कषायों के उद्वेग से, क्षोभ से और भोग की अभिलाषा से निवृत्ति देती है। शिक्षा केन्द्र का विवेचन करते हुए वह स्थान प्राकृतिक सौन्दर्य से, शुद्ध पवन से युक्त हो, वहाँ का मौसम अतिवर्षा, अतिशीत, अतिगर्मी से रहित हो।

उत्तम शिक्षक के लक्षणों का कथन करते हुए, जो शिष्ट है, कर्त्तव्य परायण है, क्षमाशील है, गमकी है, अध्यात्मज्ञान से सम्पृक्त है, पवित्र आचरण से पुनीत है तथा शुभ कर्मों में निरन्तर युक्त है। आदर्श शिष्य का लक्षण कथन करते हुए, वह सात्विक भोजन करने वाला हो, निद्रा विजयी हो, जागरूक हो, अध्ययन-अध्यापन में एकाग्र मन वाला हो, वैर आदि विकारों से रहित हो।

गुरु शिष्य के मध्य नित्य निस्वार्थ भाव हो, स्वपर के हितकारी व्यवहार हो, पिता-पुत्रवत् सम्बन्ध हो, शिष्य के लिए गुरु प्रभु से श्रेष्ठ हो, शिक्षक का विवेकपूर्ण आचरण हो, कुलधर्म का परिचय हो, संस्कृति एवं सभ्यता का संरक्षक हो, विविध विषयों में तथा कलाओं में पारंगत हो, उत्तमधर्म का परिपालक हो, इस प्रकार 126 प्राकृत गाथाओं के मध्य सम्यक् शिक्षा का कथन उक्त ग्रन्थ में सृजित है।

लालित्यपूर्ण पदों से मण्डित, शिक्षाप्रद प्राकृत सूक्तियों से अभिमण्डित, निजानुभव से अनुभूत, दीर्घकालीन पवित्र चर्या से गवेषित, पूज्य गुरुवर के निर्मल ज्ञान के पुनीत

वर्णवर्तिका ने ग्रन्थ सृजन करके आत्मगौरव को बढ़ाया है। साहित्यिक सुषमा से अलंकृत काव्य प्रयोजन निश्चय से सफल रहा है। श्रृंगार, वीर, अद्‌भुत, करूण आदि रसों का प्रयोग यथाप्रसंग वर्णन हुआ है। प्राकृतकाव्य रचना में शब्दालंकार, अर्थालंकार, श्लेषालंकार एवं अनुप्रासालंकार आदि अलंकारों के प्रचुर प्रयोग हुए हैं। इस काव्य में तत्त्वदर्शन, चमत्कार जन्य पदप्रयोग, व्यंग्यार्थ की सुन्दर कल्पना आदि से उत्तमकाव्य की रचना हुई है।

इस ग्रन्थ के सम्पादन में आर्यिका श्री वर्धस्वनंदिनी माताजी का योगदान प्रशंसनीय है। वे पूज्य आचार्यश्री के व्युत्पन्नमती, बहुविध आयामों की धनी, अपूर्व प्रतिभा से आलोकित, आप अनन्य शिष्योत्तमा हैं। आपका अथकश्रम, अपूर्वसंयम, अगाधसाधना के आयाम मेरे लिए वन्दनीय हैं। निर्दोष प्रकाशन में निर्ग्रन्थ ग्रन्थमाला का कार्य प्रशंसनीय है।

उपसंहार

भग्नपृष्ठ कटिग्रीवा बद्धदृष्टिरधोमुखम्।
कष्टेन लिखितं शास्त्रं यत्नेन परिपालयेत्॥

भारतीय शिक्षा पद्धतियों के विकास में जैन शिक्षा पद्धति का योगदान महत्वपूर्ण है। जैन-वाङ्‌मय में शिक्षा तत्त्वों की जो सामग्री उपलब्ध है, उसके उपयोग किए बिना भारतीय शिक्षा का इतिहास पूर्ण नहीं होता है। वह विद्या कामधेनु है, चिन्तामणि है, धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष फल की सम्पदाओं को उत्पन्न कराती है। मनुष्य का बन्धु है, मित्र

है, कल्याण करने वाली है, साथ ले जाने वाला धन है और सब प्रयोजनों को सिद्ध करने वाली है।

जैन-वाङ्मय में अध्यापन के अतिरिक्त स्वाध्याय पर बहुत बल दिया गया है। प्रारम्भिक काल में जैन शिक्षा-मौखिक दी जाती थी। अतः शास्त्र को कण्ठस्थ करना परमावश्यक था। इसका एकमात्र कारण उन दिनों ग्रन्थ लेखन प्रकाशन पद्धति का विकास नहीं हुआ था।

तीर्थंकरों को समवसरण सभा में उपदेश देने के लिए किसी जीव, जाति, वर्ण, आश्रम, लिंग और वय आदि में भेद नहीं था।

प्रबोधक शिक्षा पद्धति (Monitorial System of Education) जैनियों की देन है। अध्यापक शिष्यों की योग्यता परखते हुए इस पद्धति द्वारा अध्यापन कराते थे। इस पद्धति का प्रयोग युरोपीय देशों में सफल प्रमाणित हुआ है।

तैलाद्रक्षेत् जलाद्रक्षेत् रक्षेत् शिथिलबंधनात्।
मूर्खहस्ते न दातव्यं एवं वदति पुस्तकम्।।

श्री गुरुदेव के चरणों में सादर त्रिवार वन्दन।।

आदर्श शिक्षा-विधि

पाइयकव्वस्स णमो, पाइयकव्वं च णिम्मियं जेण।
ताहं चिय पणमामो, पढिऊण य जे वि जाणंति।।

प्राकृत काव्यको नमस्कार तथा जिनके द्वारा प्राकृतकाव्य रचा गया है उनको नमस्कार तथा जो प्राकृतको पढ़ना जानते हैं (उन्हें भी नमस्कार हो)।

वर्तमान में प्राकृतके सम्वर्धन, संरक्षण में संलग्न प्राकृत-वाणीके प्रस्तोता आचार्य वसुनन्दी जी महामुनिराजको सादर नमन करता हूँ।

भगवान महावीरकी वाणीको समृद्धशाली बनानेमें श्रमणोंका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। गणधर और आचार्य परम्परामें दिगम्बराचार्यों द्वारा शौरसेनी प्राकृतमें स्वतन्त्र ग्रन्थोंकी रचना ईसा पूर्व प्रथम शताब्दीसे की जा रही है। प्रसन्नता है कि आज 21वीं सदी में प्राकृतभाषाके अध्येताओंमें वृद्धि हो रही है। प्राकृत भाषाको समुन्नत और समृद्ध बनाने में मनीषियोंसे अधिक श्रमणोंका महत्त्वपूर्ण योगदान प्राप्त हो रहा है। वर्तमानमें प्राकृतके सम्वर्धनमें संलग्न श्रेष्ठ आचार्यों में प्रमुख आचार्य श्री वसुनन्दी जी महाराजका महत्त्वपूर्ण योगदान प्राप्त हो रहा है।

भारतवर्षकी प्राचीन जनभाषाओंमें शौरसैनी प्राकृत भाषाका अनन्यतम स्थान है, जो सिद्धान्त और आचार ग्रन्थोंके साथ काव्योंकी भाषा रही है। प्राचीन शिलालेखों एवं पुराकालीन नाटकोंमें इसका पर्याप्त प्रयोग हुआ है। शौरसैनी भाषाका महावीर स्वामीकी परम्पराके श्रेष्ठतम आचार्योंने सर्वाधिक प्रयोग किया है और महावीरके समय से लेकर अब तक हो रहा है। इस भाषाके कतिपय ग्रन्थ षट्खण्डागम, समयसार, मूलाचार, कार्तिकेयानुप्रेक्षा, द्रव्यसंग्रह, वसुनन्दी श्रावकाचार आदि हैं।

प्राकृत भाषाके सम्वर्धक, सहस्रों काव्योंके रचयिता आचार्य वसुनन्दीजी द्वारा रचित आयंस-सिक्खाविही में शिक्षाका लक्षण कहा है–

कारणं सिट्ठदाए, संतिकारगा पसत्था लोयम्मि।
हिदकारगा अहिद-हारगा मुत्तिदायगा सिक्खा॥4॥

जो लोकमें शिष्टताका कारण है, प्रशस्त व शान्तिकारक है, हितकारक है, अहितहारक है एवं मुक्ति प्रदान करने वाली है, वही शिक्षा है।

सगवरहिदे समत्था, सव्वुण्णदिकारगा दुहणासगा।
भवसिवसुह-कारगा य, सम्म-सिक्खा संविदिदव्वा॥5॥

जो स्वपर हित में समर्थ है, सभीके लिए उन्नतिकारक है, दु:खकी नाशक है, संसार व मोक्षसुखकी कारक है, वह सम्यक्शिक्षा जाननी चाहिए।

सगकुलकित्तिवड्ढगा, आयंस-णीदि-रीदि-संवड्ढगा।
देसुण्णदि-सुत्थ-संति-सुहाणं कारगा सुसिक्खा॥6॥

जो अपने कुलकी कीर्तिको बढ़ानेवाली है, आदर्शनीति व रीतिकी सम्वर्द्धक है, देशकी उन्नति, स्वास्थ्य, शान्ति व सुखकी कारक है, वह सुशिक्षा है।

अप्पसत्तीण गुणाण, विआसगा बहिकज्ज-सामच्छस्स।
ववहार-णेउण्णस्स, सुसक्कारवड्ढगा सिक्खा॥7॥

जो आत्मशक्ति, आत्मगुण व बाह्य कार्योंके सामर्थ्यकी विकासक, व्यवहारकी निपुणता व सुसंस्कारोंकी सम्वर्द्धक होती है, वही शिक्षा है।

आयंस-सिक्खाविहीमें संस्कारयुक्त शिक्षाका महत्त्व बतातेहुए ग्रन्थकार कहते हैं–

णिरंकुस-गयोव्व जिण्णतडसंजुद-मंदाकिणी व णेया।
विणासगा सगवराण, सुसक्कारविहीणा सिक्खा॥112॥

सुसंस्कारसे रहित शिक्षा निरंकुश हाथी एवं जीर्ण तटसे संयुक्त नदीके समान स्वपरकी विनाशिका जाननी चाहिए।

शिक्षाके समयकी महत्ताको प्रकट करते हुए बहुत ही महत्त्वपूर्ण गाथा कही है–

गहिय सेसवे सम्मं, सिक्खं जोव्वणे कामं सेवेज्ज।
सुहं कुणंतो बुड्ढावत्थाइ साहदु परमट्ठं॥113॥

बाल्यावस्था में सम्यक्शिक्षाको ग्रहण करके यौवनावस्था में कामका सेवन करना चाहिए। पुनः शुभ अर्थात् पुण्य करते हुए वृद्धावस्थामें परमार्थको साधना चाहिए।

ण कंखदि अत्थ-कामं, जदि णेव चित्ते धणविसय-लोहो।
तो सण्णाणं लहिय, गहेज्जा संजमं हिदत्थं॥114॥

यदि कोई युवा अर्थ व कामकी आकाङ्क्षा नहीं करता, उसके चित्त में धन व विषयोंका लोभ नहीं है तो सम्यग्ज्ञानको प्राप्तकर हितके लिए संयम ग्रहण करना चाहिए।

आदर्श शिक्षाके प्रमुख उद्देश्य–

1. आत्म-ज्ञानकी प्राप्तिः आदर्श शिक्षासे व्यक्ति अपने बारेमें अधिक जान सकता है और अपने विचारों और भावनाओंको समझ सकता है।

2. साध्यकी प्राप्तिः आदर्शशिक्षा मोक्षकी प्राप्तिके लिए एक महत्त्वपूर्ण साधन है।

3. आध्यात्मिक विकासः आदर्श शिक्षा आध्यात्मिक विकासके लिए एक महत्त्वपूर्ण साधन है।

4. 'जीवन सुधार': आदर्श दर्पणको कहते हैं। जिस प्रकार दर्पणमें चेहरा देखकर स्वच्छ किया जा सकता है उसी प्रकार आदर्शशिक्षा हमारे जीवनको सुन्दर बनाती है। आदर्श शिक्षाके माध्यमसे व्यक्ति अपने जीवनको सुधार सकता है और अपने लक्ष्योंको प्राप्त कर सकता है।

आदर्श शिक्षाकी विधिको दर्शाने वाली यह जनोपयोगी कृति आयंस-सिक्खाविही है। आचार्यश्री ने इस ग्रन्थका लेखनकर अध्ययन करनेवाले सभी विद्यार्थियों, शोधार्थियों, विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालयके पाठ्यक्रमोंके लिए महत्त्वपूर्ण कृति प्रदानकी है।

आयंस-सिक्खाविही शौरसैनी प्राकृत गाथाके 126 छन्दों में रचित है। इस ग्रन्थ में शिक्षा, शिक्षाकी आवश्यकता, शिक्षाके प्रकार, शारीरिकशिक्षा, व्यवहारिकशिक्षा, मानसिकशिक्षा, आध्यात्मिकशिक्षाके साथ शिक्षणविधि, शिक्षाके केन्द्रबिन्दु, आदर्शशिष्य-गुरु सम्बन्धके विषय में सुन्दर प्रस्तुतिकरण किया गया है।

जहाँ आज पाश्चात्य संस्कृति और अंग्रेजी भाषाके प्रभाव से लोग अपनी मातृभाषा, जनभाषा प्राकृतको भूल रहे हैं, ऐसे समयमें पूज्यश्रीके द्वारा प्राकृतभाषामें रचित जनोपयोगी कृतियोंका प्रणयन निश्चित ही हमारी भाषाको जयवन्त रखने में महत्त्वपूर्ण अवदान है।

आचार्यश्रीकी साहित्यसाधना जैनसंस्कृतिके संरक्षण और संस्कारोंके सम्वर्धनमें निश्चित ही महत्त्वपूर्ण भूमिका है। पूज्यश्रीकी लेखनी इसी प्रकार अनवरत चलती रहे, इन कृतियोंसे मानव मात्रका कल्याण हो और आपकी आशीष-अनुकम्पा प्राप्त होती रहे, इसी मङ्गल भावनाके साथ पूज्यश्रीने मुझे जो आशीष प्रदान किया है उसके लिए मैं आपके चरणोंमें नतमस्तक हूँ।

-डॉ. ज्योति बाबू जैन,
सहायक आचार्य
जैनविद्या एवं प्राकृत विभाग
मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय
उदयपुर, राजस्थान

आचार्य श्री वसुनन्दीजी महाराज द्वारा विरचित आदर्श शिक्षाविधि

–डॉ. आशीष जैन आचार्य शाहगढ़ सागर

(राष्ट्रपति सम्मानित)

शिक्षा व्यक्तिके सर्वांगीण विकासके साथ-साथ जीवनोत्थान और आत्मकल्याणका मार्ग प्रशस्त करती है। शिक्षा वही है जो कल्याणका मार्ग बनाए। आचार्य श्री वसुनन्दीजी महाराजने आयंस सिक्खाविही (आदर्श शिक्षाविधि) ग्रन्थका प्रणयन किया। यह ग्रन्थ शिक्षाके आयामोंको समझनेका महत्त्वपूर्ण पायदान है।

शिक्षाका लक्षण–आचार्यश्रीने प्रथम तीन गाथाओं में मङ्गलाचरण किया है। तत्पश्चात् गाथा क्रमांक 4 से 12 तकमें शिक्षाके लक्षणको कहा है।

कारणं सिट्ठदाए, संतिकारगा पसत्था लोयम्मि।
हिदकारगा अहिद-हारगा मुत्तिदायगा सिक्खा॥4॥

जो लोकमें शिष्टताका कारण है, प्रशस्त व शान्तिदायक है, हितकारक है, अहितहारक है और मुक्तिप्रदान करने वाली है वही शिक्षा है। यहाँ पर आचार्यश्रीने शिक्षाके पाँच लक्षण कहे हैं। ये पाँच लक्षण सम्पूर्ण शिक्षाके महत्त्वपूर्ण आयाम हैं।

प्रचलित शिक्षाके अर्थ और लक्षणोंको देखते हैं तो पाते हैं कि शिक्षा एक व्यापक और बहुआयामी अवधारणा है, जिसे सीखने और सिखानेकी प्रक्रियाके रूपमें परिभाषित किया जा सकता है। इसका उद्देश्य व्यक्तिके ज्ञान, कौशल, दृष्टिकोण और मूल्योंमें वृद्धि करना है, ताकि वह अपने जीवन और समाजमें

बेहतर ढंगसे योगदान कर सके। शिक्षा औपचारिक, अनौपचारिक और गैर-औपचारिक रूप से प्राप्तकी जा सकती है।

उपरोक्त यह लक्षण, है तो अच्छा। लेकिन आचार्यश्री वसुनन्दी जी महाराजने शिक्षाके सार्वभौमिक लक्षणको लिखा है, जो व्यक्तिके मानसिक-शारीरिक-वाचनिक- आध्यात्मिक उन्नतिको कराने वाला है।

नौ गाथाओंमें आचार्यश्रीने शिक्षाके लक्षणको प्रतिभाषित किया है। निश्चित ही शिक्षाको सार्वभौमिक स्वरूप देनेके लिए उनकी परिभाषाएँ अत्यन्त सार्थक हैं।

शिक्षाकी आवश्यकता-आचार्यश्री ने गाथा क्रमाङ्क 13-22 में शिक्षाकी आवश्यकता पर चर्चाकी है। उन्होंने कहा है-शिक्षा संस्कार सहित होना चाहिए। अच्छी शिक्षा से दुर्विचार, दुष्चिन्तन, दुर्भाव आदि दूर होते हैं, सम्यक् भावोंका प्रणयन होता है। वे कहते हैं-

तरु-संवड्ढण-हेदू, सलिल-उव्वरग-अक्कपयासादी।
सुसिक्खा एगमेत्तं, उवायो जीवण-वड्ढणस्स॥21॥

जिस प्रकार जल, खाद, सूर्य प्रकाशादि वृक्ष सम्वर्धनका हेतु है उसी प्रकार से एकमात्र सम्यक्शिक्षा ही जीवनके सम्वर्धनका उपाय है। शिक्षाके बिना विनय, कर्तव्यपालन, सदाचार, तप और संयम जैसे उपक्रम अत्यन्त कठिन हैं।

स्त्रीशिक्षा-आचार्यश्री ने गाथा क्रमाङ्क 23-२८ तक स्त्रीशिक्षा पर जोर दिया है। वे कहते हैं-

जस्सिं कुले सिक्खिदा, णारी सक्कार-जुदा तो णिच्चं।
कुलो णंददि सग्गोव्व, सुह-संती पडिक्खणे तत्थ॥24॥

जिस कुलमें नारी सुशिक्षित व संस्कारयुक्त होती है तो वह कुल आनन्दित होता है, वहाँ प्रतिक्षण स्वर्गके समान सुख-शान्ति होती है।

जैसे लोकमें तेल व बातीके बिना दीप प्रज्ज्वलन असम्भव है उसी प्रकारसे स्त्रीशिक्षाके बिना संस्कार, शान्ति और मर्यादा सम्भव नहीं है।

शिक्षाके भेद–आचार्यश्री ने शिक्षाके भेदोंका वर्णन गाथा क्रमाङ्क 29 में किया है–

चदुहा सिक्खा देहिग-ववहार-माणसज्झप्प-भेयादु।
ताहि विणा णो सफलीभूदा मासविहीणतुसोव्व॥29॥

अर्थात् दैहिक, व्यवहार, मानसिक और अध्यात्म शिक्षाके भेदसे शिक्षाके चार प्रकार कहे गए हैं। उनके बिना शिक्षा वैसे ही सफलीभूत नहीं होती जैसे दालसे विहीन छिलका।

शारीरिकशिक्षा–इसमें गाथा क्रमाङ्क 30-34 तक शारीरिकशिक्षाका वर्णन किया है। आचार्यश्री लिखते हैं देहको सुदृढ बनाए रखनेके लिए योग, व्यायाम और संयमित जीवन होना आवश्यक है। देशकी रक्षार्थ अस्त्र-शस्त्र सञ्चालनका प्रशिक्षण, कृषि, श्रम, पशुपालन आदि कार्योंमें भी प्रवृत्ति करना चाहिए।

व्यवहारिक शिक्षा–इसमें गाथा क्रमाङ्क 35-41 तक व्यवहारिक शिक्षाका वर्णन है। यह शिक्षा मानव जीवनके चरित्रको उज्ज्वल बनानेके लिए परम आवश्यक है। सत्सङ्गति, पठन-पाठन, प्रेम, वात्सल्य, मैत्री आदि गुणोंका समावेश होना ही व्यवहारिक शिक्षा है।

मानसिक शिक्षा–इसमें गाथा क्रमाङ्क 42-68 तक मानसिक शिक्षाका वर्णन किया गया है। यह अत्यन्त आवश्यक शिक्षा है क्योंकि इसी शिक्षाके बलपर व्यक्ति अपने जीवनको श्रेष्ठ दिशा दे सकता है। जिसमें ईर्ष्या, द्वेष आदिकी दुर्भावनाको

हटाकर शिक्षा प्राप्त करने पर जोर दिया है। आचार्य श्री लिखते हैं–''जैसे पुष्पोंकी सुगन्धि से उनके निकट भौंरे आते हैं उसी प्रकारसे आचरण, संयम और तपके बलसे मनुष्योंमें ज्ञान उत्पन्न होता है।'' आगे कहते हैं– संघर्षके समय धैर्य नहीं छोड़ना चाहिए। अपनी शक्ति कभी नहीं छिपानी चाहिए। मानसिक शक्तिकी वृद्धिके लिए सम्यक् श्रम करना चाहिए।

आध्यात्मिक शिक्षा–इसमें गाथा क्रमाङ्क 69-77 तक आध्यात्मिक शिक्षा पर जोर दिया गया है। भारत देशके माननीय प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्रमोदीजी भी आध्यात्मिक शिक्षा पर बहुत जोर दे रहे हैं और वे अपनी सफलता और स्वास्थ्यका राज आध्यात्मिक शिक्षाको ही मानते हैं। आचार्यश्री कहते हैं–अध्यात्मज्ञानसे प्राप्त परमशक्तिसे जीवनमें आने वाली प्रतिकूलताओं व विषम-परिस्थितियोंमें भी विजय प्राप्त करता है।

शिक्षा कैसी हो–इसमें गाथा क्रमाङ्क 78-79 में शिक्षाके स्वरूपकी चर्चाकी। शिक्षा कैसी हो? इसके सम्बन्धमें आचार्यश्री कहते हैं–सुशिक्षा कदापि सङ्क्लेशकारक व भारभूत नहीं होना चाहिए। वह जीवनके लिए आधारभूत, सारभूत एवं सबसे अधिक प्रिय होना चाहिए।

शिक्षा विधि–इसमें गाथा क्रमाङ्क 80-81 में शिक्षा विधिकी चर्चाकी गई है। आचार्यश्री शिक्षाविधिके सम्बन्धमें कहते हैं-जिस विधिसे चिन्ता, विषाद, कषायोंका उद्वेग, भोगोंकी अभिलाषा व चित्तमें क्षोभ न हो, ऐसी उत्कृष्ट शिक्षाविधि होना चाहिए।

शिक्षाकेन्द्र–इसमें गाथा क्रमाङ्क 82-84 में शिक्षाकेन्द्रकी चर्चाकी गई है। शिक्षाका केन्द्र शुद्ध पवन से युक्त हो, अति गर्मी, अति शीत और अति वर्षा वाला न हो, वास्तविकता में आज विद्यालयोंको आवश्यकता है ऐसे ही शिक्षा केन्द्रोंकी। आचार्यश्रीके ये उत्कृष्ट विचार शिक्षाकेन्द्रोंको श्रेष्ठ बनानेके लिए अत्यन्त उपादेय हैं।

शिक्षक–इसमें गाथा क्रमाङ्क 85-89 में शिक्षककी चर्चाकी गई है। शिक्षककी भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती है। शिक्षकबिना विद्यालयकी परिकल्पना शून्य है। आचार्य श्री कहते हैं–शिक्षक शिष्योंके पिताके समान होता है, वह सहनशील, धीर, वीर, गम्भीर, सरल, सहज, स्नेही और संस्कृति व सभ्यताका संरक्षक होता है। शिक्षक आत्मानुशासक, सदाचारी, त्रियोग-संयमी, दयालु, बहुत प्रतिभा युक्त, विज्ञानी और व्यवहारकुशल होता है।

आदर्श शिष्य–इसमें गाथा क्रमाङ्क 90-92 में आदर्श शिष्यकी चर्चाकी गई है। शिष्यके सम्बन्धमें आचार्यश्री कहते हैं-जो शिष्ट, इन्द्रियोंका दमन करनेवाला, शान्त, मन्दकषायी, सेवाभावी, उद्यमी, विनयशील, सदाचारी, गुरु सेवक, ज्ञानपिपासु, एकाग्र मनवाला और व्यवहारनिपुण होता है वह आदर्श शिष्य है।

शिष्य-गुरु सम्बन्ध-इसमें गाथा क्रमाङ्क 93-97 में शिष्य गुरु सम्बन्धकी चर्चाकी गई है। वर्तमानके परिदृश्य में गुरु-शिष्य सम्बन्धोंमें अनेक विसङ्गतियाँ आ गई हैं। ऐसे में आचार्यश्री लिखते हैं-गुरु-शिष्यका सम्बन्ध नित्य निःस्वार्थ, स्वपरहितकारी एवं पिता-पुत्रके सम्बन्धके समान होना चाहिए।

शिक्षा कैसे दें?–इसमें गाथा क्रमाङ्क 98-112 में शिक्षा कैसे दें इस सम्बन्ध में चर्चाकी गई है। आचार्यश्री लिखते हैं कि आजकी पीढ़ी पुस्तकीज्ञान में ही न सिमटें। उन्हें व्यवहारिक और प्रायोगिक शिक्षा भी बराबरी से मिलती रहे, जिससे उनका जीवन श्रेष्ठ बने। विवेकपूर्ण ढंग से एवं योग्यतानुसार नारियोंको 64 एवं पुरुषोंको 72 कलाएँ सिखाना चाहिए।

योग्यजनोंकी ही पदनियुक्ति–इसमें गाथा क्रमाङ्क 119-123 में योग्यजनोंकी ही पदनियुक्तिकी चर्चाकी गई है। यह एक महत्त्वपूर्ण प्रसङ्ग है। इस सम्बन्धमें प्रायःकर कोई बोलनेको तैयार नहीं है। आचार्यश्रीका यह मार्गदर्शन अत्यन्त उपादेय है। वे लिखते हैं-शासनको चाहिए कि वें योग्यतानुसार ही पदों पर नियुक्तियाँ करें, क्योंकि अयोग्य व्यक्तिके आनेसे सम्पूर्ण व्यवस्था नष्ट हो जाती है।

अन्तिम मङ्गलाचरण एवं प्रशस्ति–इसमें गाथा क्रमाङ्क 124-126 तकमें अन्तिम मङ्गलाचरण और प्रशस्तिका लेखन है।

निश्चित ही आचार्यश्री द्वारा विरचित आदर्श शिक्षाविधि आजकी पीढ़ी और शिक्षाविदोंके लिए मीलका पत्थर साबित होगी। यह एक ऐसी कृति है, जिससे शिक्षाके क्षेत्रमें नवीनता आएगी और छात्र राष्ट्रनिर्माणमें अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ निभायेंगे। ऐसी महान् कृतिका महत्त्वपूर्ण उपहार देने वाले परम पूज्य प्राकृतभाषा चक्रवर्ती, अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्य श्री वसुनन्दी जी मुनिराज के चरणोंमें सादर प्रणति निवेदित करता हूँ।

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	पृ.सं.
1.	मङ्गलाचरण	1
2.	शिक्षाका लक्षण	10
3.	शिक्षा की आवश्यकता	33
4.	स्त्री शिक्षा	60
5.	शिक्षा के भेद	78
6.	शारीरिक शिक्षा	82
7.	व्यवहारिक शिक्षा	98
8.	मानसिक शिक्षा	119
9.	आध्यात्मिक शिक्षा	194
10.	शिक्षा कैसी हो	219
11.	शिक्षाविधि	225
12.	शिक्षा केन्द्र	232
13.	शिक्षक	242
14.	आदर्श शिष्य	255
15.	शिष्य-गुरु सम्बन्ध	261
16.	शिक्षा कैसे दें	274
17.	शिक्षा का समय	309
18.	सदुपयोग	328
19.	योग्यजनों की ही पद नियुक्ति	331
20.	अन्तिम मङ्गलाचरण व प्रशस्ति	342

आयंस-सिक्खाविही

Āyaṁsa Sikkhā Vihī

(आदर्श शिक्षाविधि)

आयंस-सिक्खाविही

(आदर्श शिक्षा विधि)

1

मङ्गलाचरण

सम्म-संपुण्ण-सिक्खा-सहिदा सिद्धा सुद्धसहावेणं।
सगसासयसंपत्तिं, लहिदुं णमामि विसुद्धीए॥1॥

सम्यक् सम्पूर्ण-शिक्षा व शुद्ध-स्वभाव से सहित सभी सिद्धों को निज शाश्वत सम्पत्ति को प्राप्त करने के लिए विशुद्धिपूर्वक सदैव नमस्कार करता हूँ।

With pure devotion, I eternally bow to all the Siddhas, who adorned with perfect education and pure nature, so that I may attain my eternal wealth.

व्याख्या–सम्यक् और पूर्ण शिक्षा से सुसज्जित अर्थात् केवलज्ञान से युक्त और अपने भीतर की निर्मलता में स्थित सिद्धों के चरणों में श्रद्धा अर्पित करते हुए साधक अपनी आत्मा की शाश्वत निधि को प्राप्त करते हैं। यह यात्रा नदी के उस निस्सीम प्रवाह के समान है, जो सागर से मिलने तक अपना मार्ग नहीं रोकती। यहाँ शिक्षा का अर्थ केवल ग्रन्थज्ञान नहीं, बल्कि जीवन के प्रत्येक क्षण में संयम, आत्मनियन्त्रण और सत्कर्म का समावेश है। शुद्ध स्वभाव

का आशय है–वह अंतःकरण जो राग-द्वेष के मलिन रङ्ग से रहित हो। ऐसे साधक के लिए मोक्षमार्ग कोई दूर का स्वप्न नहीं, बल्कि प्रतिदिन का सच है, जो उसे धीरे-धीरे परमतट तक पहुँचा देता है।

अतः ग्रन्थकार ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही सिद्धों को अत्यन्त विशुद्ध भावों से नमस्कार करते हैं। वे सिद्ध सम्पूर्ण शिक्षा अर्थात् केवलज्ञान और सर्व कर्मों का अभाव हो जाने से शुद्ध स्वभाव से युक्त हैं। उनके समान ही आत्मा के शाश्वत वैभव को प्राप्त करने की भावना से उनके चरणों में नमन ग्रन्थकार के आध्यात्मिक गाम्भीर्य को दर्शाता है।

एक मुनि प्रतिदिन नदी के किनारे प्रवचन देते थे। एक दिन शिष्य ने पूछा, "गुरुदेव, मोक्ष की यात्रा कठिन है क्या?" मुनि ने मुस्कुराकर कहा, "यदि तुम इस नदी के प्रवाह को रोक सको, तभी उस साधक की यात्रा रोक सकोगे जो पूर्ण शिक्षा और शुद्ध स्वभाव से युक्त सिद्धों की भक्ति करता है।" अर्थात् सिद्धों की भक्ति, वन्दना, अर्चना इत्यादि सर्व कार्यों को सिद्ध करने वाली होती है, साधक को स्वयं सिद्ध दशा प्राप्त कराने वाली होती है।

Explanation–Bowing to the Siddhas who are endowed with complete and rightful knowledge, means omniscient and dwelling in the still waters of inner purity, seeker discovers the eternal treasure of the self. His journey is like a river's ceaseless embrace with the ocean- unstoppable, certain. Here, "learning"

is not mere scholarship but a life woven with restraint, self-mastery, and noble deeds. "Pure nature" is the heart cleansed of attachment and aversion. For such a seeker, liberation is not a distant hope but a living truth, drawing him daily to the supreme shore.

Hence, at the outset of the scripture, the author bows with profound and pure devotion to the enlightened beings. The Siddhas are the embodiment of complete education. For they are endowed with absolute knowledge and, having shed all Karmic bonds, they dwell eternally in the purity of their true nature. With a heartfelt yearning to realize the eternal splendour of the soul, just as the Siddhas have attained, the author's salutation at their feet signifies his deep spiritual insight and reverence.

A monk preached daily beside the river. One day a disciple asked, "Master, is the path to liberation difficult?" The monk smiled: "If you can halt the river's flow, only then can you halt the journey of a seeker adores Siddhas who are endowed with perfect knowledge and pure nature."

In essence, very act of devotion,veneration, and worship of the Siddhas serves to bring about their true purpose–guiding the aspirant to attain the supreme and liberated state of the Siddhas themselves.

❀❀❀

2

सव्वलहुमहाभासाजुद-सरस्सदिं णाणमुत्तिरूवं।
अण्णाणतमणासगं, सण्णाणपयासगं वंदे।।2।।

ज्ञान की मूर्ति स्वरूप, अज्ञान रूपी अन्धकार को नाश करने वाली, सम्यग्ज्ञान का प्रकाश करने वाली, सभी लघुभाषा व महाभाषाओं से युक्त सरस्वती की मैं वन्दना करता हूँ।

I offer my reverent salutations to Goddess Saraswati, the very embodiment of knowledge, who dispels the darkness of ignorance, who illumines the light of right knowledge, and who is adorned with mastery over both the minor dialects and the great languages.

व्याख्या–मैं उस सरस्वती को वन्दन करता हूँ, जो ज्ञानमूर्ति स्वरूप है, अज्ञानरूपी अन्धकार का नाश करती है, सम्यक् ज्ञान का प्रकाश फैलाती है और सात सौ लघुभाषा से लेकर अट्ठारह महाभाषा तक सभी में पारङ्गत है। यह सरस्वती केवल शब्दों की देवी नहीं, बल्कि आत्मा के भीतर छिपे हुए सत्य को प्रकट करने वाली दिव्य शक्ति है। अज्ञान का अन्धकार चाहे कितना भी गहरा क्यों न हो, सत्यज्ञान की यह ज्योति उसे सहज ही छिन्न-भिन्न कर देती है। जो साधक इस ज्योति को अपने भीतर प्रज्वलित

करता है, उसके लिए सभी भाषाएँ, सभी ज्ञानमार्ग, सत्य तक पहुँचने के साधन बन जाते हैं।

एक बार अन्धेरी गुफा में बैठे शिष्य ने अपने गुरु से कहा–"गुरुदेव, यह अन्धकार बहुत घना है, कुछ दिख नहीं रहा।" गुरु ने एक दीपक जलाकर कहा–जैसे यह दीप अन्धकार को दूर कर देता है, वैसे ही सरस्वती का प्रकाश अज्ञान को समाप्त कर देता है।"

सत्यज्ञान का प्रकाश ही वह दीप है, जो अज्ञान के अंध कार को मिटाकर जीवन को पूर्णता की ओर ले जाता है।

यहाँ ग्रन्थकार सर्वज्ञ जिनेन्द्र की वाणी स्वरूपा सरस्वती देवी को नमस्कार करते हैं। यूँ तो देव-शास्त्र-गुरु तीनों सदैव ही वन्दनीय हैं किन्तु संभवतः शिक्षा का ग्रन्थ होने से ग्रन्थकार यहाँ विशेष रूप से सरस्वती को नमन करते हैं जिससे सभी जीव आत्महितकारक सम्यक् शिक्षा प्राप्त कर सकें।

Explanation–I bow to Saraswati, the embodiment of wisdom, the one who dispels the darkness of ignorance, spreads the radiance of true knowledge, and masters all tongues from the simplest speech to the loftiest discourse.

This Saraswati is not merely the muse of words but the divine power that unveils the hidden truth within the soul. However deep the night of ignorance, the flame of right knowledge shatters it effortlessly. For the seeker who kindles this flame within, all languages and all paths of learning become means to reach the truth.

Once, in a dark cave, a disciple told his master, “Master, the darkness is so dense, I cannot see anything.” The master lit a lamp and said, "The light of knowledge is just like this. As this lamp dispels the dark, so does the radiance of Saraswati end ignorance.” The light of true knowledge is the lamp that removes the darkness of ignorance and guides life toward its highest fulfillment.

Here, the author bows in reverence to Goddess Saraswati, the very embodiment of the omniscient wisdom of the Jinas. Truly, the God, the scriptures, and the Guru are always venerable but perhaps, as this scripture is concerned with education, the author here offers salutations to Goddess Saraswati, so that all living beings may be receptive to true education that awakens the soul and guides it toward its highest good.

❀❀❀

3

सिद्धादी णवदेवा, सगसव्वुक्किट्ठ-कज्जसिद्धीए।
सूरी संति-आइ-विज्जाणंदंतं परियंदामि॥3॥

सिद्ध आदि नवदेवताओं को एवं चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागर जी से आचार्य श्री विद्यानन्द जी मुनिराज तक सभी आचार्यों को अपने सर्वोत्कृष्ट कार्य की सिद्धि के लिए नमस्कार करता हूँ।

I bow to all Siddhas and other nine divine categories and to every great Acharya–from the emperor of Conduct, Acharya Shantisagar ji to Acharya Vidyanand Ji Muniraj for the fulfillment and perfection of my highest endeavors.

व्याख्या–मैं सिद्धों सहित सभी नवदेवताओं अरिहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, जिनधर्म, जिनागम, जिनचैत्य व जिनचैत्यालयों को और चरित्र-चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागर जी से लेकर आचार्य श्री विद्यानन्द जी मुनिराज तक के सभी आचार्यों को, अर्थात् चरित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागर जी मुनिराज, महातपस्वी आचार्य श्री पायसागर जी मुनिराज, अध्यात्मयोगी आचार्य श्री जयकीर्ति जी मुनिराज, भारतगौरव आचार्य श्री देशभूषण जी मुनिराज एवं राष्ट्रसन्त क्षपकराज शिरोमणि आचार्य श्री विद्यानंद मुनिराज को अपने सर्वोत्कृष्ट कार्य की सिद्धि के लिए नमस्कार करता हूँ।

यह नमस्कार केवल औपचारिक प्रणाम नहीं है–यह आचार्यों के द्वारा जिए गए आदर्श जीवन, अडिग संयम, और अनगिनत साधकों को दी गई–प्रेरणा के प्रति कृतज्ञता का भाव है। आचार्यों की यह परम्परा मोक्षमार्ग की दिशा सूचक है, जो साधक को उसके लक्ष्य तक पहुँचने का मार्गदर्शन देती है।

एक बार एक ब्रह्मचारी जी ने अपने गुरु से कहा– "गुरुदेव, मुझे आगे का मार्ग कठिन लगता है।" गुरु ने शान्त स्वर में उत्तर दिया–"जब तुम्हें संदेह हो, तब भगवान का और हमारे पूर्वाचार्यों का स्मरण करना। उनकी साधना, उनके आदर्श, तुम्हारे पथ में दीपस्तम्भ बन जाएँगे।" नवदेवता और आचार्य परम्परा का स्मरण, साधक के लिए वह प्रेरणास्रोत है जो उसकी साधना को लक्ष्य तक पहुँचा देता है।

Explanation–I bow with reverence to the Arihantas, the Siddhas, the Acharyas, the Upadhyayas and the Sadhus; I pay homage to the eternal Jina Dharma, to the sacred scriptures of the Jinas (Jināgam), to the Jina shrines (Jin Chaityas) and to the holy abodes where these shrines reside (Jin-chaityalayas) and to every great Acharya–the emperor of conduct, Acharya Shantisagar ji, great ascetic Acharya Payasagar ji, the spiritural yogi Acharya Jaikirti ji, the glory of Bharat Acharya Deshbhushan ji and the national saint, the Crown jewel of austerities, Acharya Vidyanand ji Muniraj–praying for the perfection of my most noble endeavors.

This bow is not mere formality; it is gratitude for the lives they lived, for their unwavering restraint, and for the inspiration they poured into countless seekers. The tradition of Siddhas and Acharyas is the compass of liberation, guiding the soul unfailingly toward its highest goal.

Once, a new brahmachari said to his revered guru, "Guruwar, the path to liberation ahead seems difficult to me." The teacher replied gently, "When doubt arises, remember the God and our Acharyas. Their discipline and ideals will become beacons to light your path."

The remembrance of the Arihantas and other nine Devas and the lineage of Acharyas is the fountain of inspiration that carries the seeker to the very goal of liberation.

❀❀❀

4

शिक्षा का लक्षण

कारणं सिट्ठदाए, संतिकारगा पसत्था लोयम्मि।
हिदकारगा अहिद-हारगा मुत्तिदायगा सिक्खा।।4।।

जो लोक में शिष्टता का कारण है, प्रशस्त व शान्तिकारक है, हितकारक है, अहितहारक है एवं मुक्ति प्रदान करने वाली है, वही शिक्षा है।

True education is that which cultivates civility in society, spreads joy and peace, benefits others, removes harm, and ultimately grants liberation.

व्याख्या—यहाँ शिक्षा का अर्थ केवल अक्षरों का ज्ञान नहीं, बल्कि जीवन में वह विवेक और संस्कार है, जो आचरण को पवित्र बनाते हैं। ऐसी शिक्षा मनुष्य को केवल बुद्धिमान नहीं, बल्कि सद्गुणों का भण्डार बनाती है। सच्ची शिक्षा मनुष्य को मात्र विद्वान् ही नहीं बनाती अपितु उसे शिष्ट, विनम्र, संवेदनशील और समाज का दीपक बना देती है। सच्ची शिक्षा वही है जो मनुष्य के जीवन को ऊँचाइयों तक ले जाती है। यह न केवल ज्ञान का प्रसार करती है बल्कि मन और समाज में भी शान्ति स्थापित करती है। सच्ची शिक्षा वह है जो जीवन में गुणों का संवर्द्धन करे और दोषों को दूर करे, जो सही दिशा दिखाए और भटकाव से बचाए। शिक्षा का असली उद्देश्य केवल सफलता पाना

नहीं बल्कि ऐसा जीवन बनाना है जो स्वयं के साथ-साथ समाज के लिए भी हितकारी हो। शिक्षा मात्र बाहरी उन्नति नहीं देती बल्कि आत्मा को अज्ञान, भय और कर्म बन्धनों से मुक्त करके जीवन को परम शान्ति और स्वतन्त्रता का मार्ग दिखाती है। जब शिक्षा का परिणाम दूसरों के हित में, समाज की शान्ति में और आत्मा की मुक्ति में परिणत होता है, तभी वह अपने वास्तविक उद्देश्य को प्राप्त करती है।

एक राजा ने अपने पुत्र को सर्वोत्तम आचार्य के पास भेजा। वर्षों बाद लौटने पर, उसने देखा कि पुत्र में न केवल विद्या थी, बल्कि विनम्रता, करुणा और सेवा का भाव भी था। राजा ने मुस्कुराकर कहा, "अब मुझे विश्वास है कि तुम्हें शिक्षा मिली है, क्योंकि विद्या ने तुम्हें मनुष्य से महापुरुष बना दिया।''

सच्ची शिक्षा वह है, जो मनुष्य के भीतर शिष्टता, शांति, परहित और मुक्ति की प्यास उत्पन्न करे।

Explanation–Here, education is not merely the knowledge of letters, but the wisdom and values that sanctify conduct. Such education does not merely make a person intelligent–it makes them a reservoir of virtues. True education does not only make a person learned, it makes them cultured, humble, compassionate, and a guiding light for society. True education is that which elevates human life to greater heights. It not only spreads knowledge but also brings peace to the mind and society.

True education is that which nurtures virtues and removes elements of evil, which inspires you to move forward on the right path and protects you from distractions. The true purpose of education is not merely to achieve success, but to create a life that is beneficial both to yourself and to society. Education does not merely bring external progress, but frees the soul from ignorance, fear, and karmic bondage, guiding life toward the path of ultimate peace and freedom. Only when learning–it results in the welfare of others, the peace of society and the liberation of the soul does it fulfill its true purpose.

A king sent his son to the finest teacher. Years later, when the son returned, the king saw not only knowledge in him, but humility, compassion and a spirit of service. Smiling, the king said, “Now I am certain you have been educated, for learning has transformed you from a man into a great soul”.

True education awakens civility, peace, altruism, and the thirst for liberation within the human heart.

❀❀❀

5

सगवरहिदे समत्था, सव्वुण्णदिकारगा दुहणासगा।
भवसिवसुह-कारगा य, सम्म-सिक्खा संविदिदव्वा॥5॥

जो स्वपर हित में समर्थ है, सभी के लिए उन्नतिकारक है, दुःख की नाशक है, संसार व मोक्ष सुख की कारक है, वह सम्यक् शिक्षा जाननी चाहिए।

True education is that which serves both the self and others; that which uplifts all, removes suffering and becomes a cause not only of the comforts of worldly life but also of the bliss of liberation.

व्याख्या—जहाँ शिक्षा ऐसी हो कि वह स्व-कल्याण में भी समर्थ हो और परहित में भी उपयोगी हो; जो सभी के लिए उन्नति का साधन बने; जो दुखों का नाश करे और जो एक ओर संसार के सुखों को संयमित रूप से उपलब्ध कराए, दूसरी ओर मोक्ष का द्वार खोले—वही शिक्षा वास्तव में सम्यक् शिक्षा कहलाती है।

यहाँ शिक्षा का मापदण्ड केवल बुद्धि-विकास या विषय-ज्ञान नहीं है। शिक्षा का अर्थ है—वह जीवनशक्ति जो आत्मा को भीतर से जाग्रत करे और समाज को बाहर से प्रकाशित करे। यदि शिक्षा केवल सांसारिक सुविधा तक सीमित है, तो वह अधूरी है। यदि वह केवल व्यक्तिगत मोक्ष तक ही सीमित है और समाज की उन्नति को विस्मृत

करती है, तो वह भी अधूरी है। सम्यक् शिक्षा वही है जो आत्मा और समाज दोनों की पूर्णता का पथ प्रशस्त करे।

शिक्षा सबसे पहले स्वयं को सँवारती है, और फिर दूसरों की सेवा करने योग्य बनाती है। जिस प्रकार कोई व्यक्ति केवल तभी दूसरों की सहायता कर सकता है जब वह स्वयं सक्षम हो–उसी प्रकार शिक्षा का प्रथम फल आत्म-विकास है, और उसके बाद समाज हित की दिशा में वह कार्य करती है। उदाहरणार्थ, विमान में यदि कोई दुर्घटना हो तो पहले यात्री को अपनी ऑक्सीजन मास्क लगानी पड़ती है, तभी वह दूसरों की सहायता कर सकता है। इसी प्रकार शिक्षा पहले आत्मबल प्रदान करती है, फिर समाज की सेवा की प्रेरणा देती है।

सच्ची शिक्षा केवल विद्या, कला या कौशल का नाम नहीं है। वह तो वह शक्ति है जो समाज को भी आगे बढ़ाती है। बिल्कुल वैसे ही जैसे दीपक स्वयं जलकर दूसरों को प्रकाश देता है और मार्गदर्शन करता है। एक सुशिक्षित व्यक्ति न केवल स्वयं समर्थ होता है, बल्कि अनेक व्यक्तियों को भी समर्थ बनाता है।

अज्ञान से दुःख उत्पन्न होते हैं और शिक्षा विवेक देती है। लेकिन यदि शिक्षा का दुरुपयोग किया जाए तो वही शिक्षा विनाश का कारण भी बन सकती है। जैसे मोबाइल या तकनीकी साधनों का गलत उपयोग समाज में हानि पहुँचा सकता है, वैसे ही विद्या का अनुचित प्रयोग भी

हानिकारक है। इसलिए सच्ची शिक्षा वही है जो विवेक प्रदान करे और समाज को कल्याण की ओर ले जाए।

शिक्षा संसार में जीवन को व्यवस्थित करती है और आत्मा को मुक्ति की ओर भी अग्रसर करती है। वह हमें जीवन जीने की कला सिखाती है, व्यवहारिक ज्ञान प्रदान करती है, और साथ ही जीवन में आध्यात्मिकता का प्रादुर्भाव भी करती है।

Explanation–Here, education is not measured by the growth of intellect or worldly skills alone. It is the power that awakens the soul within and illumines society. If education ends merely in material success, it remains incomplete. If it turns only towards personal salvation and neglects the welfare of society, it too is incomplete, Right education is that which paves the way for both inner perfection and collective progress.

Education, first and foremost, refines the self and then enables one to serve others. Just as a person can help others only when he himself is strong and capable, education too first strengthens the individual and then extends its benefits to society. For instance, in an aeroplane emergency, one is instructed to secure their own oxygen mask before assisting others–this is precisely the role of true education.

True education is not merely the acquisition of knowledge, skills, or proficiency, it is a force that uplifts society as a whole. Like a lamp that burns itself

to bring light to others, an educated person not only becomes capable himself but also empowers many others.

Ignorance breeds suffering, while education instills wisdom. Yet, misused knowledge can lead to destruction. Just as the misuse of mobile phones or technology can harm society, misapplied learning too becomes dangerous. Thus, true education is that which cultivates discernment and directs humanity towards welfare.

Education regulates life in the worldly realm and also guides the soul towards liberation. It teaches the art of living, provides practical wisdom, and at the same time offers the sweet touch of spirituality.

❀❀❀

6

सगकुलकित्तिवड्ढगा, आयंस-णीदि-रीदि-संवड्ढगा।
देसुण्णदि-सुत्थ-संति-सुहाणं कारगा सुसिक्खा॥6॥

जो अपने कुल की कीर्ति को बढ़ाने वाली है, आदर्श नीति व रीति की सम्वर्द्धक है, देश की उन्नति, स्वास्थ्य, शान्ति व सुख की कारक है, वह सुशिक्षा है।

That alone is true education which enhances the honour of one’s lineage, nurtures noble values and traditions, strengthens the progress of the nation, promotes health, and becomes the fountain of peace and happiness in society.

व्याख्या–वह शिक्षा सुशिक्षा कहलाती है, जो केवल व्यक्ति का उत्थान न करे, बल्कि उसके कुल और समाज की कीर्ति में भी वृद्धि करे। शिक्षा यदि आदर्श नीतियों और परम्पराओं को पुष्ट न करे तो वह खोखली है। सच्ची शिक्षा वह है जो राष्ट्र की उन्नति का आधार बने, लोगों के स्वास्थ्य का पोषण करे और समाज में शांति व सुख का प्रसार करे।

यहाँ शिक्षा को राष्ट्र और समाज की नींव कहा गया है। यदि शिक्षा केवल स्वार्थ की ओर ले जाए, तो वह पतन का कारण बनती है; किन्तु जब शिक्षा आदर्श, नीति और चरित्र के साथ जुड़ती है, तभी वह व्यक्तिगत और सामूहिक उन्नति का साधन बनती है।

सुशिक्षित व्यक्ति सदा अपने आचरण से परिवार का मान बढ़ाता है। वह कभी ऐसा कार्य नहीं करता जिससे परिवार या समाज किसी प्रकार की लज्जा का अनुभव करे। आज की युवा पीढ़ी के लिए आदर्श यही है कि वह स्वावलम्बन और संयमपूर्ण शिक्षा को अपनाए। शिक्षा का अभाव व्यक्ति को अनेक संकटों में डाल देता है और समाज में अव्यवस्था फैलाता है।

शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य केवल बौद्धिक विकास तक सीमित नहीं है। वह जीवन को नैतिकता, अनुशासन और मूल्यों की ओर प्रेरित करती है। जैसे बिजली का प्रकाश केवल रङ्ग नहीं दिखाता, बल्कि स्पष्टता और दिशा प्रदान करता है, वैसे ही सच्ची शिक्षा मनुष्य के जीवन को नैतिक दृष्टि से परिष्कृत करती है।

यदि नींव मजबूत हो तो पूरी इमारत स्थिर और टिकाऊ होती है। उसी प्रकार सुशिक्षित नागरिक ही राष्ट्र की सच्ची उन्नति का आधार बनते हैं। ऊँची-ऊँची इमारतें और चमचमाती सड़कें किसी राष्ट्र की शक्ति का वास्तविक प्रमाण नहीं हैं; बल्कि राष्ट्र का निर्माण वहाँ रहने वाले सुशिक्षित, संस्कारी और स्वस्थ नागरिकों से होता है। और यह सब केवल शिक्षा से ही सम्भव है।

Explanation–Education here is seen not as a private treasure but as the foundation of collective well-being. Education driven by selfish ends breeds decline; education rooted in ideals, morality,

and character uplifts both the individual and the community.

An educated person always enhances the dignity of his family through his conduct. He never engages in any action that brings disgrace upon his family or society. For today's youth, the true ideal is to embrace self-reliance and disciplined learning. The absence of education plunges individuals into crises and spreads disorder within society.

The true purpose of education is not confined merely to intellectual growth; it guides life towards morality, discipline, and values. Just as electric light not only reveals colours but also provides clarity and direction, in the same way true education refines human life ethically. It transforms the core of life into one that is auspicious, joyful, and enlightened.

When the foundation is strong, the entire structure stands firm and enduring. Similarly, it is educated citizens who form the true strength and progress of a nation. Neither tall buildings nor glittering roads constitute a great nation; rather, a nation is built upon its educated, cultured and healthy citizens. And all this is possible only through education.

❀❀❀

7

अप्पसत्तीण गुणाण, विआसगा बहिकज्ज-सामच्छस्स।
ववहार-णेउण्णस्स, सुसक्कारवड्ढगा सिक्खा।।7।।

जो आत्मशक्ति, आत्मगुण व बाह्यकार्यों के सामर्थ्य की विकासक, व्यवहार की निपुणता व सुसंस्कारों की सम्वर्द्धक होती है, वही शिक्षा है।

Education is that which develops the power of the soul, the virtues of the soul and the capacity of external actions, which increases proficiency in conduct and which nurtures noble values.

व्याख्या–सच्ची शिक्षा वही है, जो आत्मा की शक्ति को जाग्रत करे और भीतर के अप्रकट गुणों को प्रकट कर दे। शिक्षा का उद्देश्य केवल पुस्तकीय ज्ञान देना नहीं, बल्कि व्यक्ति को भव्य और महान कार्यों के लिए सक्षम बनाना है। जब शिक्षा व्यवहार में निपुणता लाती है, तो व्यक्ति सामाजिक जीवन में सौम्यता और दक्षता से कार्य करता है। और जब उसमें सुसंस्कारों का संवर्धन होता है, तब वह शिक्षा न केवल एक योग्य नागरिक, बल्कि एक श्रेष्ठ मनुष्य गढ़ती है।

एक विद्यालय में दो छात्र पढ़ते थे। एक ने केवल किताबों पर ध्यान दिया, लेकिन उसका व्यवहार अहंकार से भरा था। दूसरा पढ़ाई के साथ आत्मसंयम, शिष्टाचार और सेवा की भावना भी सीखता गया। वर्षों बाद पहला छात्र

विद्वान तो बना पर समाज ने उसे सम्मान नहीं दिया। दूसरा छात्र सामान्य पद पर होते हुए भी सबका प्रिय बन गया। तब गुरु ने कहा–"यही है शिक्षा की सच्ची सफलता–जो आत्मबल, सुसंस्कार और व्यवहार कुशलता में प्रकट होती है।" शिक्षा का सच्चा रूप वह है, जो आत्मबल, आत्मगुण, समीचीन व्यवहार और सुसंस्कार–चारों का सामञ्जस्य-पूर्ण विकास करे।

Explanation–True education is that which awakens inner strength, unfolds inherent virtues, and prepares the soul for noble endeavors. Its purpose is not confined to bookish knowledge but to empower one for greatness in life. When education refines conduct, a person becomes graceful and effective in society. When it enriches values, it shapes not merely a skilled citizen but a noble human being.

In a school, two boys studied together. One focused only on books but grew arrogant in behaviour. The other balanced study with humility, discipline, and service. Years later, the first became a scholar but earned little respect, while the second, though in a modest position, became beloved by all. Their teacher said, "This is the triumph of education–revealed not in degrees, but in virtues, strength and noble conduct."

Education is true when it harmoniously develops inner power, virtues, refined conduct, and noble values.

❀❀❀

8

जागरुओ सुकत्तव्व-पालणे अहियार-सद्‌वजोगो य।
तणु-मण-वयण-सत्तीइ, विआसो जाए सिक्खा सा।।8।।

जिससे मनुष्य अपने कर्त्तव्यों के पालन में जागरुक हो, अधिकार का सदुपयोग हो एवं मन, वचन, काय की शक्ति का विकास हो, वह शिक्षा है।

Education is that which awakens in the individual the sense of duties, awareness of rights, understanding of responsibilities and respect for justice.

व्याख्या–शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञान अर्जन नहीं है, बल्कि व्यक्ति को उसके कर्तव्यों के प्रति जागरूक बनाना भी है। कर्तव्य-बोध ही मानवता की रीढ़ है। यदि शिक्षा केवल अधिकारों का भान कराए परन्तु कर्तव्य की चेतना न दे, तो वह अधूरी है। सच्ची शिक्षा वह है जो अधिकारों का सदुपयोग करना सिखाए, न कि उनका दुरुपयोग।

शिक्षा विद्यार्थियों को मात्र मार्क्स के पीछे दौड़ना नहीं सिखाती। वह उन्हें उनके शिक्षक, माता-पिता, भाई-बहन, परिवार, मित्र, देश, विद्यालय, समाज, राष्ट्र आदि के प्रति कर्तव्यों का बोध कराती है। शिक्षा के द्वारा अपने मिले अधिकारों का सदुपयोग करना भी सिखाया जाता है।

आज के डिजिटल युग में शिक्षा यह दिखाती है कि सोशल मीडिया का प्रयोग सकारात्मक प्रचार और श्रेष्ठ कार्यों के लिए किया जाए। यह सभी सुविधाएँ मानव

जीवन को श्रेष्ठ बनाने हेतु विकास की राह हैं, किन्तु इनका दुरुपयोग विनाश का कारण बनता है। अतः किसी वस्तु या विज्ञान का उपयोग सदैव सही दिशा में ही होना चाहिए। बढ़ता हुआ विज्ञान यदि कल्याण का साधन न बने, तो उसका श्रेष्ठ प्रयोग संभव नहीं। शिक्षा उस सन्तुलन को बनाए रखने का मार्ग दिखाती है।

सुशिक्षा मन की विचार शक्ति, वचन की अभिव्यक्ति और शरीर की कर्म-शक्ति तीनों का संतुलित विकास करती है। यही संतुलन मनुष्य को एक संपूर्ण व्यक्तित्व बनाता है।

सुशिक्षा व्यक्ति को समाज, राष्ट्र और मानवता की सेवा के लिए जागरूक बनाती है। यही नहीं, यह व्यक्ति को अपनी क्षमताओं का सही प्रयोग करना सिखाती है। यदि सुशिक्षा न हो, तो व्यक्तित्व अपूर्ण रह जाता है।

जब शिक्षा के साथ बल, ज्ञान और सदाचार जुड़ते हैं, तभी सच्चा व्यक्तित्व निर्मित होता है। खेलकूद और शारीरिक व्यायाम भी शिक्षा का ही हिस्सा हैं, क्योंकि शरीर और स्वास्थ्य को स्वस्थ रखना भी शिक्षा का उद्देश्य है। सच्ची शिक्षा वही है जो कर्तव्यों की जागृति, अधिकारों का सदुपयोग और मन-वचन-काया का समन्वित विकास कराए।

Explanation–True education does not merely impart knowledge, but awakens a sense of duty. Duty-consciousness is the backbone of humanity. If education teaches only rights but ignores duties, it is

incomplete. Right education shows how to use rights wisely, not misuse them.

Education does not merely teach students to run after marks. It teaches them awareness of their duties toward their teachers, parents, siblings, family, friends, school, society and nation. Through education, one also learns the proper use of the rights granted to them.

In today's digital era, education emphasizes that social media should be used for positive awareness and constructive purposes. All modern facilities are meant for the upliftment of human life, yet their misuse leads to destruction. Hence, any science or invention must always be utilized in the right direction. If scientific progress does not serve the welfare of humanity, then its true value is lost. Education guides us to maintain this balance. It develops the powers of mind, speech, and body in harmony–shaping a complete human personality.

True education awakens individuals to serve society, the nation, and humanity. Moreover, it teaches them to use their abilities wisely. Without proper education, a personality remains incomplete.

When education is combined with strength, wisdom and virtue, only then does true character emerge. Physical exercise and games are also part of education, for maintaining a sound body and health is equally an objective of education.

Education is true when it awakens duty, guides the wise use of rights and harmonises the development of mind, speech and body.

❀❀❀

9

सुकज्जपवत्ती पाव-णिवत्ती कसायसमणं सिक्खाइ।
अप्पभूद-लक्खणं च, विहव-कित्ति-पदादी इदरं॥9॥

सुकार्यों में प्रवृत्ति, पापों से निवृत्ति, कषायों का शमन, ये शिक्षा के आत्मभूत लक्षण हैं; जबकि वैभव, कीर्ति व पद इत्यादि इतर अर्थात् शिक्षा के अनात्मभूत लक्षण हैं।

Engagement in virtues, abstinence from sins and pacification of passions–these are the intrinsic characteristics of education whereas wealth, fame and position etc. are the extrinsic characteristics of education.

व्याख्या–सच्ची शिक्षा का मूल स्वरूप भीतर की साधना है यह हमें सत्कर्मों की ओर प्रवृत्त करती है, पापों से निवृत्त करती है और कषायों (क्रोध, मान, माया, लोभ) को शांत करती है। यही शिक्षा के आत्मभूत लक्षण हैं, क्योंकि वे आत्मा को पवित्र और उन्नत बनाते हैं। इसके विपरीत, वैभव, कीर्ति और पद–ये शिक्षा के अनात्मभूत लक्षण हैं। ये शिक्षा के बाहरी परिणाम हो सकते हैं, परन्तु उनका मूल्य केवल तब है जब भीतर की आत्मा शुद्ध हो। यदि शिक्षा केवल पद और वैभव तक सीमित हो जाए, तो वह आत्मा का उत्थान नहीं करती, बल्कि अहङ्कार और बन्धन का कारण बन सकती है।

एक बार दो शिष्य शिक्षा पूरी करके लौटे। पहला शिष्य बड़ा अधिकारी बन गया, लेकिन उसका मन अहंकार और लोभ से भरा रहा। दूसरा शिष्य सामान्य जीवन जीता, पर

सद्गुणों से परिपूर्ण था। लोग पहले से भय खाते थे, दूसरे से प्रेरणा पाते थे। तब उनके गुरु ने कहा–"पहला शिष्य शिक्षा का बाहरी फल है, दूसरा शिष्य शिक्षा का आत्मभूत स्वरूप है।"

अतः सच्ची शिक्षा वही है जो आत्मा को सद्गुणों से भर दे और कषायों से मुक्त करे; वैभव और पद उसके केवल सह-फल हैं, लक्ष्य नहीं।

Explanation–True education manifests in inner growth: it directs one toward virtuous deeds, restrains from sinful actions, and calms the passions of anger, pride, deceit and greed. These are the essential signs of education, for they purify the soul.

In contrast, wealth, fame and position are only the non-essential signs of education. They may accompany it, but if education ends only in them, it ceases to elevate the soul and instead binds it to pride and delusion.

Two disciples completed their studies. One became a great officer, but his heart overflowed with arrogance and greed. The other led a simple life but radiated virtues. People feared the first but drew inspiration from the second. Their teacher said, "The first reflects the outer fruit of learning; the second reflects the true essence of education."

True education fills the soul with virtues and frees it from passions; wealth and fame are mere by-products, not its ultimate goal.

❀❀❀

10,11

जा सिक्खा णिम्माणदि, सुवत्तित्तं ववहार-णेउण्णं।
जणदे चित्ते संतिं, सक्किदि-रक्खगा सुइं मणे॥10॥

भासिदा सव्वसेट्ठा, सा जिणवरेहिं मणीसीहिं वा।
इमाए विवरीदा दु, अहिसावोव्व जगपाणीण॥11॥ (जुम्मं)

जो शिक्षा अच्छे व्यक्तित्व व व्यवहार-कुशलता का निर्माण करती है, चित्त में शान्ति उत्पन्न करती है, मन में पवित्रता उत्पन्न करती है, संस्कृति की संरक्षक है, वह शिक्षा जिनवरों वा मनीषियों के द्वारा सर्वश्रेष्ठ कही गई है। इससे विपरीत शिक्षा जगत् के प्राणियों के लिए अभिशाप के समान ही है।

True education is that which builds a noble personality, refines conduct, gives peace to the mind, purifies the heart and safeguards culture. Such education, the sages have declared, is the highest. In contrast, this kind of education becomes a veritable curse for living beings in the world.

व्याख्या–सच्ची शिक्षा मनुष्य को केवल बुद्धिमान नहीं, बल्कि व्यक्तित्ववान और व्यवहार-कुशल बनाती है। उसका पहला गुण है–सौम्य और शिष्ट व्यक्तित्व का निर्माण, जिससे दूसरों को प्रेरणा मिलती है।

दूसरा गुण है–चित्त में शान्ति और हृदय में पवित्रता; क्योंकि यदि शिक्षा अशान्ति और छल-कपट को बढ़ा दे,

तो वह शिक्षा नहीं, मोह है। तीसरा गुण है—संस्कृति का संरक्षण। शिक्षा केवल आज के लिए नहीं, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी आदर्श और संस्कार देती है। इसीलिए मनीषियों ने कहा कि वही शिक्षा श्रेष्ठ है, जो इन सबकी संवाहक हो। इसके विपरीत शिक्षा—जो अहंकार, स्वार्थ और हिंसा को बढ़ाए वह समाज और जगत के लिए अभिशाप है, चाहे वह कितनी ही आकर्षक क्यों न लगे।

युवाओं को मात्र marks की आवश्यकता नहीं; बल्कि आत्मविश्वास और नैतिक शक्ति की भी आवश्यकता है। सार्वजनिक रूप से बोलना, अपनी बात को रख पाना, सामूहिक परियोजनाओं आदि के माध्यम से व्यक्तित्व निखरता है, और यह सब शिक्षा से ही प्राप्त होता है। शिक्षा व्यक्ति को केवल ज्ञान से नहीं बल्कि एक अच्छे व्यवहार से जोड़ती है। शिक्षा व्यक्ति को विनम्रता, दया, सहायता, क्षमा, धैर्य, विचारशीलता, कर्तव्यनिष्ठा से परिपूर्ण करती है।

आज के युवाओं की सबसे बड़ी समस्या है—तनाव और प्रतिस्पर्द्धा। इन दोनों ने ही आज की पीढ़ी को बेचैन कर दिया है। जबकि शिक्षा जीवन में आराम, स्थिरता व सकारात्मकता लाती है। शिक्षा किसी से स्वयं का तुलनात्मक अध्ययन नहीं कराती अपितु स्वयं को आत्मविश्वासी व आत्म निर्भर बनाती है।

काम, क्रोध, लोभ आदि मन को मलिन करते हैं। देखी या पढ़ी जाने वाली गलत सामग्री भी मन को अपवित्र कर देती है। अतः गलत सामग्री से दूर रहें। अपना स्क्रीन टाइम सीमित करें और विचार सकारात्मक रखें। हमारी संस्कृति

केवल इतिहास नहीं बल्कि दैनिक मूल्य है; जो हमारे जीवन को मूल्यवान बनाते हैं। बड़ों का सम्मान, छोटों से प्यार, परिवार, समाज व देश के प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन तथा पर्यावरण के अनुकूल जीवन शैली सब संस्कृति का हिस्सा ही समझें।

अतः वही शिक्षा श्रेष्ठ है जो व्यक्तित्व, व्यवहार, शांति, पवित्रता और संस्कृति की संवाहक बने। जो शिक्षा इनसे विपरीत है, वह समाज के लिए विष के समान है।

Explanation–True education makes a human being not only wise, but also a person of noble character and cultured excellence. Its foremost quality is the cultivation of a serene and unique personality, one that becomes serene inspiration for others.

The second virtue lies in inner peace and purity of the heart; for if what is called education only augments agitation and deceit, it ceases to be education and becomes mere delusion. In contrast, education that fosters arrogance, selfishness or destruction is not education at all–it is a curse to humanity.

The third virtue is the safeguarding of culture. True education is not meant merely for the present, but serves transmit ideals and values to generations yet to come.

Hence, the wise have proclaimed that true education is that which harmonises all virtues. On the contrary, education that nurtures ego, selfishness, and violence becomes a bane to society and the world, however attractive it might appear.

What the youth requires is not merely marks, but also self-confidence and the strength of moral character. Public speaking, to express one's thoughts and to work through collaborative projects refines personality and it is education that makes all this possible. Education connects a person not only with knowledge, but also with noble behaviour. Education fills a person with virtues such as humility, compassion, helpfulness, forgiveness, patience, thoughtfulness, devotion to duty and so on.

The foremost challenge faced by today's youth is stress and rivalry. These two have unsettled today's generation, while true education instills peace, stability and positivity in life. True education does not lead a person into comparisons with others, but nurtures self-confidence and self-reliance.

Lust, anger and greed pollute the heart. Misleading content, whether encountered through sight or study, taints the purity of the mind. Hence, stay away from trivial content, regulate your screen time and nurture noble and positive thoughts.

Our culture is not just a matter of history but a living value that makes our life truly meaningful and precious. To honour elders, to love the uphold one's responsibilities towards family, society and nation and to embrace eco-friendly living-these too must be seen as essential elements of new culture.

The best education builds personality, conduct, peace, purity and culture; any education opposed to these is poison to society.

❀❀❀

12

जा सम्मपरिवट्टणं, जीवणस्स कुणदि सिक्खा सा।
इयरा णेव सुसिक्खा, पमाणपत्त-गहणं मेत्तं॥12॥

जो जीवन का सम्यक् परिवर्तन करती है वह शिक्षा है। इससे इतर अर्थात् जो जीवन में सम्यक् परिवर्तन नहीं लाती वह सुशिक्षा नहीं है, वह प्रमाणपत्र ग्रहण करना मात्र है।

True education is that which transforms life. Education that does not bring about such transformation is not real education; it is only the collecting of certificates.

व्याख्या—शिक्षा का वास्तविक मापदंड यह नहीं कि आपके पास कितने डिग्री या प्रमाणपत्र हैं, बल्कि यह है कि उसने आपके जीवन को किस प्रकार बदला है।

सच्ची शिक्षा वह है जो सोच में परिष्कार, आचरण में सुधार और लक्ष्य में ऊँचाई लाए। यदि शिक्षा केवल बाहरी प्रमाणपत्र तक सीमित रह जाए और भीतर का व्यक्तित्व वही का वही रहे, तो वह शिक्षा नहीं, बल्कि मात्र अंक और उपाधि की भीख है। शिक्षा तभी सार्थक है जब वह जीवन को सम्यक दिशा में प्रवाहित कर दे—जैसे गंदले जल को शुद्ध कर देने वाला गंगाजल।

एक छात्र ने अपने गुरु से गर्व से कहा—"गुरुदेव, मैंने दस डिग्रियाँ प्राप्त की हैं।" गुरु ने मुस्कुराकर पूछा—"क्या

तुम्हारा क्रोध कम हुआ? क्या तुम्हारी वाणी मधुर हुई? क्या तुम्हारे कर्मों से किसी का भला हुआ ?" छात्र चुप हो गया। तब गुरु ने कहा–"डिग्रियाँ गिनना शिक्षा नहीं है; स्वयं को गढ़ना ही शिक्षा है।''

अतः सच्ची शिक्षा वही है जो जीवन का रूपांतरण करे; जो केवल डिग्रियों तक सीमित हो, वह शिक्षा नहीं, मात्र कागज की औपचारिकता है।

Explanation–The worth of education is not in the number of degrees but in the refinement of thought, conduct and purpose. If education remains limited only to external certificates and the inner personality stays the same, then that it not education,but merely a beggary of marks and degrees.

If learning leaves a person unchanged, it is no more than a label. Real education flows like a river, cleansing and redirecting the course of life toward higher ground.

A student proudly told his master, "I have earned ten degrees." The master asked, "Has your anger lessened? Has your speech become gentle? Have your actions benefited others?"

The student fell silent. The master said, "Counting degrees is not education; shaping oneself is."

Education is real only when it transforms life; without this, it is nothing more than ink on certificates.

❀❀❀

13

शिक्षा की आवश्यकता

सुहलक्ख-संपत्तीइ, पहाण-हेदू जीवणे सुसिक्खा।
सक्कारजुदजीवणं, असंभवो विणा सुसिक्खाइ॥13॥

जीवन में शुभ लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सम्यक् शिक्षा प्रधान कारण है। सम्यक् शिक्षा के बिना सुसंस्कार युक्त जीवन असम्भव है।

To attain noble goals in life, right education is the prime cause. Without right education, a life enriched with values is impossible.

व्याख्या–मनुष्य का जीवन तभी सार्थक होता है जब उसके पास एक शुभ लक्ष्य हो–चाहे वह आत्मिक मुक्ति हो, समाज-सेवा हो, या व्यक्तिगत श्रेष्ठता। परन्तु इन लक्ष्यों की प्राप्ति का सबसे प्रमुख साधन है सम्यक् शिक्षा। शिक्षा ही वह दीपक है जो मार्ग को प्रकाशित करता है।

यदि शिक्षा न हो, तो मनुष्य के भीतर सुसंस्कारों का निर्माण नहीं हो सकता। बिना सुसंस्कारों का जीवन, बिना जड़ों का वृक्ष है–बाहर से हरा दिखेगा, पर थोड़ी आँधी में गिर जाएगा। सही शिक्षा ही वह जड़ है, जो जीवन में दृढ़ता और स्थिरता देती है।

Explanation–A human life becomes truly meaningful only when it has a noble goal-whether it

be spiritual liberation, service to society or personal excellence. Yet, the foremost means of attaining these goals is right education. Education is that lamp which illuminates the path ahead.

Without education, the foundation of noble values cannot be built within a person. A life without value is like a tree without roots–it may appear green and flourishing on the outside, but will fall at the slightest storm. True education is that root which gives life strength and stability.

Right education is the root of all noble achievements. A value rich life is impossible without true education.

❀❀❀

14

सुसिक्खा सम्मणाणं, सम्मसद्धं कुव्वेदि दिढिभूदं।
संवेगं वेरग्गं, थिरं संजमं सयायारं॥14॥

सुशिक्षा सम्यक् ज्ञान, सम्यक् श्रद्धा, सम्वेग व वैराग्य को दृढ़ीभूत करती है। सम्यक् शिक्षा संयम व सदाचार को स्थिर करती है।

True education strengthens right knowledge, right faith, spiritual fervor and detachment. Education establishes self restraint and righteous conduct.

व्याख्या–सुशिक्षा केवल जानकारी का संग्रह नहीं है, वह आत्मा की त्रिवेणी है-सम्यक् ज्ञान, सम्यक् श्रद्धा और सम्यक् वैराग्य। जब शिक्षा सही होती है, तो वह हमें वस्तुओं का सही ज्ञान देती है, जीवन में सही आस्था जगाती है और संसार के क्षणभंगुर सुखों से वैराग्य उत्पन्न करती है। इसके साथ ही सुशिक्षा जीवन में संयम और सदाचार को स्थिर करती है। संयम जीवन की नींव है और सदाचार उसका स्वरूप। शिक्षा यदि इन दोनों को स्थिर न कर सके, तो वह शिक्षा नहीं, केवल कौशल है।

Explanation–True education is not a heap of information; it is the confluence of right knowledge, right faith and right detachment.

When education is true, it awakens the light

of knowledge, strengthens devotion to the path, and instills dispassion toward fleeting pleasures. Along with this, right education makes restraint the foundation of life and virtue its form. Without this, education is mere skill, not wisdom.

A young man asked his master, "What is the highest fruit of education?"

The master replied, "If through learning, truth awakens in you, faith in the path becomes firm, and detachment from indulgence arises, then your education is meaningful. Otherwise, it is only the burden of degrees."

True education awakens right knowledge, right faith and right detachment, while stabilising restraint and virtue in life.

❀❀❀

15

दुच्चिंतण-विणासगा, दुव्वयणहारी दुक्कम्मघादी।
कुसक्कार-णिरोहगा, सव्वगुणुप्पायगा सिक्खा।।15।।

शिक्षा दुष्चिन्तन का नाश करने वाली, दुर्वचनों का परिहार करने वाली, दुष्कर्म का घात करने वाली, कुसंस्कारों का निरोध करने वाली एवं सभी सुगुणों की उत्पादक होती है।

Education is that which destroys evil thoughts, restrain ill words, wipes away impure activities, eradicates bad impressions and nurtures noble values within.

व्याख्या–सच्ची शिक्षा का पहला कार्य है–मन की शुद्धि।

वह दुष्चिन्तनों को मिटाती है, क्योंकि जिन विचारों में द्वेष, भय या नकारात्मकता होती है, वे जीवन को नीचे खींचते हैं।

दूसरा कार्य है–वाणी का संस्कार। शिक्षा से वाणी में मधुरता आती है; अपशब्द और कटुवचन अपने आप दूर हो जाते हैं। आज के युग में वाणी को संस्कारित रखने के WhatsApp, Insta या gaming chats में abusive words से बचें; विनम्र और गरिमापूर्ण भाषा को आदत बनाएँ।

तीसरा कार्य है–कर्म का परिमार्जन। शिक्षा दुष्कर्मों पर प्रहार करती है और व्यक्ति को सत्कर्मों में प्रवृत्त करती है।

चौथा कार्य है–संस्कारों की शुद्धि। कुसंस्कारों को रोककर वह शुभ संस्कारों को पुष्ट करती है।

और अंतिम कार्य है–सुगुणों की उत्पत्ति। शिक्षा वह भूमि है, जिसमें सद्‌गुण अंकुरित होते हैं और जीवन वृक्ष की तरह फैल जाते हैं।

एक शिष्य ने गुरु से पूछा–गुरुदेव, क्या शिक्षा केवल पढ़ना–लिखना है? ''गुरु ने एक पौधे की ओर इशारा किया और कहा "देखो, शिक्षा वही है जो इस पौधे की तरह है। जैसे पौधा खरपतवार को रोकता है और फल–फूल उत्पन्न करता है, वैसे ही शिक्षा बुरे विचार, वाणी और कर्म को रोककर सुगुणों को प्रकट करती है।"

अतः सच्ची शिक्षा मन, वचन, कर्म और संस्कारों की शुद्धि करती है और सुगुणों का प्रस्फुटन कराती है।

Explanation–True education first purifies the mind–erasing evil thoughts because thoughts filled with hatred, fear, negativity and selfishness pull life downward.

It disciplines speech–turning harsh words into gentleness. Through education, foul and harsh words naturally disappear. In today's age, to keep your speech refined, avoid using inappropriate words on Whatsapp, Instagram or gaming chats, and make a habit of using polite and respectful language.

It refines action–striking at evil deeds and inspiring noble ones towards good actions.

It purifies values restraining corrupt impressions and nurturing noble ones.

Finally, education is the fertile soil from which virtues spring forth and the tree of life blossoms and flourishes.

A disciple once asked, “Master, is education only reading and writing?”

The master pointed to a plant and said, “See, education is like this plant. Just as it restrains weeds and produces flowers, so education removes bad thoughts, words, and deeds, while bringing forth virtues.”

True education purifies mind, speech, action and values and becomes the wellspring of virtues.

❀❀❀

16

सव्वत्थाणं समुइद-मुल्लाणं णाण-दायगा सिक्खा।
जाइ णरो उवजोगी, गेह-समाय-देस-विस्साण॥16॥

शिक्षा सभी पदार्थों के समुचित मूल्यों के ज्ञान को प्रदान करती है, जिससे मनुष्य घर, समाज, देश व विश्व के लिए उपयोगी होता है।

Education bestows the wisdom of the tree worth of all things, enabling a person to be of service to the family, society, nation and the entire world.

व्याख्या–सच्ची शिक्षा का अर्थ केवल विषयों का ज्ञान नहीं है, बल्कि वस्तुओं, विचारों और अवसरों का समुचित मूल्य समझना है।

जब मनुष्य हर वस्तु और परिस्थिति का मूल्य पहचानता है, तो उसका उपयोग सन्तुलित और सार्थक होता है। जिसे मूल्य का बोध नहीं, वह या तो किसी वस्तु को तुच्छ समझकर उसका दुरुपयोग करता है, या फिर किसी क्षणभंगुर चीज को परम समझकर उसमें अपना जीवन खो देता है।

सच्ची शिक्षा सिखाती है कि–घर केवल रहने की जगह नहीं, बल्कि मूल्य और संस्कार की पाठशाला है। समाज केवल भीड़ नहीं, बल्कि सहयोग और सहजीवन का परिवार है। देश केवल नक्शे पर खिंची सीमा नहीं, बल्कि

कर्तव्य और समर्पण का क्षेत्र है। और विश्व केवल मानचित्र नहीं, बल्कि संपूर्ण मानवता का साझा आँगन है।

इस प्रकार शिक्षा मनुष्य को "self-centered being, से “world-centered human" बना देती है।

यह शिक्षा ही है जो व्यक्ति को ऐसा बनाती है कि वह अपने घर का आदर्श सदस्य, समाज का जिम्मेदार नागरिक, देश का उपयोगी सपूत और अन्ततः पूरे विश्व का हितैषी बन सके। शिक्षा का मूल्य इसी में है कि वह व्यक्ति को स्थानीय से वैश्विक दृष्टिकोण तक ले जाती है।

एक छात्र ने अपने गुरु से पूछा–“गुरुदेव, शिक्षा का सबसे बड़ा फल क्या है?''

गुरु ने एक फल हाथ में लेकर कहा “जब यह फल पकता है, तो सिर्फ स्वयं मीठा नहीं होता, बल्कि दूसरों को भी मिठास देता है। शिक्षा भी ऐसी ही है। यदि तुम्हारी शिक्षा से घर, समाज, देश और दुनिया को लाभ न हो, तो वह शिक्षा अधूरी है।''

सच्ची शिक्षा मनुष्य को घर का दीपक, समाज का आधार, देश का गौरव और विश्व का हितैषी बनाती है।

Explanation–True education does not merely give subject knowledge; it teaches the true value of things, ideas and opportunities. When a person knows the right worth of all, he uses them with balance and purpose. One who lacks this sense either misuses what is valuable, or clings to what is trivial as if it were ultimate.

Right education teaches: Home is not just a shelter, but the school of values. Society is not a crowd, but a family of cooperation. The nation is not a boundary line, but the field of duty and sacrifice. And the world is not a map, but the shared courtyard of humanity.

Education thus transforms man from a self-centered being into a world-centered human.

Such education shapes him into a responsible member of the family, a useful citizen of society, a worthy son of the nation, and ultimately, a benefactor of the world.

The greatness of education lies in expanding one's vision . from the local to the global.

A student asked his master, "What is the greatest fruit of education?"

The master held up a fruit and said, "When it ripens, it is not sweet for itself alone but also gives sweetness to others. Education is the same. If it benefits not your home, society, nation and the world, it is incomplete."

True education makes a person the light of his home, the pillar of his society, the pride of his nation, and the benefactor of the world.

❀❀❀

17

णिम्माणदि णरं वरं, दव्वखेत्त-याल-भावणुसारेण।
कुसल-कुलालोव्व णाण-गुण-सुक्कद-खेत्तेसु सिक्खा॥17॥

शिक्षा कुशल कुम्भकार के समान मनुष्य को द्रव्य, क्षेत्र, काल व भाव के अनुसार ज्ञान, गुण, सुकृत व क्षेत्रों में श्रेष्ठ बनाती है।

Education is like the master potter, moulding a person in harmony with matter, space, time and intent and elevating him to excellence in knowledge, virtues and noble deeds.

व्याख्या—एक कुम्भकार मिट्टी के ढेले को देखकर कहता है—"इससे घड़ा बनेगा, इस मिट्टी से दीया, और इस मिट्टी से सुन्दर मूर्ति।"

उसी प्रकार शिक्षा मनुष्य को पहचानती है, उसे गढ़ती है, और उसके भीतर छिपे हुए ज्ञान, गुण और क्षमता को समय, स्थान और परिस्थिति के अनुसार सही रूप देती है।

शिक्षा के बिना मनुष्य मात्र कच्ची मिट्टी है। शिक्षा ही है जो उसे समाजोपयोगी, राष्ट्रोपयोगी और विश्वोपयोगी आकार प्रदान करती है।

एक गाँव में कुम्भकार ने मिट्टी के कई ढेर देखे। किसी ने पूछा—"इन ढेरों का क्या होगा?"

कुम्भकार बोला–"देखो, यह ढेर वैसे ही पड़े रहें तो कोई मूल्य नहीं। पर जब इन्हें मैं गढ़ता हूँ, तो कोई जल का घड़ा बनता है, कोई दीपक और कोई सजावट की मूर्ति।"

"शिक्षा भी वैसी ही है। यदि शिक्षा हमें गढ़े नहीं, तो हम मिट्टी के ढेर जैसे ही रहेंगे।''

शिक्षा केवल किताबों का ज्ञान न देकर परिस्थितियों में जीना और निर्णय लेना सिखाए। तभी शिक्षा की सार्थकता है।

जैसे कुम्भकार मिट्टी को आकार देकर उपयोगी बनाता है, वैसे ही शिक्षा युवाओं को अच्छे संस्कारों और आदर्श मूल्यों की ओर मोड़े।

एक घड़ा केवल मालिक के लिए नहीं, पूरे गाँव के लिए जल रखता है। वैसे ही युवाओं की शिक्षा केवल खुद के लिए नहीं, बल्कि समाज के लिए होनी चाहिए।

शिक्षा कच्ची मिट्टी को उपयोगी घड़े में बदलने वाले कुम्भकार जैसी है–जो मनुष्य को सही समय, सही स्थान और सही रूप में श्रेष्ठ और उपयोगी बना देती है।

Explanation–Education is like a skilled potter. Just as he moulds raw clay into a pot, a lamp, or a beautiful idol, so education shapes man according to time, place, and circumstance–refining his knowledge, virtues and noble deeds.

Without education, man is but raw clay; with it, he becomes a vessel of purpose and service.

A potter once saw heaps of clay. Someone asked, "What will become of these?" The potter replied, "If left alone, they are worthless. But when shaped, they become pots, lamps and idols."

The master said, "So is man without education –a heap of clay. Education moulds him into usefulness."

True education is not confined to bookish knowledge; it teaches one to face circumstances and to take wise decisions in life. Herein lies the true essence of education. As the potter fashions clay into purposeful form, in the same way education directs one towards virtuous impressions and lofty ideals. Just as a pot serves the whole village, education must make youth useful to society coding for NGOS, teaching children, promoting health or environment.

Education is the potter of life–shaping raw humanity into vessels of wisdom and service.

❀❀❀

18

वड्ढगा तक्कजुदणिण्णयसत्ति-सक्किदि-विज्जज्झप्पाण।
सम्मसिक्खा जीवस्स, सव्वंगीण-विआसगा सय॥18॥

सम्यक् शिक्षा सदैव तर्क युक्त निर्णय शक्ति, संस्कृति, विद्या, अध्यात्म एवं जीव का सर्वाङ्गीण विकास करने वाली होती है।

True education nurtures reasoned judgement, enriches culture and knowledge, awakens spirituality and fosters the holistic development of life.

व्याख्या–सच्ची शिक्षा मनुष्य को केवल एक दिशा में नहीं, बल्कि सर्वदिशाओं में विकसित करती है।

वह बुद्धि को तर्कशक्ति देती है, हृदय को निर्णयशक्ति, जीवन को संस्कृति, मस्तिष्क को विद्या और आत्मा को अध्यात्म।

शिक्षा का आदर्श स्वरूप वही है जो व्यक्ति को एकपक्षीय न बनाकर, संतुलित और समग्र बनाए।

जिस प्रकार वृक्ष की जड़, तना, शाखाएँ, पत्ते और फल सभी का सन्तुलित विकास आवश्यक है, उसी प्रकार शिक्षा भी जीवन के बौद्धिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक सभी पक्षों का विकास करती है।

एक विद्यार्थी ने गुरु से पूछा–"गुरुदेव, विद्या का उद्देश्य क्या है?" गुरु ने एक अधखिले फूल की ओर इशारा करके कहा–"देखो, यह फूल अधूरा है। इसमें न सम्पूर्ण सुगन्ध

है, न सौंदर्य। जब यह पूरा खिलेगा तभी सभी दिशाओं में अपनी सुगन्ध फैलाएगा। शिक्षा का उद्देश्य भी यही है–मनुष्य को अधूरा नहीं, सम्पूर्ण और सुगंधित बनाना।"

शिक्षा अधूरापन मिटाकर मनुष्य को सम्पूर्णता की ओर ले जाती है–जहाँ तर्क, निर्णय, संस्कृति, विद्या और अध्यात्म सब मिलकर जीवन को पूर्ण और सुगन्धित बना देते हैं।

Explanation–True education nurtures not one side but all sides of human life.

It strengthens logic, refines decision-making, sustains culture, expands knowledge, awakens spirituality, and ensures holistic growth.

The true ideal of education is to shape individuals not into one-sided beings, but into balanced and well-rounded personalities.

Just as a tree requires the balanced growth of its roots, trunk, branches, leaves, and fruits, in the same way education nurtures the intellectual, cultural, social and spiritual dimensions of life.

A student once asked his master, "What is the aim of education?" The master pointed to a half-bloomed flower and said, "This flower is incomplete; it has neither full fragrance nor full beauty. When it blooms entirely, it spreads its essence everywhere. Education too must not leave man half-grown, but blossom him into fullness."

Education is complete when it makes man not partial but whole logical, wise, cultured, skilled, and spiritual.

❀❀❀

19

धम्म-अट्ठ-काम-मोक्ख-पुरिसट्ठ-कारगा सम्मसिक्खा दु।
सुजुग-णिम्माणआ सा, संचालगा सुफलदायगा।।19।।

सम्यक् शिक्षा धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष पुरुषार्थ का कारण होती है। वह शिक्षा सुयुग की निर्माता, सञ्चालिका व सुफलदायक है।

True education is the cause of Dharma, Artha, Kama and Moksha. That right education is the creator of an era, guide and fruitful giver.

व्याख्या–भारतीय जीवन-दर्शन चार पुरुषार्थों पर आधारित है–

1. धर्म (नीति, कर्तव्य और सदाचार)
2. अर्थ (जीवन निर्वाह हेतु धन का साधन)
3. काम (सन्तुलित इच्छाओं और आकाङ्क्षाओं की पूर्ति)
4. मोक्ष (आध्यात्मिक उत्थान और मुक्ति)।

इन चारों की प्राप्ति का मूल कारण सम्यक् शिक्षा ही है।

शिक्षा के बिना धर्म अन्धविश्वास और कर्मकाण्ड में बदल जाता है। शिक्षा के बिना अर्थ लोभ और शोषण का साधन बन जाता है। शिक्षा के बिना काम वासना और भोग की सीमा तक सीमित रह जाता है। शिक्षा के बिना मोक्ष केवल कल्पना और भ्रम बन जाता है। इसीलिए शिक्षा ही वह शक्ति है जो व्यक्ति और समाज को संतुलन और दिशा

देती है। यह न केवल व्यक्ति का, बल्कि समूचे युग का निर्माण करती है। वह काल की धारा को सही दिशा देती है, समाज को सुव्यवस्थित रूप से संचालित करती है और आने वाली पीढ़ियों को श्रेष्ठ परिणाम प्रदान करती है।

एक सम्राट ने अपने तीन पुत्रों को भिन्न-भिन्न प्रकार की शिक्षा दिलवाई। पहले को केवल धन कमाने की कला सिखाई गई। वह अत्यन्त धनी हुआ परन्तु लोभी और निर्दयी भी। दूसरे को केवल शास्त्रों का ज्ञान दिया गया। वह पंडित तो हुआ, पर व्यवहार और व्यावहारिक जीवन से दूर रहा। तीसरे को सन्तुलित शिक्षा दी गई—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों का सम्यक् बोध। वही पुत्र न्यायप्रिय, धन-सम्पन्न, संस्कृति-रक्षक और आध्यात्मिक दृष्टि वाला बना। अन्ततः वही योग्य उत्तराधिकारी घोषित हुआ।

शिक्षा युवाओं को यह सिखाए कि जीवन में सत्य, न्याय और ईमानदारी का पालन करना ही सच्चा धर्म है। जैसे—परीक्षा में नकल न करना, नौकरी में ईमानदारी से काम करना।

शिक्षा केवल धन कमाना न सिखाए, बल्कि नैतिकता के साथ धन कमाने और उसे समाजोपयोगी बनाने का मार्ग दिखाए। जैसे—जो पर्यावरण या समाज की समस्याएँ हल करें।

शिक्षा युवाओं को अपनी इच्छाओं को नियन्त्रित और मर्यादित ढंग से पूरा करना सिखाए। जैसे—नशे और व्यसनों से दूर रहकर खेल, कला और मित्रता में स्वस्थ रुचि लेना।

शिक्षा आत्मविकास और आन्तरिक शान्ति का मार्ग

दिखाए। जैसे–ध्यान, आत्मचिन्तन और अध्यात्मिक साहित्य का अध्ययन।

शिक्षित युवा केवल नौकरी खोजने वाले न हों, बल्कि युग की दिशा तय करने वाले हों। जैसे–समाज सुधार, पर्यावरण संरक्षण, शांति स्थापना, नयी तकनीक का समाजोपयोगी प्रयोग।

सम्यक् शिक्षा ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष–इन चारों पुरुषार्थों को सन्तुलन में रखती है और युगनिर्माण की धुरी बनती है। शिक्षा व्यक्ति को नहीं, पूरे समाज और आने वाले युगों को दिशा प्रदान करती है।

Explanation–Indian philosophy describes four aims of life (Purusharthas):

1. Dharma (righteousness, duty, ethics)
2. Artha (means of livelihood, prosperity)
3. Kama (fulfillment of balanced desires)
4. Moksha (spiritual liberation)

The root of all these four is right education.

Without education, Dharma degenerates into superstition. Without education, Artha becomes greed and exploitation. Without education, Kāma sinks into lust and indulgence. Without education, Moksha remains mere imagination. Education alone gives balance and direction to both the individual and society. It is the architect of ages, the regulator of civilization, and the giver of fruitful results to generations.

A king educated his three sons differently.

The first was taught only the art of wealth; he grew rich, but greedy and cruel.

The second was taught only scriptures; he grew wise, but impractical.

The third was given balanced education–awareness of Dharma, Artha, Kama, And Moksha. He became righteous, prosperous, cultured, and spiritually aware. He was chosen as the true heir.

Education must instill in the youth that the true religion of life lies in upholding truth; justice and honesty–be it refraining from cheating in examinations or performing one's duties at work with sincerity and integrity. Education should not merely teach how to earn money, but show the way to earn with morality and to make it useful for society-like startups that solve problems of the environment or social issues.

True education guides the youth to regulate their desires and pursue them with dignity-by shunning destructive addictions and seeking joy in sports, arts and noble companion-ship. True education must illuminate the way to self-growth and inner tranquility-through meditation, introspection and the pursuit of spiritual wisdom.

Youth must not be mere job-seekers, but era-makers–leading reforms, sustainability, peace, and innovation.

Right education harmonises the four aims of life–Dharma, Artha, Kāma, and Moksha and becomes the foundation of a new age. It does not shape individuals alone, but entire civilizations.

❀❀❀

20

**सिक्खाए सम्मिलिदं, णिच्च-णइमित्तिग-पूयाकम्मं च।
सहावत्ति-कम्मं अवि, सव्वयालम्मि तह खेत्तम्मि॥20॥**

शिक्षा में सर्वकाल व क्षेत्र में नित्यकर्म, नैमित्तिक कर्म, पूजाकर्म और स्वभावाप्ति कर्म भी सम्मिलित हैं।

Education, in every age and in every sphere, embraces the practice of daily obligations, occasional observances, ritual worship and the duties arising from one's innate nature.

व्याख्या–शिक्षा केवल बौद्धिक ज्ञान का नाम नहीं है, बल्कि जीवन के विविध कर्मों का सम्यक् बोध भी है।

1. नित्यकर्म: प्रतिदिन किए जाने वाले कर्तव्य जैसे–स्वाध्याय, प्रार्थना, संयमित जीवनचर्या। ये शिक्षा का आधार हैं, क्योंकि यह अनुशासन और संयम सिखाते हैं।

2. नैमित्तिक कर्म: विशेष परिस्थितियों या अवसरों पर किए गए कर्म–जैसे पर्व-त्यौहार, व्रत, सेवा-कार्य। ये शिक्षा का समाजोपयोगी पक्ष है।

3. पूजा कर्म: ईश्वर, गुरु और आदर्शों के प्रति भक्ति। यह शिक्षा का आध्यात्मिक पक्ष है, जो हृदय को शुद्ध करता है।

4. स्वभावाप्ति कर्म: आत्मा की शुद्ध अवस्था की प्राप्ति के लिए की गई साधना। यही शिक्षा का परम लक्ष्य है।

इस प्रकार शिक्षा केवल पुस्तक तक सीमित न होकर, जीवन की सम्पूर्ण साधना है।

अतः शिक्षा वही है जो मनुष्य को केवल ज्ञानवान् नहीं बल्कि अनुशासित, समाजोपयोगी और आत्मबोध सम्पन्न बनाए।

Explanation–Education is not merely intellectual learning but the integration of four essential practices:

1. Nitya Karma (Daily Duties): Everyday discipline–study, prayer, regulated lifestyle. It teaches consistency and order.

2. Naimittika Karma (Occasional Duties): Special duties performed on festivals, vows, or times of need. It reflects the social dimension of education.

3. Puja Karma (Worship Duties): Devotion towards God, teachers and ideals. It purifies the heart and represents the spiritual dimension of education.

4. Swabhavapti Karma (Return to Self-Nature): The inner journey to realise the soul's true nature. This is the ultimate aim of education.

Thus, true education is not confined to books, but embraces the full practice of life.

Education is complete only when it makes man disciplined, socially responsible, spiritually devoted and self realised.

❀❀❀

21

तरु-संवड्ढण-हेदू, सलिल-उव्वरग-अक्कपयासादी।
सुसिक्खा एगमेत्तं, उवायो जीवण-वड्ढणस्स॥21॥

जिस प्रकार जल, खाद, सूर्यप्रकाशादि वृक्ष सम्वर्द्धन का हेतु हैं, उसी प्रकार एकमात्र सम्यक् शिक्षा ही जीवन के सम्वर्द्धन का उपाय है।

As water, nourishment and sun light foster the growth of a tree, so too is true education the sole means for the flourishing of life.

व्याख्या—वृक्ष के विकास के लिए जल, खाद और सूर्यप्रकाश अत्यावश्यक हैं। जल जड़ों को सींचता है, खाद मिट्टी को पोषण देती है और सूर्यप्रकाश पत्तियों को जीवन प्रदान करता है। यदि इनमें से किसी भी घटक की कमी पड़ जाए तो वृक्ष का विकास रुक जाता है। इसी प्रकार मनुष्य जीवन के विकास के लिए सम्यक् शिक्षा ही प्रमुख साधन है।

शिक्षा विचारों को सींचती है, गुणों को पोषित करती है और आत्मा को प्रकाशमान करती है।

एक बगीचे में दो वृक्ष लगाए गए। एक को जल, खाद और प्रकाश सब मिला, दूसरा उपेक्षित रहा। कुछ समय में पहला वृक्ष छायादार और फलदायी बना, दूसरा सूख गया।

यथार्थ में मनुष्य का जीवन भी शिक्षा के बिना उसी

उपेक्षित वृक्ष जैसा है। शिक्षा ही है जो उसे फलदायी और समाजोपयोगी बनाती है।

सम्यक् शिक्षा ही जीवन के सम्वर्धन का जल, खाद और सूर्यप्रकाश है। बिना इसके जीवन बंजर भूमि जैसा हो जाता है।

Explanation–For a tree to grow, it needs water, manure, and sunlight. Water nourishes the roots, manure enriches the soil, and sunlight gives vitality to the leaves.

If any of these is absent, the growth of the tree halts. In the same way, the true nourishment of human life is right education.

Education waters the roots of thought, enriches virtues, and illumines the soul with clarity.

Two trees were planted in a garden. One received water, fertilizer and sunlight; the other was neglected.

Soon, the first became fruitful and full of shade, while the second withered away.

In reality so is human life. Without education, it withers; with education, it becomes fruitful and beneficial to all.

Education is to human life what water, manure, and sunlight are to a tree the very source of growth, vitality, and fruitfulness.

❀❀❀

22

सिक्खाइ विणा विणयो, कत्तव्वसुपालणं सयायारो।।
सगवरउण्णदी तवो, संजमो य सव्वा असक्का।।22।।

शिक्षा के बिना विनय, कर्तव्यपालन, सदाचार, स्वपर की उन्नति, तप व संयम सभी अशक्य हैं।

Without education, duty cannot be fulfilled, humility cannot be cultivated, righteous conduct cannot prevail, upliftment of self and others cannot be achieved and neither austerity nor self-restraint can truly exist.

व्याख्या–मनुष्य का जीवन तभी अर्थपूर्ण बनता है जब उसमें विनय, कर्तव्य पालन, सदाचार, स्वपर की उन्नति, तप और संयम जैसे गुण स्थिर होकर प्रकट हों। किन्तु यह सभी गुण शिक्षा के बिना केवल खोखले आभूषण हैं। शिक्षा ही वह आधार है जो इन गुणों को स्थिरता और जीवन्तता देती है। जैसे सूखी भूमि पर बोया गया बीज कभी फलदायी नहीं होता, वैसे ही अशिक्षित जीवन में गुणों का अंकुरण नहीं हो सकता।

सच्ची शिक्षा विनय को भीतर से उपजाती है। नम्रता केवल झुकने का नाम नहीं, बल्कि हृदय की गहराई से उपजी वह सजगता है जो व्यक्ति को अहङ्कार से बचाती है और सबके साथ समानता का व्यवहार करना सिखाती

है। शिक्षा के बिना विनय केवल औपचारिकता बनकर रह जाती है।

इसी प्रकार कर्तव्य-पालन का भाव भी शिक्षा से ही जन्म लेता है। अशिक्षित व्यक्ति अधिकारों की तो बात करता है, पर कर्तव्यों से विमुख रहता है। शिक्षा उसे यह चेतना देती है कि जीवन केवल 'लेने' का नाम नहीं, बल्कि 'देने' का भी है।

सदाचार का आधार भी शिक्षा ही है। शिक्षित व्यक्ति ही समझता है कि क्षणिक लाभ के लिए झूठ, छल या अन्याय का मार्ग अपनाना अन्ततः विनाशकारी है। इसलिए शिक्षा व्यक्ति को नैतिकता का सहारा देकर उसके चरित्र को स्थिर और पारदर्शी बनाती है।

शिक्षा केवल स्वयं की उन्नति का मार्ग नहीं दिखाती, बल्कि दूसरों की प्रगति में सहयोग करना भी सिखाती है। वह ''मैं'' से ''हम'' की यात्रा कराती है। और यही शिक्षा का सर्वोत्तम रूप है।

तप और संयम का स्रोत भी शिक्षा है। जीवन में इच्छाएँ अनन्त हैं और प्रलोभन हर कदम पर उपस्थित हैं, किन्तु शिक्षा विवेक देती है और संयम का बल प्रदान करती है। वही शक्ति है जो युवाओं को भोग-विलास की गलियों से निकालकर आत्मसंयम और दृढ़ता की ओर ले जाती है।

आज की युवा पीढ़ी को यही सन्देश है कि शिक्षा केवल डिग्री प्राप्त करने का साधन नहीं, बल्कि जीवन को

गुणों से आलोकित करने का माध्यम है। जो युवा विनय से युक्त हो, अपने कर्तव्यों का निष्ठापूर्वक पालन करे, सदाचार का आचरण करे, अपनी उन्नति के साथ दूसरों की प्रगति का कारण बने और तप-संयम को जीवन में धारण करे, वही सच्चे अर्थों में शिक्षित कहलाता है।

शिक्षा के बिना गुण केवल नाम मात्र रह जाते हैं; शिक्षा ही है जो उन्हें स्थिरता, गहराई और प्रभाव प्रदान करती है।

Explanation–A human life becomes meaningful only when it blossoms with humility, responsibility, good conduct, progress of self and others, austerity, and self-control. Yet without education, all these virtues are but hollow ornaments. Education is the soil that nourishes them and gives them permanence. Just as a seed sown on barren land cannot sprout, virtues cannot take root in an uneducated life.

True education cultivates humility from within. Humility is not the mere act of bowing, but the deep awareness that saves one from pride and teaches equality with all. Without education, humility remains a social formality.

So it is with duty. An uneducated person may demand rights but neglects responsibilities. Education awakens the understanding that life is not only about receiving but also about giving.

Education also forms the basis of good conduct. It teaches that fleeting gains through falsehood or

injustice ultimately destroy character. Thus education upholds morality and lends transparency to life.

Nor does it stop with self-progress–it transforms the “I” into “We,” urging one to grow along with society.

Even austerity and self-control are gifts of education. Desires are endless, temptations are everywhere; but education grants discernment and strengthens the will to resist. It empowers the youth to rise above indulgence and move towards discipline and self-mastery.

For today’s youth, the lesson is clear: education is not merely a certificate, but the force that illuminates life with virtues. A truly educated youth is one who is humble, dutiful, righteous, helpful to others, and disciplined in mind and body.

Without education, virtues remain only in name; with education, they gain depth, stability, and transformative power.

❀❀❀

23

स्त्री शिक्षा

पुप्फजुत्ता रुक्खोव्व, सोहंते सुसिक्खाजुदा इत्थी।
सफलतरुव्व सिक्खिदो, उववणोव्व सिक्खिद-कुडुंबो॥23॥

सम्यक् शिक्षा से युक्त स्त्री पुष्प युक्त वृक्ष के समान, शिक्षित नर फल युक्त वृक्ष के समान एवं शिक्षित परिवार उपवन के समान सुशोभित होते हैं।

A women graced with true education resembles a tree blossoming with flowers; an educated man, a tree abundant with fruits; and an educated family, a garden in full bloom.

व्याख्या–सम्यक शिक्षा का प्रभाव केवल शब्दों तक सीमित नहीं रहता, वह जीवन की पूरी काया-कल्पना बदल देता है। जब स्त्री शिक्षा से युक्त होती है, तब वह पुष्प युक्त वृक्ष की भाँति-परिवार को अपनी सुगन्ध से सुवासित करती है। फूल का सौन्दर्य और सुगन्ध केवल अपने तक सीमित नहीं रहते, वे वातावरण को भी आनन्दित करते हैं। उसी प्रकार शिक्षित स्त्री मर्यादा, संस्कार और कोमल भावनाओं से परिवार और समाज दोनों को सुख व प्रेरणा देती है।

शिक्षित पुरुष फल युक्त वृक्ष के समान होता है। वृक्ष अपनी छाया में थके हुए पथिक को विश्राम देता है, अपने फलों से भूख मिटाता है और अपने अस्तित्व से वातावरण

को शुद्ध करता है। ऐसा पुरुष केवल अपने लिए नहीं जीता, बल्कि दूसरों के लिए भी सहारा, मार्गदर्शक और रक्षक बनता है। शिक्षा से युक्त पुरुष ज्ञान, विवेक और परिश्रम से समाज को स्थिरता और सन्तुलन प्रदान करता है।

और जब पूरा परिवार शिक्षा से संस्कारित होता है, तब वह उपवन बन जाता है। उपवन का सौन्दर्य केवल किसी एक वृक्ष या किसी एक पुष्प से नहीं होता, बल्कि उसमें सब मिलकर सामञ्जस्य रचते हैं। उसी तरह शिक्षित परिवार में प्रेम, सहयोग, मर्यादा और सुसंस्कार मिलकर जीवन को मधुर बनाते हैं।

युवाओं को यह समझना चाहिए कि शिक्षा का प्रभाव कभी सीमित नहीं रहता। जब एक बेटी शिक्षित होती है, तो वह आने वाली पीढ़ियों को संस्कारित करती है। जब एक पुत्र शिक्षित होता है, तो वह परिवार और समाज का आधार बनता है। और जब पूरा परिवार शिक्षा को अपनाता है, तो उसका सौन्दर्य और सामञ्जस्य पूरे समाज को प्रेरणा देने लगता है।

शिक्षा जीवन में सुगन्ध, छाया और सौन्दर्य का सञ्चार करती है। यही उसका वास्तविक चमत्कार है।

Explanation–The impact of true education does not remain confined to words; it transforms the very form and spirit of life. An educated woman is like a flower that spreads fragrance through her family. The beauty and fragrance of a blossom do not remain

within itself–they delight the entire atmosphere. In the same way, an educated woman, through values, grace, and tender feelings, enriches not only her home but also inspires society at large.

An educated man is like a tree. A tree gives rest to the weary traveller in its shade, quenches hunger with its fruits, and purifies the very air around it. Such a man does not live for himself alone but becomes a support, a guide, and a protector for others. With knowledge, wisdom, and labour, the educated man gives balance and stability to society.

And when an entire family is shaped by education, it becomes like a blooming garden. The beauty of a garden does not rest on a single flower or a single tree, but on the harmony of all together. Similarly, in an educated family, love, cooperation, discipline, and culture unite to make life harmonious and sweet.

Youth must realise that the influence of education is never narrow. When a daughter is educated, she nurtures generations to come. When a son is educated, he becomes the foundation of family and society. And when the whole family embraces education, its beauty and harmony become an inspiration to the world.

Education fills life with fragrance, shelter, and beauty–this is its true wonder.

❀❀❀

24

जस्सिं कुले सिक्खिदा, णारी सक्कार-जुदा तो णिच्चं।
कुलो णंददि सग्गोव्व, सुह-संती पडिक्खणे तत्थ॥24॥

जिस कुल में नारी सुशिक्षित व संस्कारयुक्त होती है, तो वह कुल आनन्दित होता है, वहाँ प्रतिक्षण स्वर्ग के समान सुख-शान्ति होती है।

In the household where the woman is enlightened with education and values, joy abides; and in that home, every moment resonates with a serenity like that of heaven.

व्याख्या—जिस कुल में नारी सुशिक्षित और संस्कारों से युक्त होती है, वहाँ पूरा परिवार आनन्द से भर उठता है। शिक्षित नारी केवल ज्ञान का भण्डार नहीं होती, वह अपने आचरण से कुल की मर्यादा को बढ़ाती है, परिवार में समरसता लाती है और आने वाली पीढ़ियों के लिए आदर्श संस्कारों का बीज बोती है।

नारी परिवार की धुरी है। यदि वह शिक्षित हो, तो उसका प्रभाव घर की हर ईंट में, हर सम्बन्ध में और हर पीढ़ी में झलकता है। वह फूल की भाँति सुगन्ध बिखेरती है और दीपक की तरह अन्धकार को मिटाती है। उसकी शिक्षा केवल पुस्तकीय ज्ञान नहीं होती, बल्कि वह परिवार को संयम, करुणा और विवेक की शिक्षा देती है।

ऐसे घरों में वातावरण स्वर्ग के समान होता है। वहाँ कलह के स्थान पर शान्ति होती है, अव्यवस्था के स्थान पर मर्यादा होती है और अशान्ति के स्थान पर आनन्द होता है। जैसे बगीचे में एक सुगन्धित फूल पूरे वातावरण को महकाने के लिए पर्याप्त होता है, वैसे ही शिक्षित और संस्कारित नारी पूरा कुल स्वर्ग तुल्य बना देती है।

Explanation–In a family where the woman is educated and endowed with noble values, the entire household blossoms with joy. An educated woman is not merely a repository of knowledge; through her conduct she elevates the dignity of the family, brings harmony into relationships, and sows the seeds of culture for generations to come.

The woman is the axis of the household. If she is educated, her influence is reflected in every brick of the home, in every bond, and in every generation. She is like a flower spreading fragrance, like a lamp dispelling darkness. Her education is not confined to books–she teaches her family restraint, compassion, and wisdom through her very being.

Such homes radiate an atmosphere akin to heaven. Quarrels give way to peace, disorder yields to discipline, and unrest transforms into joy. Just as a single fragrant flower perfumes the entire garden, so does an educated and cultured woman transform her family into a heaven on earth.

❀❀❀

25

चुण्णद्देण रोडिगा, संभवो खिल्लणं अद्दमिदिगाइ।
जह तह बालवत्थाइ, सुसक्कारारोवणं तहा।।25।।

जैसे गीले आटे से रोटी और गीली मिट्टी से खिलौना बनाना सम्भव है, उसी प्रकार बाल्य अवस्था में ही सुसंस्कारों का आरोपण सम्भव है।

As soft dough can be shaped into bread and wet clay into toys, so too noble values can best be instilled during the tender years of childhood.

व्याख्या–जैसे गीले आटे से रोटी बनाना सरल है और गीली मिट्टी से मनचाहा खिलौना आकार लेना सहज है, उसी प्रकार जीवन की कोमल अवस्थाओं में सुसंस्कारों का आरोपण सहज और प्रभावकारी होता है। बचपन और युवावस्था की कोमल मनोभूमि में शिक्षा और संस्कार ऐसे ही अंकित हो जाते हैं जैसे गीली मिट्टी में छाप पड़ जाती है। कहा भी है–

बालपन संस्कार जो, मन में रहे समय।
जैसे पथ में अङ्कित, रेखा मिटि न जाय।।

यदि आटा सूख जाए, तो रोटी बेलना कठिन हो जाता है; यदि मिट्टी कठोर हो जाए, तो खिलौना आकार नहीं ले पाता। उसी प्रकार यदि जीवन की कोमल आयु शिक्षा और

संस्कारों से वञ्चित रह जाए, तो बाद में उसे दिशा देना कठिन हो जाता है। इसलिए समय रहते सही शिक्षा और श्रेष्ठ संस्कार देना ही परिवार और समाज की सबसे बड़ी जिम्मेदारी है।

जैसी शिक्षा बाल में, वैसा जीवन फूल।
शिक्षा की यह छाँव है, तपन बने न शूल॥

माता-पिता, शिक्षक और समाज मिलकर इस कोमल अवस्था को आकार देने वाले कुम्भकार हैं। यदि वे इस समय शिक्षा और संस्कार का जल और मृदु स्पर्श देंगे, तो यह मनुष्य जीवन सुन्दर, उपयोगी और लोकमङ्गलकारी बन जाएगा।

Explanation–Just as soft dough can easily be shaped into bread, and moist clay can be moulded into a toy, so too can noble values be instilled in the tender stages of life. Childhood and youth are like soft soil where education and culture leave deep and lasting impressions, just as a mark settles easily upon wet earth.

As it is said: What is sown in tender youth, abides throughout the years; Like lines carved upon the path, it never disappears.

If the dough dries, shaping it into bread becomes difficult; if the clay hardens, it resists the potter's hand. Similarly, if the tender years of life pass without proper education and values, it becomes exceedingly difficult to reshape character later. Thus, imparting

right knowledge and sound values at the right time is the greatest responsibility of family and society.

As the seed in childhood is, such with the blossom be; early shade of education spares the thorns of misery.

Parents, teachers, and the community together are like skilled potters. If they shape the tender clay of young life with the water of wisdom and the gentle touch of culture, that life will become beautiful, purposeful, and a blessing to the world.

❀❀❀

26

बंभी-सुंदरीण सग-पुत्तीण दायिदा उसहदेवेण।
सिक्खा त-मादि-सिक्खा-दायगो त्थी-समुद्धारगो।।26।।

तीर्थंकर श्री ऋषभदेव ने अपनी पुत्री ब्राह्मी व सुन्दरी के लिए शिक्षा प्रदान की थी। इसलिए वे आदि शिक्षा प्रदाता नारी के समुद्धारक कहे जाते हैं।

Since Lord Rishabhdeva bestowed education upon his daughters Brahmi and Sundari, he is revered as the pioneer who uplifted women through education.

व्याख्या–तीर्थंकर श्री ऋषभदेव ने जब अपनी पुत्री ब्राह्मी को अक्षर ज्ञान दिया एवं पुत्री सुन्दरी को अङ्क ज्ञान दिया तब इतिहास का एक स्वर्णिम अध्याय प्रारम्भ हुआ। उस समय तक नारी शिक्षा की परम्परा स्पष्ट नहीं थी। परन्तु जैसे ही ब्राह्मी-सुन्दरी ने लिपि व अङ्क का ज्ञान प्राप्त किया, वैसे ही यह सिद्ध हो गया कि नारी केवल गृहस्थ जीवन की शोभा नहीं, बल्कि ज्ञान और संस्कृति की धरोहर भी है। ब्राह्मी व सुन्दरी ने अपने अर्जित ज्ञान को आगे बढ़ाया, और इस प्रकार वह सम्पूर्ण स्त्री-समाज की प्रतिनिधि बन गई।

शिक्षा नारी के लिए केवल व्यक्तिगत उत्थान का साधन नहीं, बल्कि परिवार और समाज के उत्थान का आधार है। यदि नारी शिक्षित हो, तो वह बच्चों को संस्कार देती है, परिवार को दिशा देती है और समाज को मर्यादा देती है। यही कारण है कि विद्वान कहते हैं कि **''यदि एक**

पुरुष शिक्षित होता है, तो केवल एक व्यक्ति शिक्षित होता है; परंतु यदि एक नारी शिक्षित होती है, तो पूरा परिवार शिक्षित होता है।''

आज के युवाओं के लिए यह संदेश अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। हमारे समाज में कई बार लड़कियों की शिक्षा को गौण मान लिया जाता है, परन्तु सच्चाई यह है कि शिक्षित बेटी ही आने वाली पीढ़ी की संस्कार वाहक होती है। यदि युवावस्था में हम शिक्षा को केवल रोजगार पाने का साधन मानें, तो उसका दायरा सीमित हो जाएगा; पर यदि हम इसे जीवन को संस्कारित करने और समाज को ऊँचाई देने का साधन समझें, तो उसका प्रभाव अमर रहेगा।

कबीर भी नारी शिक्षा की महिमा बताते हैं–

नारी शिक्षा दीजिये, उजियारा संसार।
दीपक बन घर-आँगना, जग में फैले प्यार।।

इसलिए विद्वानों ने नारी को शिक्षा का प्रथम अधिकारी कहा है। भगवान ऋषभदेव की परम्परा हमें यह सिखाती है कि शिक्षा जब स्त्री तक पहुँचती है, तो वह केवल उसके जीवन को नहीं, बल्कि पीढ़ियों के जीवन को स्वर्ग तुल्य बना देती है।

Explanation–When the first Tirthankara, Lord Rishabhanath, imparted the knowledge of letters to his daughter Brahmi and knowledge of numbers to his daughter Sundari, a golden chapter in human history was written. Until that time, women's education was scarcely visible in tradition. But once Brahmi and

Sundari received the gift of script and numbers, it was established that woman is not merely the ornament of the household but also the preserver of culture and wisdom. Brahmi and Sundari became the symbol of the upliftment of womanhood, carrying the flame of knowledge forward for generations.

Education, for a woman, is not limited to personal growth; it becomes the foundation of family and societal upliftment. A mother, if educated, nurtures her children with values, directs her family toward harmony, and upholds the dignity of the community. This is why scholars have often declared: "If you educate a man, you educate an individual; if you educate a woman, you educate a family."

For today's youth, this message is vital. Too often, society places lesser importance on the education of daughters, yet the truth remains that an educated daughter is the true bearer of cultural inheritance. If the young see education only as a means of livelihood, its scope remains limited; but if they view it as the shaping of life and society, its impact becomes eternal.

As the poet once expressed:

"Educate the woman, the world is filled with light;
A lamp within the courtyard, spreading love in sight."

Thus, Lord Rishabhanath's legacy teaches us that when education reaches women, it transforms not only their lives but elevates the destiny of entire generations, creating a heaven-like atmosphere in society.

❀❀❀

27

वट्टि-णेहेहिं विणा, दीवपज्जलण-मसंभवो लोए।
इत्थी-सिक्खाइ विणा, सुसक्कार-संति-मज्जादा॥27॥

जैसे लोक में तेल व बाती के बिना दीप-प्रज्वलन असम्भव है; उसी प्रकार स्त्री शिक्षा के बिना संस्कार, शान्ति व मर्यादा असम्भव है।

As a lamp cannot shine without oil and wick, so too without the education of women, culture, peace, and dignity cannot flourish.

व्याख्या—जैसे दीपक में तेल और बत्ती के बिना उसका प्रज्वलन असम्भव है, वैसे ही नारी शिक्षा के बिना समाज में संस्कार, शान्ति और मर्यादा की स्थापना नहीं हो सकती। दीपक का अस्तित्व तभी सार्थक है जब उसमें बत्ती और तेल हो, अन्यथा वह केवल एक पात्र रह जाता है। उसी प्रकार स्त्रियों को शिक्षा से वञ्चित कर दिया जाए, तो परिवार और समाज अन्धकारमय हो जाते हैं।

नारी शिक्षा ही वह तेल है जो संस्कारों की ज्योति को प्रज्वलित करती है। जिस घर में स्त्री शिक्षित होती है, वहाँ सन्तानों में नैतिकता, आचरण में मर्यादा और वातावरण में शान्ति का सञ्चार होता है। शिक्षा रहित नारी अन्धकारमय दीपक के समान है, जिसका अस्तित्व तो है, पर वह किसी को प्रकाश नहीं दे सकती।

आज के युवाओं के लिए यह दृष्टान्त अत्यंत सार्थक

है। वे जिस समाज में रहते हैं, उसकी नींव माताओं के संस्कारों से जुड़ी होती है। यदि हम चाहते हैं कि हमारा राष्ट्र प्रगति करे, शान्ति और सदाचार से भरा हो, तो सबसे पहले हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि प्रत्येक कन्या को शिक्षा मिले। आज का युवा यदि अपनी बहनों और बेटियों की शिक्षा के महत्व को समझ ले, तो वह स्वयं एक ज्योति-पुञ्ज बनकर समाज में परिवर्तन ला सकता है।

तुलसीदास जी ने भी शिक्षा और संस्कार की महिमा का उल्लेख करते हुए कहा–

जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी तिन तैसी।
शिक्षा-दीप जले मन-माहीं, तबहि मिलै सुख-शान्ति प्रवाहीं॥

सत्य ही कहा है कि जैसे दीपक की ज्योति के बिना अन्धकार नहीं मिट सकता, वैसे ही नारी शिक्षा के बिना समाज में शान्ति और मर्यादा का आलोक नहीं फैल सकता।

Explanation–Just as a lamp cannot be lit without oil and a wick, so too are culture, peace, and discipline impossible without the education of women. The lamp has meaning only when it burns with light; otherwise, it remains but an empty vessel. In the same way, a society that denies education to women remains in the darkness of ignorance.

Women's education is the oil that kindles the flame of values. In a home where the woman is educated, the children learn morality, conduct is guided by discipline, and the atmosphere is imbued with peace.

A woman deprived of education is like a lamp without light–existing, yet unable to illuminate the world around her.

For today's youth, this metaphor carries deep relevance. The society in which they live is built upon the values instilled by mothers. If we desire a nation filled with peace, culture, and virtue, we must ensure that every daughter is educated. The young who recognize this truth become themselves the flame-bearers of a brighter tomorrow.

As Tulsidas hinted in his poetic wisdom:

"As the heart's vision, so the form divine appears; When the lamp of learning shines within, peace flows without, dispelling fears."

Thus scholars rightly affirm: just as the world cannot escape darkness without the lamp's flame, so can society never attain peace and dignity without the light of women's education.

❀❀❀

28

कण्णादो वुड्ढंतं, णारी सुसक्कारिदा कुले जम्मि।
सो कुलो वि सुरपुज्जो, कुल-देस-समिद्धिकारगा य॥28॥

जिस कुल में कन्या से लेकर वृद्धा तक सभी नारियाँ सुसंस्कारित होती हैं, वह कुल देवों के द्वारा भी पूज्य होता है। सुसंस्कारित नारियाँ कुल व देश की समृद्धिकारक होती हैं।

Where every woman, from the tender girl to the venerable elder, is adored with noble virtues, that family earns reverence even from the divine. Such virtuous women are the true architects of the prosperity of both family and nation.

व्याख्या–जिस परिवार में कन्या से लेकर वृद्धा तक सभी नारियाँ सुसंस्कारित और शिक्षित होती हैं, वह परिवार केवल अपने लिए नहीं, बल्कि समाज और राष्ट्र के लिए भी वरदान बन जाता है। ऐसी नारियाँ घर-घर में शान्ति का दीपक प्रज्वलित करती हैं, परिवार में स्नेह का वातावरण निर्मित करती हैं और समाज में सदाचार की धारा प्रवाहित करती हैं।

नारी केवल गृहस्थी का आधार ही नहीं, वह संस्कृति की प्रथम शिक्षिका है। उसकी गोद ही पहला विद्यालय है और उसकी वाणी ही प्रथम पाठशाला। यदि वह सुसंस्कारित है तो उसकी सन्तति भी संस्कारित होगी, और उसके संस्कारों

का प्रभाव पीढ़ियों तक बना रहेगा। इसीलिए कहा गया है कि **"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः"**–जहाँ नारी का आदर और सम्मान होता है, वहाँ देवताओं का वास होता है।

इतिहास हमें रानी लक्ष्मीबाई, सावित्रीबाई फुले और अहिल्याबाई होलकर जैसी विभूतियों की गवाही देता है। लक्ष्मीबाई की वीरता ने अंग्रेजों को कंपा दिया; पर उस साहस के पीछे संस्कार और शिक्षा की नींव थी। सावित्रीबाई ने स्त्री-शिक्षा का दीपक जलाया, जिससे आने वाली पीढ़ियों में हजारों नारियाँ ज्ञान से आलोकित हुईं। अहिल्याबाई ने शासन में मर्यादा और करुणा का आदर्श प्रस्तुत किया।

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि जब नारी सुसंस्कारित होती है, तो उसका प्रभाव घर से आगे बढ़कर राष्ट्र की नियति तक पहुँचता है।

आज के युवाओं के लिए यह समझना आवश्यक है कि नारी का सम्मान और उसकी शिक्षा, केवल एक सामाजिक मुद्दा नहीं, बल्कि राष्ट्र की आत्मा का निर्माण है। यदि हम अपनी बहनों और माताओं को संस्कार और अवसर देंगे, तो हमारा भविष्य सुरक्षित होगा। युवाओं को यह स्मरण रखना चाहिए कि एक सुसंस्कारित बहन उनके आदर्शों की प्रेरणा है, एक सुसंस्कारित पत्नी जीवन की सच्ची सहयात्री है, और एक सुसंस्कारित माता भविष्य की पूरी पीढ़ी की निर्माता है।

''नारी सुधारी सुधरै परिवार, नारी बिघारी बिगरै संसार।"

यह दोहा केवल परिवार की नहीं, सम्पूर्ण विश्व की व्यवस्था का उद्घोष है।

अतः यह निष्कर्ष है कि जहाँ–जहाँ नारी शिक्षित और संस्कारित होती है, वहाँ परिवार देवतुल्य बनता है, समाज समृद्ध होता है, और राष्ट्र की संस्कृति अक्षुण्ण रहती है।

Explanation–In a family where every woman–from the youngest daughter to the eldest matriarch–is educated and cultured, that family does not merely thrive for itself but becomes a blessing to society and the nation. Such women kindle lamps of peace in their homes, create an atmosphere of affection within families, and release streams of virtue into society.

A woman is not only the foundation of the household; she is the first teacher of culture. Her lap is the first school, and her words are the first lessons. If she is refined with values, her children inherit them, and her influence endures across generations. Hence the scriptures declare: **"Where women are honoured, there the gods delight."**

History bears witness in figures such as Rani Lakshmibai, Savitribai Phule, and Queen Ahilyabai Holkar. Lakshmibai's valor shook the colonial power; yet beneath her courage lay the foundation of values and training. Savitribai lit the torch of women's education, illuminating generations with knowledge. Ahilyabai embodied dignity and compassion in governance, becoming a symbol of cultural refinement.

These examples show that when women are

cultured, their influence transcends the household and shapes the destiny of a nation.

For today's youth, the lesson is clear: honouring and educating women is not merely a “social cause” but the very construction of a nation's soul. When a sister is cultured, she becomes an inspiration for ideals; when a wife is cultured, she is a true companion in life's journey; when a mother is cultured, she shapes the destiny of an entire generation.

As Tulsidas insightfully declared:

“When a woman is refined, the family thrives;
When she is degraded, the world declines.”

This couplet speaks not only of the family, but proclaims the fundamental harmony of the entire world.

Thus, wherever women are educated and cultured, the family becomes divine, society prospers, and the nation’s culture stands secure for ages to come.

❀❀❀

29

शिक्षा के भेद

चदुहा सिक्खा देहिग-ववहार-माणसज्झप्प-भेयादु।
ताहि विणा णो सफलीभूदा मासविहीणतुसोव्व॥29॥

देहिक (शारीरिक), व्यवहारिक, मानसिक व अध्यात्मिक शिक्षा के भेद से शिक्षा चार प्रकार की होती है। उनके बिना शिक्षा वैसे ही सफलीभूत नहीं होती जैसे दाल से विहीन छिलका।

Education is of four kinds–physical, practical or behavioural, mental and spiritual. Devoid of these, it remains barren, like a husk empty of its grains.

व्याख्या–शिक्षा का स्वरूप एकपक्षीय नहीं है, वह समग्र है। जब तक शिक्षा में शारीरिक, व्यवहारिक, मानसिक और आध्यात्मिक–ये चारों आयाम सन्तुलित रूप से न जुड़ें, तब तक शिक्षा अधूरी ही रहती है।

शारीरिक शिक्षा हमें कर्मशील और स्वास्थ्यवान बनाती है; व्यवहारिक शिक्षा समाज में मर्यादा, शिष्टाचार और सह-अस्तित्व का आधार देती है; मानसिक शिक्षा विचारों को गहन, तर्क को प्रखर और विवेक को सशक्त करती है; आध्यात्मिक शिक्षा आत्मा को पवित्र बनाकर जीवन को उच्चतम आदर्शों से जोड़ देती है।

यदि शिक्षा में इनका सन्तुलन न हो, तो वह केवल खोखला आवरण रह जाती है। जैसे डाल से छिलका हट जाने पर फल सुरक्षित नहीं रह सकता, वैसे ही एकांगी शिक्षा जीवन को असुरक्षित और अधूरा छोड़ देती है।

प्राचीन भारत में गुरुकुल के आचार्यों का आदर्श यही था। वे केवल शास्त्रार्थ ही नहीं कराते थे, बल्कि अपने शिष्यों को शरीर से बलवान, आचरण से विनीत, चिन्तन से गम्भीर और आत्मा से संयमी बनाते थे। एक बार गुरुकुल में विदेशी विद्वान् ने पूछा "आपके यहाँ शिक्षा का लक्ष्य क्या है?'' आचार्य ने उत्तर दिया–"ऐसा मनुष्य गढ़ना जो समाज का आधार बने, राष्ट्र का रक्षक बने और आत्मा का साधक बने।" यही शिक्षा की पूर्णता है।

आज के युवाओं को इस समग्रता को अपनाना चाहिए। यदि वे केवल शारीरिक बल पर गर्व करें, तो वह शिक्षा अधूरी है। यदि केवल बुद्धि तेज हो पर आचरण दूषित हो, तो वह शिक्षा घातक है। यदि आत्मा का विकास न हो, तो संपूर्ण ज्ञान भी व्यर्थ है।

युवा तभी सच्चे अर्थों में शिक्षित हैं जब वे स्वस्थ शरीर, शालीन व्यवहार, विवेकपूर्ण मन और पवित्र आत्मा के साथ समाज का मार्गदर्शन कर सकें।

'स विद्या या विमुक्तये'–वही शिक्षा है, जो बन्धन से मुक्त करे।

कहा भी है–**'शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्'**–शरीर ही धर्म का प्रथम साधन है।

सत्य यह है कि शिक्षा तब ही सार्थक है जब वह मनुष्य के चारों स्तरों को सन्तुलित रूप से विकसित करे। यह समग्र शिक्षा ही जीवन को पूर्णता, समाज को संस्कृति और राष्ट्र को शक्ति प्रदान करती है।

Explanation–Education is never a fragment; it is a wholeness. Unless it harmonises the four dimensions–physical, practical or behavioural, mental and spiritual–it remains incomplete.

Physical education gives strength and vitality. Practical education shapes courtesy, discipline, and social harmony. Mental education deepens thought, sharpens reasoning, and strengthens discernment. Spiritual education sanctifies the soul and directs life toward the loftiest ideals.

Education lacking any of these is but an empty shell. Just as a fruit stripped of its peel is left vulnerable, so too a life with one-sided learning remains unprotected and incomplete.

At Gurukul-ancient Indian heritage school teachers did not merely impart scriptures; they shaped their disciples into strong in body, refined in conduct, profound in thought, and restrained in spirit. When a foreign scholar once asked at Gurkul, "What is the aim of your education?" The master replied: "To

mould a man who shall be the foundation of society, the guardian of the nation, and the seeker of the soul." That is the fullness of education.

Modern youth must embrace this wholeness. To take pride only in physical power is folly; to be clever in intellect yet corrupt in conduct is dangerous; and to ignore the spirit is to render all knowledge vain. A truly educated youth is one who guides society with a healthy body, noble behaviour, discerning mind, and radiant soul.

"That alone is knowledge which leads to liberation."

And it is also said–

"The body is indeed the first instrument of righteousness."

True education is the balanced growth of all four dimensions of human life. Such integral education alone can bestow fulfillment upon the individual, culture upon society, and strength upon the nation.

❀❀❀

30

शारीरिक शिक्षा

वत्तस्स देह-सुदिढं, करिदुं कामवासणं संजमिदुं।
जोग-वायामादीण, सिक्खा देहिग-सिक्खा जाण।।30।।

आरोग्य के लिए, देह सुदृढ़ करने के लिए एवं कामवासना को संयमित करने के लिए योग-व्यायाम आदि की शिक्षा दैहिक शिक्षा जाननी चाहिए।

To preserve health, to fortify the body and to discipline sensual impulses, one must acquire physical education through practices like yoga and exercise.

व्याख्या—आरोग्य जीवन का प्रथम धन है। बिना स्वास्थ्य के न तो साधना सम्भव है, न अध्ययन, न समाज-सेवा और न ही आत्म-विकास। इसीलिए शारीरिक शिक्षा को प्राचीन काल से ही अत्यधिक महत्व दिया गया है।

शारीरिक शिक्षा का तात्पर्य केवल खेल-कूद या व्यायाम तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका उद्देश्य है—शरीर को रोगमुक्त और बलवान बनाना, देह को पवित्र और संयमित रखना और इन्द्रियों की वासनाओं पर संयम स्थापित करना।

योग, प्राणायाम, आसन, सूर्य नमस्कार आदि केवल व्यायाम नहीं, बल्कि आत्म-शुद्धि के साधन हैं। जब शरीर स्वस्थ होता है, तभी मन एकाग्र होता है और आत्मा की यात्रा सम्भव होती है।

चरक ऋषि ने आयुर्वेद में कहा है कि **''व्यायामात् लभते स्वास्थ्यं दीर्घायुष्यं बलं सुखम्''** व्यायाम से स्वास्थ्य, दीर्घायु, बल और सुख प्राप्त होते हैं। इतिहास में जैन वाङ्मय का योगदान अद्वितीय है। उन्होंने योग के द्वारा यह प्रतिपादित किया कि शारीरिक अनुशासन आत्मिक अनुशासन का द्वार है। ''आप पहले शरीर से मजबूत बनो, तभी आत्मा की शक्ति का अनुभव कर सकोगे।''

आज के युवाओं के सामने सबसे बड़ी चुनौती है– असंयमित जीवनशैली, अनियमित खानपान और स्क्रीन पर व्यस्त दिनचर्या। इसके परिणामस्वरूप शरीर रोगग्रस्त और मन चञ्चल होता जा रहा है।

यदि युवा व्यायाम, योग और संयमित जीवन अपनाएँ, तो न केवल उनका शरीर रोगमुक्त होगा, बल्कि मन भी स्थिर और बुद्धि भी प्रखर बनेगी। शारीरिक शिक्षा उन्हें यह सिखाती है कि **"स्वस्थ शरीर ही स्वस्थ विचारों का आधार है।"**

अतः शारीरिक शिक्षा का उद्देश्य मात्र शक्ति या बल नहीं है, बल्कि यह देह-शुद्धि, इन्द्रिय-निग्रह और आत्म-नियन्त्रण का मार्ग है। स्वस्थ शरीर के बिना स्वस्थ समाज और शुद्ध आत्म-जीवन की कल्पना भी अधूरी है।

Explanation–Health is the first wealth of life. Without sound health, neither study, nor service, nor spiritual pursuit is possible. Hence, physical education has been esteemed since ancient times. Its aim is not confined to mere exercise or sports, but extends to: making the body disease-free and vigorous, keeping

the body pure and disciplined, and restraining the impulses of desire and passion.

Yoga, pranayama, asanas, and sun salutations are not mere physical drills but gateways to inner purification. Only when the body is sound can the mind concentrate, and the soul proceed on its higher journey.

Charaka declared: "From exercise one gains health, long life, strength, and happiness."

Jain scriptures through Yoga, taught that bodily discipline opens the way to spiritual discipline. "You will understand the power of the soul only when you have a strong body."

The greatest challenge to today's youth is their irregular lifestyle, careless diet, and screen-bound routine. This breeds weakness in body and restlessness in mind.

If they adopt exercise, yoga, and moderation, not only will their bodies become disease-free, but their minds will steady and their intellect sharpen. Physical education teaches that "a sound body is the foundation of sound thought."

❀❀❀

31

सुकिड्डाहारो ताइ, अत्थ-सत्थ-संचालणं रक्खिदुं।
उइदसमं स-देससक्किदि-मज्जादं सिक्खावेज्ज॥31॥

सम्यक् क्रीड़ा उस दैहिक शिक्षा का आधार है। जीवों की रक्षा के लिए, अपने देश, संस्कृति व मर्यादा की रक्षा के लिए अस्त्र-शस्त्र का सञ्चालन एवं उचित श्रम भी सिखाना चाहिए।

Sports are the foundation of physical education. To safeguard life, and to defend one's nation, culture, and dignity, the discipline of arms and the dignity of labour must also be taught.

व्याख्या—सच्ची शारीरिक शिक्षा केवल व्यायाम और खेलों तक सीमित नहीं रहती। वह तो जीवन की उस सम्पूर्ण तैयारी का नाम है, जिसमें श्रम का आदर, संयम का अभ्यास और संस्कृति की रक्षा का सङ्कल्प निहित है। जब तक मनुष्य परिश्रमशील नहीं बनता और अपने देश व धर्म की मर्यादा की रक्षा का सामर्थ्य उसमें जाग्रत नहीं होता, तब तक उसकी शिक्षा अधूरी है। जीवों की रक्षा और संस्कृति के संरक्षण के लिए कभी-कभी बल और शौर्य की भी आवश्यकता पड़ती है। इसीलिए शस्त्र-विद्या को भी शिक्षा का एक अङ्ग माना गया है। यह शिक्षा मनुष्य को केवल बलवान ही नहीं बनाती, बल्कि उसके भीतर जिम्मेदारी और राष्ट्रभक्ति की ज्योति भी प्रज्वलित करती है।

इतिहास इसका साक्षी है। महाभारत का अर्जुन केवल धनुर्धर नहीं था, वह धर्म के लिए लड़ा और अपने अस्त्र को केवल न्याय और नीति की रक्षा में प्रयोग किया। इसी प्रकार महाराणा प्रताप ने अपने जीवन को श्रम, संयम और शौर्य से आलोकित किया। घास की रोटियाँ खाकर भी उन्होंने राष्ट्र और संस्कृति की गरिमा को बनाए रखा। उनका जीवन सिखाता है कि साधन भले ही अल्प हों, पर यदि शिक्षा समीचीन है, तो राष्ट्र की रक्षा सम्भव है।

आधुनिक जीवन शैली ने युवाओं को आलस्य और सुविधा-प्रियता की ओर झुका दिया है। किन्तु उन्हें स्मरण रखना चाहिए कि राष्ट्र की रक्षा केवल सैनिकों का ही नहीं, प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है। आत्मरक्षा का अभ्यास, श्रमशीलता का विकास और अनुशासन का पालन युवाओं को बलशाली ही नहीं, आत्मविश्वासी भी बनाता है।

तुलसीदास जी ने कहा–"पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं।" अर्थात् जो पराधीन है, उसे स्वप्न में भी सुख नहीं मिलता।

इस प्रकार शारीरिक शिक्षा का वास्तविक लक्ष्य केवल बल-प्राप्ति नहीं, बल्कि प्राणी मात्र की रक्षा, मर्यादा-रक्षा और संस्कृति- सम्वर्धन है। यही शिक्षा मनुष्य को वीरता, जिम्मेदारी और राष्ट्रप्रेम से परिपूर्ण बनाती है।

Explanation–True physical education is not confined to exercises or sports alone; it is the holistic training that honours labour, instills discipline, and awakens the resolve to protect culture. Until one learns to toil with dignity, to defend one's nation with

courage, and to uphold one's values with strength, education remains incomplete.

To protect life and preserve culture, valour is sometimes as necessary as compassion. Hence, the art of self-defense and the discipline of arms have always been considered integral to education. Such training does not merely create strength but lights within the heart, the flame of duty and patriotism.

History bears witness to this truth. Arjuna of the Mahabharata was not merely an archer; he was a warrior of righteousness, using his skill only in the service of justice. Maharana Pratap too embodied this ideal. Living on coarse bread yet upholding the honour of his land, he showed that resources may be scarce, but when education is infused with labour and valour, the nation can still stand unshaken.

Modern life has inclined today's youth toward ease and idleness, but they must remember that national defense is not the duty of soldiers alone, but of every citizen. Training in self-defense, embracing labour, and living with discipline will make them not only strong but also confident and noble. It is through effort and restraint that freedom and dignity are preserved.

Tulsidas declares: "In dependence, there is no happiness, not even in dreams."

Thus, the true purpose of physical education is not brute strength but the cultivation of courage, responsibility, and devotion to one's nation and culture. It is this education that shapes men and women into guardians of dignity and builders of a noble future.

❀❀❀

32

गुरुकुलं व करेज्ज सग-करेहि किसिं पसुपालणं सेवं।
अण्ण-सुकज्जाणि लोय-पसंसणीयाणि विज्जत्थी।।32।।

जिस प्रकार पूर्व में गुरुकुल में विद्यार्थी सर्व कार्य स्वयं करते थे, उसी प्रकार आज भी विद्यार्थियों को कृषि, पशुपालन, सेवा एवं लोक में प्रशंसनीय अन्य श्रेष्ठ कार्य भी अपने हाथों से करने चाहिए।

Just as in the ancient gurukulas students performed every task with their own hands, even today they must engage in farming, cattle care, service, and other noble works themselves.

व्याख्या–प्राचीन भारत के गुरुकुलों की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि वहाँ शिक्षा केवल ग्रन्थों और शास्त्रों तक सीमित नहीं थी, बल्कि जीवन के प्रत्येक आयाम में आत्मनिर्भरता और श्रमशीलता का अभ्यास कराया जाता था। विद्यार्थी स्वयं पाक करते, जल लाते, गोशाला की सेवा करते, आश्रम की स्वच्छता का ध्यान रखते और अपने आचार्य की आवश्यकताओं की पूर्ति भी स्वयं करते थे। यही श्रम उन्हें नम्रता, सहयोग और सामूहिकता के संस्कार प्रदान करता था।

आज जब आधुनिक शिक्षा प्रायः सुविधा-प्रियता और भोगवादी दृष्टिकोण की ओर ले जा रही है, तब पुनः वही गुरुकुल-आदर्श प्रासंगिक हो उठता है। विद्यार्थी यदि अपने

जीवन में कृषि, पशुपालन, वृक्षारोपण, स्वच्छता, और सेवा जैसे कार्यों को स्थान देते हैं, तो वे न केवल ज्ञानवान होंगे, बल्कि धरती से जुड़े, संवेदनशील और समाजोपयोगी भी बनेंगे।

इतिहास इसके उदाहरणों से भरा है। महात्मा गाँधी ने अपने फीनिक्स और साबरमती आश्रमों में यह नियम बनाया कि प्रत्येक साधक अपना कार्य स्वयं करेगा। वहाँ झाड़ू लगाना हो, रसोई का काम हो, अथवा खेतों में श्रम–सब कुछ सबके लिए समान रूप से अनिवार्य था। गाँधीजी का मानना था कि हाथ से काम करना ही आत्मा की सच्ची शिक्षा है। इससे आत्मसम्मान भी जन्म लेता है और दूसरों के श्रम के प्रति संवेदनशीलता भी।

जब युवा अपने हाथों से मिट्टी में बीज बोते हैं, तो अन्न के दाने का मूल्य समझते हैं; जब पशुओं की सेवा करते हैं, तो करुणा और धैर्य का संस्कार पाते हैं; जब वे वृक्षारोपण करते हैं, तो प्रकृति के साथ अपने अटूट बन्धन को महसूस करते हैं; और जब वे सेवा करते हैं, तो उनके भीतर सच्ची मानवता का उदय होता है। यही शिक्षा का वास्तविक स्वरूप है—केवल ज्ञान का अर्जन नहीं, बल्कि श्रम और सेवा का समन्वय।

महात्मा गाँधी ने भी चेताया—मिट्टी को खोदना और भूमि की देखभाल करना भूल जाना, स्वयं को भूल जाने के समान है।

अतः शिक्षा तभी सार्थक है जब वह विद्यार्थी को

आत्मनिर्भर और सेवाभावी बनाए। अन्यथा केवल पुस्तकीय विद्वत्ता जीवन को अपूर्ण ही छोड़ देती है।

Explanation–The glory of the ancient Indian gurukulas lay in the fact that education there was never confined to books alone. Students learned self-reliance through every activity of daily life. They cooked their own food, fetched water, tended cattle, maintained the cleanliness of the ashrama, and served their teachers with devotion. Such labour instilled in them humility, cooperation, and a spirit of community.

In contrast, much of modern education tends to breed dependence and comfort-seeking. This makes the gurukula ideal more relevant than ever. If students integrate farming, animal care, plantation, cleanliness, and service into their education, they will not only become knowledgeable but also rooted, compassionate, and socially responsible.

History offers shining examples. Mahatma Gandhi, in his Phoenix and Sabarmati ashrams, insisted that everyone–young and old-must do their own work. Sweeping the floors, cooking meals, working in the fields-nothing was exempt. For Mahatma Gandhi, "manual labour was the truest education of the soul." It gave dignity to the self and respect for the labour of others.

For today's youth, this lesson is indispensable. When they sow seeds with their own hands, they

realise the true worth of food; when they serve animals, they cultivate patience and compassion; when they plant trees, they rediscover their bond with nature; and when they engage in service, they awaken the essence of humanity within themselves.

Mahatama Gandhi warned: “To forget how to dig the earth and to tend the soil is to forget ourselves.”

Thus, education is meaningful only when it weaves together knowledge, labour, and service. Without this integration, bookish learning remains incomplete, while true learning blossoms into self-reliance and humanity.

❀❀❀

33

णिरोयी तेजवंतो, लावण्णजुत्तो देहसिक्खाए।
सुकम्मं करिदुं खमो, बंभुवासणाइ सिक्खत्थी॥33॥

शारीरिक शिक्षा से शिक्षार्थी निरोगी, तेजवान् व लावण्य से युक्त होता है तथा ब्रह्म की उपासना से सुकर्म करने में समर्थ होता है।

Through physical education the student becomes healthy, radiant, strong, and graceful; thereby he gains the strength to worship the Divine and to perform noble deeds.

व्याख्यान—शारीरिक शिक्षा केवल शरीर की बलिष्ठता तक सीमित नहीं रहती, आत्मा की साधना के लिए भी आधारशिला है। स्वस्थ तन ही स्वस्थ मन का आश्रय है, और स्वस्थ मन ही उच्च चरित्र और साधना का वाहक बनता है। जो विद्यार्थी अपने शरीर को व्यायाम, खेलकूद, और अनुशासन से सुदृढ़ बनाता है, वही जीवन के संघर्षों में स्थिर रह पाता है और सत्कर्म करने की सामर्थ्य अर्जित करता है।

इतिहास इस सत्य को पुष्ट करता है। रामचन्द्र जी के आरम्भिक जीवन में वर्णित है कि वे धनुर्विद्या, तैराकी और कठोर साधनों में निपुण थे। उनके तन की वह कठोरता ही

आगे चलकर उनकी तपस्या में साधक बनी। इसी प्रकार ग्रीक दार्शनिक प्लेटो भी कहते थे कि शिक्षा का एक अङ्ग शरीर को सामर्थ्यवान बनाना है, क्योंकि अशक्त शरीर में महान विचार भी टिक नहीं पाते।

एक छात्र प्रतिदिन व्यायाम से बचता था और केवल पुस्तकों में डूबा रहता था। जब परीक्षा का समय आया तो मानसिक तनाव से उसका स्वास्थ्य बिगड़ गया और वह साधारण प्रश्न का भी उत्तर न दे सका। उसके गुरु ने कहा—''बेटा, यदि तूने अपने शरीर को साधा होता, तो तेरा मन भी दृढ़ रहता।'' इस छोटे-से प्रसंग ने उसे जीवन का सबसे बड़ा पाठ दिया कि ज्ञान और स्वास्थ्य का संग ही शिक्षा की पूर्णता है।

प्रतिस्पर्धा और तनाव के युग में यदि युवा नियमित व्यायाम, योग और अनुशासित जीवन अपनाएँ, तो न केवल परीक्षा में बल्कि जीवन की हर परिस्थिति में वे विजयी बनेंगे। शरीर की शक्ति उन्हें आलस्य से दूर करेगी, मन की स्पष्टता उन्हें सद्गुणों से जोड़ेगी और आत्मबल उन्हें धर्ममार्ग पर स्थिर रखेगा।

कबीरदास जी ने ठीक ही कहा—

''सपने सुख न पाइए, जागे पाइए काम।
तन निरोगी जो रहे, तो सारा जग सुखधाम।।''

अतः शारीरिक शिक्षा कोई विलास नहीं, यह तो जीवन की यात्रा के लिए आवश्यक आधार है। यह तन को तेजवान, मन को स्थिर और आत्मा को ऊर्ध्वगामी बना देती है।

Explanation–Physical education is not confined to bodily strength; it forms the very foundation of spiritual discipline. A healthy body houses a healthy mind, and a healthy mind sustains noble character and devotion. The student who fortifies his body through exercise, discipline, and games acquires the stamina to face struggles and the capacity to engage in virtuous action.

History testifies to this. In his youth, Ramchandra trained in archery, swimming, and rigorous practices. The endurance thus cultivated enabled him to withstand severe penance. Similarly, Plato insisted that one part of true education must be the strengthening of the body, for lofty thoughts cannot dwell long in a weak frame.

A student once avoided exercise, immersing himself only in books. When examinations arrived, stress overwhelmed his frail health, and he could not answer even simple questions. His teacher told him: "Had you trained your body, your mind too would have remained steadfast." From that day the boy learned that wisdom without strength is incomplete.

For modern youth, this lesson is vital. In an age of competition and stress, regular exercise, yoga, and disciplined living provide not only examination success but resilience in life itself. Bodily vigour wards off lethargy, brings clarity of mind, strengthens virtues, and inner stamina secures steadfastness on the path of righteousness.

Kabir's couplet captures the essence:

"Happiness is not found in dreams but in action;

when the body remains healthy, the whole world becomes a dwelling of joy."

Thus, physical education is not a luxury but the indispensable ground of life's journey. It makes the body radiant, the mind steady, and the soul ascend toward the divine.

❀❀❀

34

देहसिक्खाए जणदि, सहणसत्ती पडिऊलठिदीसुं पि।
कुणिदुं तवं खमो सो, बालवत्थाइ गहिदा जेण॥34॥

शारीरिक शिक्षा से प्रतिकूल परिस्थितियों में भी सहनशक्ति उत्पन्न होती है। जिसने बाल्यावस्था से शारीरिक शिक्षा ग्रहण की है, वह तप करने में भी समर्थ होता है।

"Physical education develops endurance even in adverse conditions. He who has trained his body from childhood is also capable of performing austerities."

व्याख्या—सहन-शक्ति केवल मानसिक गुण नहीं, बल्कि शारीरिक शिक्षा का प्रतिफल भी है। जो शरीर कठिन अभ्यासों से गुजरता है, वही विपरीत परिस्थितियों में भी अडिग रहता है। बाल्यावस्था में प्राप्त शारीरिक शिक्षा जीवनभर सहारा बन जाती है—वह तपस्या, संयम और कठिन परिश्रम का पथ प्रशस्त करती है।

किसी के भीतर कोई सामर्थ्य अकस्मात् उत्पन्न नहीं होती। वह उसके बचपन के अनुशासन, साहस और अभ्यास के फलस्वरूप ही होती है।

प्रतिस्पर्धा, संघर्ष और असफलताओं का दौर जीवन में आएगा ही। किन्तु यदि बचपन से ही शरीर को अनुशासन में ढाला जाए—योग, खेल और कठिन अभ्यास करें, तो वे हर तूफान का सामना धैर्य से कर पाएँगे। परीक्षा का तनाव हो या जीवन की चुनौतियाँ—सहनशक्ति ही सफलता की चाबी बनेगी।

धीरज धरम मित्र अरु नारी। आपद काल परखिए चारी।

धैर्य वही दिखाता है जिसने उसे अभ्यास से अर्जित किया हो।

इस प्रकार, शारीरिक शिक्षा केवल तन की शक्ति नहीं देती, बल्कि तप, संयम और आध्यात्मिक उत्थान की राह को भी प्रशस्त करती है।

Explanation–Endurance is not merely a mental quality; it is also the fruit of disciplined physical training. The body that has been tempered through practice can withstand the harshest circumstances. Physical education in childhood becomes a lifelong asset, enabling one to walk the path of penance, restraint, and strenuous labour.

True strength is never born in an instant; it blossoms from the discipline, guidance nurtured in childhood.

Struggles, failures, and competitions are inevitable, but those who discipline their bodies from an early age-with yoga, sports, and rigorous practice-gain the endurance to face every storm. Be it exam stress or life's challenges, endurance becomes the key to success.

As Tulsidas said:

"Patience, virtue, friendship, and fidelity are tested in times of adversity."

And patience is displayed only by one who has cultivated it through practice.

Thus, physical education grants not only bodily strength but also paves the way for penance, self-restraint, and spiritual elevation.

❀❀❀

35

व्यवहारिक शिक्षा

विणय-भत्ति-सक्कारा, सुपुज्जाणं ववहारणेउण्णं।
लहिदुं कुणह सुसंगदि-मसक्का तेण विणा सिक्खा॥35॥

व्यवहार कुशलता प्राप्त करने के लिए पूज्य पुरुषों की विनय, भक्ति व सत्कार तथा अच्छी संगति करनी चाहिए। चूंकि उसके बिना शिक्षा अशक्य है।

"For acquiring practical wisdom and behavioural skill, one must cultivate humility, reverence, devotion, and noble company; without these, true education is impossible."

व्याख्या–सच्ची शिक्षा केवल पुस्तकों और प्रमाण पत्रों से नहीं आती। उसका सार व्यवहार-कुशलता में निहित है, और यह व्यवहार कुशलता तब ही आती है जब हम अग्रजों के प्रति विनम्रता रखें, उनका आदर करें, और श्रेष्ठ संगति अपनाएँ। विनय और भक्ति का संस्कार विद्यार्थी को ज्ञानवान ही नहीं, बल्कि प्रिय और समाजोपयोगी भी बनाता है। कहा है–

विद्या विवादाय धनं मदाय, शक्तिः परेषां परिपीडनाय।
खलस्य साधोर्विपरीतमेतत्, ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय॥

अर्थात्–दुष्ट के लिए विद्या केवल वाद-विवाद का साधन बनती है, धन अहङ्कार का कारण बनता है, और

शक्ति उत्पीड़न का। जबकि सज्जन के लिए यही विद्या विनय का कारण होती है, धन दान का, और शक्ति रक्षण का।

एक युवा छात्र केवल ग्रन्थ पढ़कर स्वयं को विद्वान समझता था। पर उसके व्यवहार में कठोरता थी। एक दिन उसने अहङ्कार में एक महात्मा से प्रश्न किया–''गुरुदेव, क्या मेरे पास अब सम्पूर्ण ज्ञान नहीं है?'' महात्मा ने मुस्कराकर उत्तर दिया–"पुस्तकें पढ़ लेने से नहीं, बल्कि पूज्य पुरुषों के चरण सान्निध्य में रहने से, उनकी विनय, भक्ति करने से ही ज्ञान जीवन्त होता है।'' इस वाक्य ने उसके जीवन की दिशा बदल दी।

सोशल मीडिया और तकनीक ने आज के युवाओं को जानकारी तो दे दी है, लेकिन विनय और सत्संग ही उस जानकारी को ज्ञान और फिर ज्ञान को व्यवहार कुशलता में बदलते हैं। यदि वे श्रेष्ठ मित्रों की संगति करें, तो उनमें स्वभावतः आदर, सहिष्णुता और सहयोग का विकास होगा।

अतः शिक्षा का सार तभी प्रकट होता है जब वह विनय, भक्ति और श्रेष्ठ संगति के साथ जुड़ी हो। यही संग शिक्षा को जीवंत और व्यवहार को कुशल बनाता है।

Explanation–True education is not measured by books or certificates; its essence lies in graceful conduct. This art of conduct blossoms only when the student bows to the wise, reveres them, and embraces noble companionship. Humility and reverence transform knowledge into wisdom, and wisdom into social harmony.

As it is said; “For the wicked, learning becomes a tool of debate, wealth a source of arrogance, and power a means of oppression; but for the virtuous, learning leads to humility, wealth to charity, and power to protection.”

A young student, having read many texts, considered himself learned. Yet his behaviour was harsh. One day, he arrogantly asked a sage, “Master, do I not now possess complete knowledge?” The sage replied gently, “Knowledge is not alive in books; it attains vitality and true depth only through the company of the virtuous and by humbly serving them with reverence and devotion.” These words transformed the boy’s life.

For today’s youth, this teaching is urgent. Technology has placed immense information at their fingertips, but only humility and noble company can turn information into wisdom and wisdom into skillful living. Surrounded by good mentors and virtuous friends, they naturally develop respect, patience, and cooperation.

Thus, education reveals its true worth only when it is joined with humility, devotion, and noble association. This alone makes knowledge alive and conduct skillful.

❀❀❀

36

पढेज्ज जीवणचरियं, पुराणं गहिदुं ववहारसिक्खं।
महाणराण पस्सेज्ज, सुहदिस्सं चलचित्त-माहो।।36।।

व्यवहार शिक्षा ग्रहण करने के लिए महापुरुषों का जीवनचरित्र व पुराण पढ़ना चाहिए अथवा उनके जीवन सम्बन्धित शुभ दृश्य वा चलचित्र देखने चाहिए।

To acquire practical wisdom in conduct, one must study the lives of great souls, or watch noble scenes and films based on their life stories.

व्याख्या—व्यवहार की शिक्षा केवल उपदेश से नहीं आती; वह आदर्श के दर्शन और अनुकरण से मिलती है। महापुरुषों का जीवन एक जीवित पाठशाला है। उनकी आत्मकथाएँ, चरित्र ग्रन्थ, और आज के युग में उनकी जीवन-कथाओं पर बने चलचित्र—ये सब हमें यह सिखाते हैं कि परिस्थितियाँ चाहे कितनी ही कठिन क्यों न हों, आदर्श और मर्यादा का पालन कैसे किया जाए।

महात्मा गाँधी कहते थे—

"मेरा जीवन ही मेरा संदेश है।"

उन्होंने दिखाया कि सत्य और अहिंसा का मार्ग केवल पुस्तकों में नहीं, बल्कि जीवन में चलकर दिखाना चाहिए।,

एक युवक कठिनाइयों में हतोत्साहित हो रहा था। उसके शिक्षक ने उसे रामचन्द्र जी का जीवन-चरित्र पढ़ने

को दिया। पढ़ते-पढ़ते उसकी आँखों में आँसू आ गए। उसने कहा-"रामचन्द्र जी ने इतनी विपत्तियों में भी अपना आत्मविश्वास नहीं छोड़ा, तो मैं क्यों हार मानूँ?" वही प्रेरणा उसके जीवन का मोड़ बन गई।

आज के युवा प्रेरणादायक पुस्तकों को पढ़कर, वृत्तचित्र और जीवनी-आधारित फिल्में देखकर, अपने जीवन की दिशा निर्धारित कर सकते हैं। जब वे "पद्मपुराण, पार्श्वनाथ चरित्र, अशोक रोहिणी चरित्र" जैसे चरित्र ग्रन्थ पढ़ते हैं या सुकुमाल मुनि, अनंगसरा, वृषभसेना की कहानियाँ देखते हैं, तो उन्हें पता चलता है कि शिक्षा केवल ज्ञान नहीं, बल्कि सही व्यवहार और मूल्यवान निर्णयों में उतरना है।

सज्जनों का जीवन स्वयं मार्गदर्शक है-जैसे नौका पत्थरों पर भी पार हो जाती है।

अतः, व्यवहार-कुशलता के लिए महापुरुषों के जीवन का अध्ययन और उनके आदर्शों का दर्शन अनिवार्य है। वही जीवन को गहराई और संस्कृति को स्थिरता प्रदान करता है।

Explanation–Conduct cannot be taught merely through lecture; it is imbibed by witnessing and emulating ideals. The lives of great men are living classrooms. Their biographies, character-sketches, and, in modern times, films and documentaries on their journeys–all show us how to uphold values amidst challenges.

Mahatma Gandhi used to say: "My life is my message." He demonstrated that truth and non-violence are not just to be spoken of but to be lived.

A young man, disheartened by failures, was given the biography of Ramchandra by his teacher. As he read, tears filled his eyes. He said, “If Ram could remain confident through such trials, why should I surrender to despair?” That inspiration turned his life's direction.

For today’s youth, this lesson is crucial. By reading inspiring biographies like Padmapuran, Parshvanath Charitra, Ashok-rohini Charitra and by watching stories like Sukumal, Anangsara or Vrishabha-Sena, they realise that education is not just about information, but about values embodied in conduct and noble choices.

“The conduct of saints itself becomes the path; even stones can float upon it.”

Thus, the study and visualisation of great lives is indispensable for acquiring skill in conduct. It provides depth to one's life and stability to culture.

❀❀❀

37

गुणीणं गुणचिंतणं, सेवं करेज्ज सुगुणं पप्पोदुं।
ववहारसिक्खं विणा, जीवणं घिदरहिदखीरं व।।37।।

सुगुणों को प्राप्त करने के लिए गुणीजनों के गुणों का चिंतन व सेवा करनी चाहिए। व्यवहारशिक्षा के बिना जीवन वैसे ही है, जैसे घृत के बिना दुग्ध।

To acquire virtues, one must contemplate the qualities of teachers and serve them. Without practical wisdom in conduct, life is like milk without ghee."

व्याख्या—गुणों की प्राप्ति केवल पुस्तकों के अध्ययन से नहीं होती, बल्कि वह गुणीजनों के संग, उनके गुणों के चिन्तन और उनकी सेवा से विकसित होती है। गुरु की छाया में रहकर शिष्य न केवल ज्ञान अर्जित करता है, बल्कि उनके जीवन से व्यवहार की सूक्ष्म शिक्षा भी ग्रहण करता है।

जिस प्रकार दूध अपने भीतर अमूल्य तत्व छिपाए रहता है, परन्तु घृत रूप में प्रकट होने पर ही पूर्ण उपयोगी बनता है, उसी प्रकार जीवन भी व्यवहार-शिक्षा से ही सार्थक और सुगंधित बनता है। बिना व्यवहार-शिक्षा का जीवन मात्र कच्चे दूध के समान है—जिसमें शक्ति तो है, पर रस और महत्त्व छिपा रहता है।

एक बालक अपने गुरु की सेवा में रहता था। वह उनके चरण दबाता, पानी लाता, और विनम्र भाव से प्रश्न पूछता।

धीरे-धीरे उसमें ऐसे गुण आ गए कि लोग कहते–"इसमें अपने गुरु की झलक है।" उसकी विद्या मात्र पढ़े हुए श्लोकों से नहीं, बल्कि गुरु की संगति और सेवा से चमकी।

आज के समय में गूगल, और किताबें जानकारी तो दे सकती हैं, पर गुरु का संग और सेवा ही वह शक्ति है, जो जानकारी को व्यवहार और गुणों में बदल देती है। यदि युवा अपने मार्गदर्शकों का आदर करें, उनके आदर्शों का चिन्तन करें, और उनकी सेवा करें, तो उनमें स्वाभाविक रूप से धैर्य, नम्रता और सद्गुण प्रकट होंगे।

अतः, गुणीजनों का चिन्तन और सेवा ही गुणों की आधारशिला है, और व्यवहार-शिक्षा जीवन को दूध से घृत के समान पूर्णता और मधुरता देती है।

Explanation–Virtues are not obtained merely by reading books; they blossom through the company of teachers, by reflecting on their qualities, and serving them with devotion. In the presence of a Guru, the disciple not only acquires knowledge but also imbibes subtle lessons of conduct.

Just as milk contains hidden richness but reveals its true essence only when churned into ghee, in the same way, life finds fragrance and fulfillment only through the discipline of practical conduct. Without it, life remains like raw milk-potentially powerful, yet incomplete.

A boy lived in the service of his master–massaging his feet, fetching water, and humbly asking questions.

Slowly, he became so refined that people said, "He reflects his Guru." His learning did not shine through memorized verses alone but through the virtues absorbed in service and proximity.

Google And books may provide information, but only the company and service of noble teachers can transform information into conduct and virtues. By revering their mentors, contemplating their qualities, and serving them, young people naturally develop patience, humility, and character.

Thus, the contemplation and service of virtuous form the foundation of virtues, and behavioural education refines lif,e just as milk is perfected into ghee.

❀❀❀

38

ववहारसिक्खाइ वच्छल्लं सच्चं मित्तिं दयं लहदि।
सहिण्हुत्त-मुवयारं, सुइं तह संजमं सोहदं॥38॥

व्यवहारशिक्षा से जीव वात्सल्य, सत्य, मैत्री, दया, सहिष्णुता, उपकार, शुचिता, संयम और सौहार्द को प्राप्त करता है।

Through practical (behavioural) education, the soul acquires affection, truthfulness, friendship, compassion, tolerance, benevolence, purity, self-restraint, and harmony.

व्याख्या–व्यवहार-शिक्षा का वास्तविक फल केवल ज्ञान नहीं, बल्कि गुणों का प्रस्फुटन है। जब शिक्षा सही मार्ग पर ले जाती है, तब उसमें से वात्सल्य, सत्य, मैत्री, दया-करुणा, सहिष्णुता (सहनशीलता), उपकार (परोपकार की भावना), शुचिता (पवित्रता), संयम (संयत जीवन), और सौहार्द (सामंजस्य) जैसे श्रेष्ठ गुण प्रकट होते हैं।

गुण ही वह दीपक हैं जो जीवन को आलोकित करते हैं। इनके बिना शिक्षा अधूरी है। यदि शिक्षा से केवल पद और प्रतिष्ठा मिले लेकिन इनमें से कोई गुण न आए, तो वह शिक्षा केवल बोझ है।

एक धनी व्यापारी ने अपने पुत्र को बड़े विद्यालय में पढ़ने भेजा। वह लौटा तो विद्वान था, पर अहङ्कारी और

कठोर। एक दिन वह एक भूखे भिक्षुक को अपशब्द कह बैठा। तब उसके पिता ने कहा–"पुत्र! तुझे जो शिक्षा मिली है, उसने तुझे विद्वान तो बनाया, पर दयालु नहीं। याद रखो–बिना दया और सहिष्णुता के विद्या केवल पत्थर है। यह वाक्य सुनकर पुत्र का हृदय बदल गया।

आज के युवाओं के लिए यह शिक्षा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। आधुनिक जीवन की दौड़ में वे सफलता तो पा सकते हैं, पर यदि उनके भीतर दया, मैत्री और सौहार्द न हो, तो वे भीतर से खाली रह जाते हैं। जो विद्यार्थी सहिष्णु और उपकारी हैं, वही समाज के लिए आदर्श बनते हैं।

अतः, व्यवहार-शिक्षा का चरम फल वही है जब उसमें से मानवीय गुणों की मधुर सुगन्ध प्रकट हो।

Explanation–The true fruit of education is not mere knowledge, but the blossoming of virtues. When education is rightly directed, it yields affection, truth, friendship, compassion, tolerance, benevolence, purity, self-control, and harmony.

Virtues are the lamps that illuminate life. Without them, education remains incomplete. If education grants status and prestige but does not instill compassion and tolerance, it is but a burden.

A wealthy merchant sent his son to a prestigious academy. The son returned knowledgeable but arrogant and harsh. One day he insulted a hungry beggar. The father said, "My son! Your education has

made you learned, but not compassionate. Remember-without mercy and tolerance, learning is mere stone." That sentence transformed the boy's heart.

For today's youth, this is vital. In the race of modern life, they may achieve success, but without compassion, friendship, and harmony, they remain empty within. Those students who practice tolerance and benevolence become the true role models of society.

Thus, the ultimate fruit of behavioural education is realised only when it blossoms into the fragrance of humane virtues.

❀❀❀

39

फुडदि उवयारभावो, विणय-चागेहि ववहारसिक्खाइ।
तच्चचिंतणं पूया, अज्झप्प-विज्जाइ सुभावा॥39॥

व्यवहारशिक्षा से विनय व त्याग के साथ उपकार भाव प्रकट होता है एवं अध्यात्म विद्या से तत्त्वचिन्तन व पूजादि शुभ भाव प्रकट होते हैं।

Practical (behavioural) education awakens humility, renunciation, and the spirit of cooperation; spiritual knowledge inspires reflection on truth, worship, and noble sentiments.

व्याख्या—शिक्षा के दो रूप हैं—व्यवहार और अध्यात्म। व्यवहार-शिक्षा जीवन को सामाजिक बनाती है। इससे मनुष्य में विनय (नम्रता), त्याग (स्वार्थ-त्याग), और सहयोग भाव (सर्वहित की प्रवृत्ति) जाग्रत होते हैं।

अध्यात्म-शिक्षा जीवन को ऊर्ध्वगामी बनाती है। इससे तत्व-चिन्तन, पूजा, साधना, और अन्तःकरण में शुभभावनाएँ उत्पन्न होती हैं।

जिस व्यक्ति के जीवन में दोनों का सन्तुलन होता है, वही वास्तव में शिक्षित कहलाता है। केवल व्यवहार की शिक्षा मनुष्य को समाजोपयोगी तो बना सकती है, पर आत्मा से जोड़े बिना वह अधूरी रहती है। और केवल अध्यात्म

की शिक्षा, बिना व्यवहारिक विनय और सहयोग के, जीवन को असंतुलित बना देती है।

एक गाँव में दो भाई रहते थे। बड़ा भाई केवल व्यवहारिक था–सबकी मदद करता, पर कभी प्रार्थना या ध्यान में नहीं बैठता। छोटा भाई केवल पूजा-पाठ करता, पर घर-परिवार या पड़ोसियों की चिन्ता न करता। दोनों में विवाद हुआ। तब उनके गुरु ने कहा–"तुम दोनों अधूरे हो। शिक्षा का आदर्श वही है जिसमें व्यवहार और अध्यात्म दोनों का समन्वय हो।" धीरे-धीरे दोनों भाइयों ने एक-दूसरे से सीखा और सम्पूर्ण बने।

आज युवा यदि केवल करियर, सफलता और टेक्नोलॉजी तक सीमित रहेंगे, तो जीवन सूखा रहेगा। और यदि केवल पूजा-पाठ में लगे रहेंगे, तो समाजोपयोगी कार्यों में पिछड़ जाएँगे। सही शिक्षा वही है जिसमें नम्रता और सहयोग के साथ गहन चिन्तन और अध्यात्म भी हो।

Explanation–Education has two aspects-practical and spiritual.

Practical education makes life socially meaningful, cultivating humility, selflessness, and cooperation.

Spiritual education elevates the soul, inspiring reflection, worship, and noble intentions.

A truly educated person balances both. Practical learning can make a person useful to society but without spirituality, it remains incomplete; spirituality without humility and cooperation becomes lopsided.

In A village lived two brothers. The elder was practical-always helping others, but never engaging in prayer. The younger immersed himself in rituals, but neglected family and neighbours. Their Guru said, “Both of you are incomplete. True education is harmony of the practical and the spiritual.” Slowly, they learned from each other and became whole.

For today’s youth, this balance is essential. If they focus only on careers, success, and technology, life becomes dry. If they confine themselves only to rituals, they lag in social usefulness. The ideal education blends humility and cooperation with deep reflection and spirituality.

❀❀❀

40

ववहारसिक्खाइ साहिमाणो धीरं वीरत्तं फुडदि।
उप्पज्जेदि सहजोग-भावं अण्णाणं करुणाइ॥40॥

व्यवहारशिक्षा से स्वाभिमान, धीरता व वीरता प्रकट होती है। (व्यवहार शिक्षा से समुत्पन्न) करुणा भाव से अन्यों के लिए सहयोग का भाव उत्पन्न होता है।

Practical (behavioural) education awakens self-respect, patience, and courage. From the compassion it cultivates, arises the spirit of cooperation with others.

व्याख्या—व्यवहारिक शिक्षा का लक्ष्य केवल बाहरी आडम्बर नहीं, बल्कि भीतर के गुणों का विकास है। जब व्यक्ति व्यवहार की सही शिक्षा ग्रहण करता है, तो उसके जीवन में स्वाभिमान, धैर्य और वीरता जैसे दिव्य गुण उदित होते हैं। स्वाभिमान उसे आत्मविश्वासी बनाता है, धैर्य उसे विपत्तियों में दृढ़ रखता है और वीरता उसे कठिनाइयों से जूझने का साहस देती है।

किन्तु यह शिक्षा केवल आत्म-केंद्रित नहीं होती। इसके गर्भ से जब करुणा का भाव प्रकट होता है, तो वही करुणा दूसरों के लिए सहयोग-भाव में बदल जाती है। शिक्षा का यही वास्तविक सौन्दर्य है—वह हमें न केवल अपने लिए मजबूत बनाती है, बल्कि दूसरों के लिए सहारा बनने की प्रेरणा भी देती है।

किसी गाँव में भयङ्कर बाढ़ आई। कई लोग निराश होकर अपने प्राण बचाने में लगे। लेकिन एक युवक, जिसने व्यवहारिक शिक्षा के साथ करुणा का संस्कार पाया था, उसने अपनी जान की परवाह न करते हुए कई बच्चों और बुजुर्गों को नाव से सुरक्षित किनारे पहुँचाया। जब उससे पूछा गया–"तुम्हें यह साहस कहाँ से मिला?" तो उसने उत्तर दिया–"मेरी शिक्षा ने मुझे सिखाया है कि स्वाभिमान केवल तब सार्थक है जब वह दूसरों की रक्षा में लगे।

आज के युवाओं के लिए यही शिक्षा अमूल्य है। करियर और सफलता का स्वाभिमान आवश्यक है, परन्तु उस स्वाभिमान को सहयोग और करुणा से गुँथा होना चाहिए। तभी वे समाज में आदर्श बन सकते हैं।

कबीर ने कहा है–

"साहस से कठिनाई जीती, करुणा से जग जीता।"

यानी, वीरता से हम कठिनाइयों को परास्त करते हैं, और करुणा से हम संसार का हृदय जीतते हैं।

Explanation–The goal of practical or behavioural education is not mere external polish, but the inner growth of virtues. It instills self-respect that makes one confident, patience that sustains one in adversity, and courage that equips one to face challenges.

Yet, this education is not self-centered. From its womb arises compassion, and from compassion springs the noble spirit of helping others. This is

the true beauty of education-it makes us strong for ourselves and also a support for others.

In a village struck by floods, most people struggled only to save themselves. But a young man, who had imbibed both practical training and compassion, risked his life to ferry children and elders to safety. When asked where he found such courage, he replied, “My education taught me that self-respect finds its meaning only when used to protect others.”

For today’s youth, this lesson is invaluable. Self-respect born of career and success is necessary, but it must be interwoven with compassion and cooperation. Only then can they become ideals in society.

Kabir aptly said:

“With courage one conquers difficulties, with compassion one conquers hearts.”

Thus, true practical education harmonises inner strength with outward service.

❀❀❀

41

समुइद-णीदिं रीदिं, पालिदुं खमो ववहारसिक्खाइ।
संवेगं जणेदुं च, समिदुं आवेग-मुव्वेगं॥41॥

व्यवहारशिक्षा से जीव समुचित नीति व रीतियों का पालन करने में समर्थ होता है। वह सम्वेग उत्पन्न करने में एवं आवेग व उद्वेग का शमन करने में भी समर्थ होता है।

"Practical or behavioural education enables one to follow proper principles and traditions. It cultivates discipline and equips the mind to calm impulses and disturbances."

व्याख्या–व्यवहार शिक्षा केवल बाहरी शिष्टाचार नहीं सिखाती, बल्कि भीतर की सन्तुलन-शक्ति को भी जाग्रत करती है। यह हमें समाज की नीति और परम्परा के साथ जोड़ती है और जीवन की धारा को अनुशासन की ओर मोड़ती है। जब व्यक्ति व्यवहार शिक्षा से संस्कारित होता है, तो वह रीति-नीति का पालन सहजता से करता है, और उसका जीवन समाज के लिए आदर्श बनता है।

परन्तु इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण उसका मानसिक संतुलन है। व्यवहार शिक्षा हमें आवेग और उद्वेग के तूफानों से बचना सिखाती है। क्रोध, लोभ या वासनाओं के क्षणिक आवेग जब हमें अस्थिर करना चाहते हैं, तब यही शिक्षा संयम का दीपक जलाती है।

व्यवहार शिक्षा से व्यक्ति में संवेग अर्थात् धर्म और धर्म के कार्यों में उत्साह और पूज्य पुरुषों में अनुराग उत्पन्न होता है। व्यवहार शिक्षा से युक्त जीव संसार से भयभीत होकर बुरे कर्म या पाप कार्यों में संलिप्त नहीं होता।

एक राजा अत्यन्त क्रोधी था। जब भी दरबार में कोई गलती करता, वह तुरन्त दण्ड दे देता। परन्तु एक दिन उसके गुरु ने कहा–"राजन्, शिक्षा का फल तभी है जब तुम क्रोध को जीत सको।" धीरे-धीरे उसने व्यवहार शिक्षा को अपनाया, और जब अगली बार किसी सेवक से भूल हुई, उसने संयमित होकर दण्ड देने के स्थान पर मार्गदर्शन किया। इससे उसका राज्य अधिक संगठित हुआ और प्रजाजन अधिक प्रसन्न हुए।

आधुनिक जीवन में प्रलोभन, आवेग और तनाव हर ओर हैं। केवल वही युवा सफल हो सकते हैं, जो संयम और सन्तुलन के साथ नीतियों का पालन करें। सफलता की ऊँचाईयाँ केवल ज्ञान से नहीं, बल्कि धैर्य और शान्ति से ही टिकाऊ बनती हैं।

Explanation–Practical or behavioural education does not merely teach outward etiquette; it awakens the inner strength of balance. It ties us to the principles and traditions of society, steering life toward discipline and harmony. A person nurtured by this education follows norms naturally, and his life becomes exemplary for others.

More importantly, it grants mental equilibrium. When waves of anger, greed, or passion attempt to disturb us, practical or behavioural education lights the lamp of restraint, guiding us through storms of impulse.

Through behavioural education, a person develops samvega–that is, enthusiasm for righteous deeds, and deep devotion towards the venerable ones. Such a person, being fearful of the world, does not engage in sinful acts or evil deeds.

A king, known for his fiery temper, punished courtiers instantly for mistakes. One day, his Guru told him, “Education bears fruit only when you can master anger.” Slowly, the king embraced practical training. The next time a servant erred, he responded with guidance instead of punishment. His kingdom grew more united, and his people more content.

Modern life is filled with temptations, impulses, and stress. Only those who blend discipline with patience can sustain true success. Knowledge may give rise to achievement, but patience and calm preserve it.

❀❀❀

42

मानसिक शिक्षा

सुवियार-चिंतणेणं, विगासो मणोसत्तीए पुण पुण।
जलरुहाइ-पुप्फाणं, दिवायर-किरणेहिं जह तह।।42।।

जिस प्रकार सूर्य की किरणों से कमलादि पुष्पों का विकास होता है, उसी प्रकार पुनः पुनः सुविचारों के चिन्तन से मन:शक्ति का विकास होता है।

Just as the lotus blossoms unfold by the touch of the sun's rays, so too the mind’s strength develops through repeated contemplation of noble thoughts.

व्याख्या–जैसे सूर्य की स्वर्णिम किरणें जल में पड़े कमलों को खोल देती हैं और उनमें जीवन का सञ्चार करती हैं, वैसे ही उच्च और पवित्र विचार मानव हृदय की सुप्त शक्तियों को जगाते हैं। सुविचार बार-बार चिन्तन करने से मन की शक्ति पुष्पित-पल्लवित होती है। मन को सही दिशा देना ही शिक्षा का गूढ़ सार है ।

एक साधक प्रतिदिन अपने जीवन में एक वचन का चिन्तन करता था–“मैं सत्य का पथिक हूँ।’’ प्रारम्भ में वह केवल शब्दों की पुनरावृत्ति थी, लेकिन धीरे-धीरे वे शब्द उसकी आत्मा में उतर गए। उसका मन दृढ़ हुआ, उसकी वाणी निर्मल हुई और उसके कर्म सत्य की नींव पर टिक

गए। सुविचारों की यह पुनरावृत्ति ही उसके व्यक्तित्व का आधार बन गई।

जब आप लगातार अच्छे विचारों, सकारात्मक पुस्तकों और श्रेष्ठ आदर्शों का चिन्तन करेंगे, तभी आपका व्यक्तित्व खिलकर समाज को सुगन्धित करेगा। अन्यथा, यदि नकारात्मक विचारों के अन्धकार में पड़े रहे, तो जीवन की शक्ति क्षीण हो जाएगी।

भारतीय साहित्य में भी कहा गया है–

चिंतनं पुण्यवचनं, चिंतनं पुण्यकर्मणाम्।
चिंतनं हि महापुण्यं, तेन नन्दन्ति मानवाः॥

अर्थात् पुण्यवचनों और पुण्यकर्मों का चिन्तन ही महान पुण्य है, जिससे मनुष्य जीवन में आनन्द प्राप्त करता है।

Explanation–The golden rays of the sun awaken the sleeping lotus, filling it with life and fragrance. In the same way, lofty and noble thoughts awaken the dormant powers of the human mind. It is through repeated reflection on such thoughts that inner strength blossoms, and education finds its highest expression-not in external polish but in guiding the mind's direction.

A seeker would meditate daily on one sentence: "I am a traveller of truth."At first it was mere repetition. But gradually, the words seeped into his being. His mind grew firm, his speech pure, and his actions

steady upon the foundation of truth. Repetition of noble thought became the very architecture of his personality.

Immersed daily in positive ideals, noble literature, and great examples, the personality of youth will shine forth like the lotus in sunlight. Without such thoughts, the mind weakens under the shadow of negativity.

An ancient maxim declares:

"Reflection on noble words and noble deeds is itself a supreme virtue; through it, human beings find joy."

Thus, noble thoughts are to the mind what sunlight is to the lotus–illumination, growth, and blossoming.

❀❀❀

43

सव्वरीणाहुदयेण, जह विहसेदि कइरविणी लोयम्मि।
तह कसाय-समणेणं, मणोसत्ती अवि जीवाणं।।43।।

जिस प्रकार लोक में चन्द्रमा के उदय से कुमुदनी खिलती है, उसी प्रकार कषायों के शमन से जीवों की मन:शक्ति भी विकसित होती है।

Just as the water-lily blossoms not by the sun but by the rising of the moon, so too the mind's strength develops only through the pacification of passions.

व्याख्या–प्रकृति का नियम है कि कुमुदिनी (रजनीगन्धा) सूर्य के प्रकाश से नहीं, अपितु चन्द्रमा की शीतल किरणों से खिलती है। उसकी कोमलता और शान्ति को चन्द्र की शीतलता ही पुष्पित करती है। इसी प्रकार मनुष्य के हृदय की शक्ति बाहरी तामसिक आवेगों से नहीं, बल्कि कषायों क्रोध, मान, माया और लोभ-के शमन से ही विकसित होती है।

व्यवहारिक रूप से देखें, जब मनुष्य कषायों पर विजय पाता है, तभी उसकी आन्तरिक शक्ति खिले हुए फूल की भाँति प्रकट होती है। क्रोध से दया, लोभ से सन्तोष, मान से विनय और माया से सच्चाई जब उदित होते हैं, तब उसका व्यक्तित्व तेजस्वी बन जाता है।

आज के युवाओं के लिए यही सन्देश है। करियर और

जीवन की प्रतिस्पर्धा में अक्सर वे ईर्ष्या, क्रोध और लोभ से घिर जाते हैं। परन्तु इन्हें शमन करने से ही उनकी वास्तविक शक्ति और प्रतिभा खिल सकती है। जैसे चन्द्रमा शान्ति से अन्धकार हरता है, वैसे ही संयमित मन जीवन को उज्ज्वल करता है।

Explanation–In nature, the kumudini (night-lily) does not bloom under the blazing sun, but under the cool rays of the moon. Its delicacy is nurtured not by heat, but by calmness. Similarly, the powers of the human mind do not blossom amidst anger, pride, deceit, and greed, but only when these passions are subdued. When anger gives way to compassion, greed to contentment, pride to humility, and deceit to truth, then the inner lotus of the soul unfolds in radiant beauty.

For today’s youth, this is vital. In the race of career and ambition, anger, jealousy, and greed often dominate. Yet, their true strength and creativity will unfold only when these passions are calmed. Just as the moonlight soothes and awakens the lily, so too serenity nurtures the mind's potential.

❀❀❀

44

पावकज्जचागेणं, विसयविरत्तीइ खमाइभावादु।
सुबुद्धि-हेदू वड्ढदि, णाणावरण-खओवसमं च॥44॥

पापकार्यों के त्याग, विषयविरक्ति और क्षमादि भावों से ज्ञानावरण का क्षयोपशम वृद्धिङ्गत होता है और वही श्रेष्ठ बुद्धि का कारण है।

By renouncing sinful deeds, by detachment from sensual pleasures, and by cultivating forgiveness and allied virtues, the veil of delusion over knowledge is thinned, and this alone is the cause of true growth.

व्याख्या—मनुष्य का ज्ञान वैसे ही है जैसे सूर्य का प्रकाश-पूर्ण और अनन्त। परन्तु पाप, विषय-आसक्ति और कषायें उस पर बादल की तरह छा जाती हैं। जब मनुष्य पाप कर्मों का त्याग करता है, इन्द्रिय विषयों से विरक्ति प्राप्त करता है और अपने हृदय को क्षमा, करुणा और दया जैसे गुणों से परिपूर्ण करता है, तब उसके ज्ञानावरण के बादल हटने लगते हैं। उसके भीतर का प्रकाश प्रकट होता है और यही उसकी वास्तविक वृद्धि और उन्नति है।

जब गुर्जर प्रान्त के राजा अमोघवर्ष, आचार्य श्री जिनसेन स्वामी के चरणों में पहुँचे, तो आचार्यश्री ने उन्हें कहा—"राजन्! तुम्हारी शक्ति का मूल तुम्हारे सेनापति या शस्त्र नहीं, अपितु पाप का त्याग, विषय-कषायों का

परित्याग और क्षमा का विकास है।'' राजा ने इस उपदेश को आत्मसात किया और इतिहास में धर्मप्राण शासक के रूप में विख्यात हुए और बाद में स्वयं भी दिगम्बर दीक्षा को धारण कर श्रेष्ठ साधक हुए। विषय-विरक्ति, कषाय त्याग से ज्ञान का अद्भुत प्रकाश उनके जीवन में फैला।

आज की युवा पीढ़ी के लिए यह शिक्षा अत्यन्त सारगर्भित है। अक्सर वे मानते हैं कि उन्नति केवल डिग्रियों, पदों और वैभव से है। किन्तु यदि मन में असत्य, हिंसा, लोभ और विषयासक्ति भरे हों, तो यह सब वृद्धि क्षणिक और खोखली है। वास्तविक प्रगति तब है जब वे क्षमा करना सीखें, विषयों के आकर्षण से ऊपर उठें और पापों से दूरी बनाकर आत्मबल को बढ़ाएँ।

Explanation–Knowledge in the soul is like the sun-radiant and boundless. Yet passions and sins are like clouds, covering its brilliance. When one abandons sinful acts, rises above sensual attachment, and fills the heart with forgiveness, compassion, and humility, then the knowledge–obscuring veil begins to dissolve, and the soul's light shines forth. This is the essence of genuine progress.

When the king of Gurjar, Amoghavarsha bowed at the feet of Acharya Jinsen, he told him: "Your true strength lies not in your generals or weapons, but in your renunciation of sin, sensual indulgence, passion and in the cultivation of forgiveness." The

king embraced this teaching and became celebrated as a dharmic ruler. His reign was not only politically prosperous but spiritually radiant. And later, he too embraced Digambara initiation and became distinguished seeker. By renouncing attachments and conquering passions the marvelous radiance of knowledge illumined his life.

For today's youth, this is a timeless message. Real progress is not measured in degrees, wealth, or positions, but in the ability to forgive, to rise above temptations, and to avoid actions that darken the soul. A mind imbued with virtue shines with clarity and resilience.

❀❀❀

45

णाणुवयरणं णाणं, गुरुं सत्थं पडि अविणयभावेण।
दुहदं णाणावरणं, बंधेदि य दुग्गदिं पावं॥45॥

ज्ञान के उपकरण, ज्ञान, गुरु व शास्त्र के प्रति अविनय भाव से दुखद ज्ञानावरण कर्म का बन्ध होता है, दुर्गति व पाप का बन्ध भी होता है।

"Disrespect towards the instruments of knowledge– namely knowledge itself, the Guru, and the scriptures– leads to the bondage of knowledge-obscuring karmas or ignorance and consequently to sin and abjection."

व्याख्या–ज्ञान की प्राप्ति केवल एक मानसिक प्रक्रिया नहीं है, अपितु यह गुरु के मार्गदर्शन, शास्त्रों की गहराई और आत्मचिन्तन से पूर्ण होती है। यदि कोई छात्र या साधक गुरु को तुच्छ मानता है, शास्त्रों को महत्व नहीं देता या अपने ज्ञान को ही सर्वोच्च मानकर अहङ्कार में जीता है, अथवा ज्ञान के उपकरण जैसे पेन, कॉपी, बुक आदि को मुँह में डाले या उन पर पैर लगाए तो उसके भीतर ज्ञानावरण कर्म का संचय होता है। इसका परिणाम है–अज्ञान, पाप का बन्धन और अन्ततः दुर्गति।

महाभारत में कौरवों के गुरु द्रोणाचार्य थे, किन्तु दुर्योधन ने सदैव अहङ्कारवश गुरु की शिक्षा की उपेक्षा की और धर्म की मर्यादाओं का उल्लङ्घन किया। परिणामतः उसका पतन हुआ। इसके विपरीत अर्जुन ने गुरु और शास्त्र दोनों

का आदर किया, इसलिए गीता का दिव्य उपदेश उसे प्राप्त हुआ और उसका जीवन विजयी और धर्ममय हुआ।

आज की पीढ़ी अक्सर सोचती है कि इंटरनेट और तकनीक से सब ज्ञान मिल सकता है। परन्तु सच्चा ज्ञान गुरु की वाणी और शास्त्रों की गहराई से ही जीवन्त होता है। यदि वे अपने शिक्षकों का सम्मान करेंगे, शास्त्रों को श्रद्धा से पढ़ेंगे और विनम्रता से सीखने का भाव रखेंगे, तभी उनके ज्ञान का क्षयोपशम बढ़ेगा और उन्हें श्रेष्ठ बुद्धि प्राप्त होगी।

अतः ज्ञान के उपकरण, ज्ञान, गुरु और शास्त्र के प्रति आदरभाव ही मनुष्य को अज्ञान और पाप से बचाकर ऊर्ध्वगति की ओर ले जाता है।

Explanation–True knowledge is not merely intellectual accumulation; it is a living flame kindled by the Guru's guidance, the depth of the scriptures, and the humility of the seeker. When one disregards the teacher, neglects the scriptures, or assumes that one's own intellect alone is supreme, disrespect or the tools of knowledge, such as pens, notebooks, and books, by putting them in the mouth or placing feet upon them the karmic veil of ignorance thickens. Such arrogance binds one to sin and leads the soul towards degeneration.

The Mahabharata offers a clear example. Duryodhana, blinded by pride, disrespected his Guru

and ignored the wisdom of dharma. This arrogance led to his ruin. Arjuna, on the other hand, revered his teacher and scriptures with humility, and thus received the immortal wisdom of the Bhagavad Gita, which became the foundation of his righteous victory.

In the digital age, where knowledge appears to be instantly accessible, one must remember that true wisdom is not found in mere data but in the reverence for mentors, the study of sacred texts, and the humility to learn–without these, knowledge becomes hollow, clouded by ego, and leads to moral decline.

"Without humility, no one attains knowledge; without knowledge, no perfection brings joy."

Humility is the doorway to wisdom. Reverence for the tools of knowledge; wisdom Guru, scriptures, and the discipline of learning ensures liberation from ignorance and paves the way for true spiritual and moral growth.

❀❀❀

46

सगणाण-लोवणादो, णाणिं पडि तह मच्छरभावेणं।
सत्थं पडि कुभावेहि, उहट्टेदि खलु सम्मबुद्धी॥46॥

अपने ज्ञान को छिपाने से, ज्ञानी के प्रति ईर्ष्याभाव से, शास्त्र के प्रति कुभावों से सम्यक् बुद्धि निश्चय से नष्ट होती है।

By concealing one's knowledge, by harbouring jealousy towards the wise, and by holding perverse thoughts towards the scriptures, right understanding or true discernment is surely destroyed.

व्याख्या—ज्ञान का स्वरूप प्रकाश के समान है—जो जितना बाँटा जाए उतना ही बढ़ता है। किन्तु जब मनुष्य अपने ज्ञान को छिपाने लगता है, तो वह दूसरों को अज्ञान में रखकर स्वयं को श्रेष्ठ मानना चाहता है। यह भाव अहङ्कार और ईर्ष्या को जन्म देता है। इसी प्रकार, जब वह किसी ज्ञानी पुरुष के प्रति ईर्ष्या रखता है और शास्त्रों की आलोचना करता है, तो धीरे-धीरे उसकी सम्यक् बुद्धि क्षीण हो जाती है। बुद्धि की यह क्षति ही उसके पतन का कारण बनती है।

जो मनुष्य विद्वान होते हुए भी अपना ज्ञान दूसरों को नहीं देता और विद्वानों से ईर्ष्या करता है; धीरे-धीरे उसका विवेक नष्ट हो जाता है और अन्त में वह लोकविहीन और

उपेक्षित हो जाता है। ज्ञान बाँटने से ही ज्ञान पुष्ट होता है। यही सम्यक बुद्धि है।

आज के युवाओं के लिए यह शिक्षा अत्यन्त आवश्यक है। आज की प्रतिस्पर्धा में अक्सर छात्र-छात्राएँ अपने ज्ञान या रिसोर्स दूसरों से छिपाते हैं और सहपाठियों की प्रगति देखकर ईर्ष्या करते हैं। किन्तु यह व्यवहार अन्ततः उनकी ही बुद्धि को क्षीण करता है। सम्यक् दृष्टि यही है कि जो कुछ सीखा है, उसे साझा करें, गुरुजनों और शास्त्रों का आदर करें और ज्ञानी पुरुषों से प्रेरणा लें। तभी उनका ज्ञान स्थायी और प्रकाशित होगा।

जैसा कि रहीम ने कहा है-

रहिमन ज्ञान बांटिए, बढ़े और दस गुन।
जैसे दीयों से दीया बले, घटे न तासों तुन॥

ईर्ष्या करना, अहङ्कार करना और ज्ञान को छिपाना, यह सब बुद्धि का नाश करते हैं। सम्यक बुद्धि का विकास तभी सम्भव है जब मनुष्य उदार होकर ज्ञान बाँटे, ज्ञानी का सम्मान करे और शास्त्रों में श्रद्धा रखे।

Explanation–Knowledge is like light: the more it is shared, the more it shines. But when a person hides knowledge, attempting to maintain superiority by keeping others in darkness, pride and jealousy take root. Similarly, when one envies the learned or disrespects sacred texts, the faculty of right understanding withers away. The decline of discernment leads inevitably to moral and spiritual downfall.

A learned person who refuses to share his knowledge and grows envious of other scholars will see his wisdom shrink, his influence vanish, and himself forgotten. Bhartrihari himself, however, taught that knowledge grows only when shared–a true sign of right vision.

In the competitive world of academics and careers, many are tempted to hoard resources or resent the success of their peers. Yet such envy corrodes the mind. True growth lies in collaboration, in respecting teachers and scriptures, and in celebrating the wisdom of others. Then, knowledge not only remains but flourishes.

As Rahim wisely said:

"Share your knowledge, for it multiplies tenfold;

like one lamp lighting another, its flame never diminishes."

Concealment of knowledge, envy of the wise, and disdain for scripture destroy right understanding. Openness, reverence, and generosity in learning ensure the flourishing of wisdom and the elevation of the soul.

❀❀❀

47

जह जह जीव-विरत्तो, उज्झदि पमादं इंदिय-विसयादु।
तह तह सुकला सुगुणा, णाण-मिच्चादी वड्ढंते॥47॥

जैसे जैसे इन्द्रिय विषयों से विरक्त जीव प्रमाद का त्याग करता है, वैसे-वैसे उसके सम्यक् कला, गुण व ज्ञान इत्यादि वृद्धिङ्गत होते हैं।

As the soul renounces indulgence in sense-objects and frees itself from negligence, right skills, virtues, and knowledge steadily flourish.

व्याख्या—मनुष्य का जीवन इन्द्रियों की आकाङ्क्षाओं से सञ्चालित होता है। जब तक वह विषय-वासना में डूबा रहता है, तब तक उसकी चेतना प्रमादग्रस्त रहती है। परन्तु जैसे ही वह इन्द्रियों पर संयम रखकर विषयों से विरक्त होता है, उसकी आत्मा में एक नई शक्ति का उदय होता है—उसके गुण विकसित होने लगते हैं, विवेक प्रखर होता है और ज्ञान का प्रकाश उसके भीतर फैलने लगता है।

समुद्र का जल तब तक मटमैला और अस्थिर रहता है जब तक लहरें उफान पर हों। किन्तु जब लहरें शान्त हो जाती हैं, तब गहराई में मोती और रत्न दिखाई देते हैं। इसी प्रकार जब इन्द्रियों की वासनाएँ शान्त होती हैं, तो आत्मा के भीतर छिपे दिव्य गुण प्रकट होते हैं। कहा भी गया है—

विषयानां तु विरक्तस्य नित्यमात्मप्रकाशनम्।

विषयों से विरक्त व्यक्ति की आत्मा नित्य प्रकाशित रहती है।

आज की पीढ़ी का जीवन उपभोग और तात्कालिक सुख की दौड़ में फँसता जा रहा है। भोग की अति मनुष्य

को प्रमाद की ओर ले जाती है और उसका आत्मबल क्षीण कर देती है। यदि युवा थोड़ी-सी भी संयमता अपनाएँ-जैसे सोशल मीडिया पर अनावश्यक समय कम करें, नशे और व्यसनों से दूर रहें, जीवन में नियमितता और साधना को स्थान दें तो उनका ज्ञान, प्रतिभा और चारित्रिक बल स्वतः ही प्रकट होने लगेगा।

Explanation–Human life is often governed by the impulses of the senses. When one remains immersed in pleasures, the soul is clouded by negligence. Yet, the moment one withdraws from such indulgence and embraces restraint, an inner awakening begins: virtues unfold, discernment sharpens, and the light of true knowledge spreads within.

Consider the metaphor of the ocean. When the waves are turbulent, the depths remain unseen. But once the surface calms, the treasures hidden beneath–pearls and gems–become visible. Likewise, when the turbulence of sensory desires subsides, the hidden radiance of the soul emerges.

It is said–"For the one detached from sense-objects, the self shines perpetually."

The modern world glorifies consumption and instant gratification. But unchecked indulgence weakens the spirit and clouds the intellect. If the young cultivate moderation–by reducing distractions, abstaining from harmful habits, and dedicating time to discipline and reflection–their knowledge, talents, and moral strength will blossom naturally.

❀❀❀

48

छप्पया आवडंते, पुप्फ-सुगंधीए णियडे ताणं।
तहेव णाणं णरेसु, आयार-संजम-तव-बलेण।।48।।

जैसे पुष्पों की सुगन्धि से उनके निकट भ्रमर आते हैं उसी प्रकार आचरण, संयम व तप के बल से मनुष्यों में ज्ञान उत्पन्न होता है।

Just as flowers are not sought for their colours alone, but for the fragrance that silently draws the bees, so too is knowledge awakened in man through the fragrance of conduct, restraint, and austerity.

व्याख्या—फूल का अस्तित्व तभी पूर्ण होता है जब उसकी सुगन्ध वातावरण में फैलती है। केवल रंग या आकार से वह आकर्षक नहीं बनता। ठीक उसी प्रकार मनुष्य का जीवन भी तभी सार्थक होता है जब उसके भीतर से संयम और तप की सुवास प्रकट होती है। बाहरी विद्या और उपाधि केवल आवरण हैं, किन्तु आत्मिक सुगन्ध आचरण, व्रत और तप से ही आती है। यही सुगन्ध ज्ञान रूपी भ्रमर को आकर्षित करती है।

फूल कभी यह नहीं कहता कि "आओ मेरे पास"—उसकी सुगन्ध स्वतः ही सबको बुला लेती है। इसी प्रकार, जो साधक अपने जीवन में संयम, तप और सदाचार का पालन

करता है, उसके पास ज्ञान स्वतः खिंचकर आता है। ज्ञान की ज्योति को पाने के लिए उसे अलग से प्रयास नहीं करना पड़ता; उसका जीवन ही प्रकाश का स्रोत बन जाता है।

कहा जाता है कि एक बार एक बालक ने अपने गुरु से पूछा–"गुरुदेव, ज्ञान कैसे प्राप्त किया जाए?" गुरु ने बगीचे से एक गुलाब का फूल तोड़कर दिया और कहा–"इसे अपने कक्ष में रखो।" कुछ ही समय में पूरा कक्ष सुगन्ध से भर गया। गुरु ने कहा–"देखो, ज्ञान भी ऐसा ही है। यदि जीवन संयम और तप से सुगन्धित है, तो वह ज्ञान की आभा से स्वयं भर उठेगा और दूसरों को भी प्रकाशित करेगा।"

तप सभी विज्ञानों की जननी है। आज का युवा ज्ञान को केवल सूचना और डिग्री तक सीमित मान लेता है। किन्तु वास्तविक ज्ञान तब जन्म लेता है जब जीवन संयमित हो। देर रात तक व्यर्थ की लिप्साओं में डूबना, शरीर और मन को व्यसन से बोझिल करना, और अनुशासनहीन जीवन जीना–ये सब ज्ञान की सुगन्ध को दबा देते हैं।

यदि युवा अपने जीवन में छोटे-छोटे तप को स्थान दें–जैसे समय पर उठना, नियमित व्यायाम करना, ध्यान में बैठना, और इच्छाओं पर संयम रखना–तो उनकी बुद्धि और अंतःकरण ज्ञान से स्वतः सुवासित हो जाएगा।

फूल का आकर्षण उसकी सुगन्ध है, न कि उसका बाहरी सौंदर्य। उसी प्रकार मनुष्य का वास्तविक आकर्षण उसका आचरण, संयम और तप है। यही गुण ज्ञान को उत्पन्न करते हैं और जीवन को प्रकाशमान बनाते हैं।

Explanation–A flower without fragrance is incomplete. Its beauty may please the eye, but it cannot enchant the heart. Similarly, a life filled merely with external learning or academic degrees may appear decorated, but it lacks the inner fragrance that comes from discipline and virtue. Conduct, restraint, and austerity are the subtle fragrance of the soul, and it is this fragrance that attracts the black beetles of knowledge.

The flower never calls out, "Come near me." Its silent fragrance does the work. Likewise, a disciplined seeker need not chase after wisdom–it naturally blossoms within him. Knowledge is not begged for, it is born as the inevitable fruit of an inner life fragrant with restraint and austerity.

A student once asked his teacher, "Master, how may I attain wisdom?" The teacher handed him a rose and asked him to keep it in his room. Soon, the entire room was filled with fragrance. The teacher said, "Behold! Wisdom is like this fragrance. Live a life of restraint and self-discipline, and wisdom will not only blossom within you but will also radiate to all who come near you."

Austerity is the mother of all wisdom. In the modern world, knowledge is often mistaken for information or certificates. But true knowledge awakens only when life is disciplined. Late nights wasted in indulgence, addictions that enslave the body, and a lack of discipline–all these stifle the fragrance of wisdom. Yet, if the youth cultivate even small austerities-waking early, practicing self-control, meditating, and living mindfully-their intellect and conscience will be imbued with knowledge.

The true charm of a flower lies in its fragrance, not its form. In the same way, the true glory of a human lies in conduct, restraint, and austerity. These virtues are the fragrance that awakens wisdom and makes life luminous.

❀❀❀

49

संघस्से णो छड्डदि, धीरं सगसत्तिं णेव गोवेज्ज।
सम्मं समं करेज्जा, माणससत्ति-संविड्डीए॥49॥

संघर्ष के समय व्यक्ति को अपना धैर्य नहीं छोड़ना चाहिए, अपनी शक्ति कभी नहीं छिपानी चाहिए। मानसिक शक्ति की वृद्धि के लिए सम्यक् श्रम करना चाहिए।

In times of adversity, one must never abandon patience nor conceal one's strength. For the growth of inner power, right effort is essential.

व्याख्या—जीवन की कठिनाइयाँ अक्सर हमारे साहस और धैर्य की परीक्षा लेती हैं। यही वह क्षण होते हैं जब शिक्षा हमें सिखाती है कि धैर्य ही सबसे बड़ा बल है। जैसे समुद्र की गहराई में भी तूफान केवल ऊपर की लहरों को विचलित करता है, परन्तु गहराई शान्त बनी रहती है, वैसे ही सजग मनुष्य को विपत्ति के समय अपने धैर्य को स्थिर रखना चाहिए।

साधना का मार्ग भी हमें यही सिखाता है। चक्रवर्ती की पुत्री अनंगसरा ने असंख्य उपसर्ग झेले, किन्तु उसका धैर्य और आत्मशक्ति कभी डगमगाई नहीं। अनेक महापुरुष व सतियों के जीवन से यही शिक्षा मिलती है कि आत्मबल छिपाना नहीं, बल्कि उसे जागृत कर हर परिस्थिति में प्रयोग करना ही सफलता का मूल है।

एक युवा शिष्य ने अपने गुरु से कहा, ''गुरुदेव, सङ्कट में मन काँपने लगता है।" गुरु ने उसे दीपक दिखाकर कहा–"देखो, आँधी आते ही दीपक की लौ डगमगाती है, पर यदि उसके चारों ओर काँच का आवरण हो तो आँधी भी उसे बुझा नहीं पाती। उसी प्रकार, धैर्य और आत्मबल ही वह आवरण है जो विपरीत परिस्थितियों में भी तुम्हें अडिग रखता है।''

कहा भी है–''**धैर्यं सर्वार्थसाधनम्।**''

धैर्य ही सभी सिद्धियों का साधन है।

आज का युवा छोटी-छोटी असफलताओं से विचलित हो जाता है–परीक्षा में अपेक्षित अङ्क न मिले, नौकरी न मिले, या सम्बन्धों में कठिनाई आए तो तनावग्रस्त हो जाता है, मानसिक संतुलन टूट जाता है और कभी तो आत्मघात की ओर भी कदम बढ़ा लेता है। यह सब व्यक्ति को मानसिक शिक्षा के अभाव का ही परिणाम है। मानसिक शिक्षा धैर्यवान बनाती है। प्रतिकूल परिस्थितियों में धैर्य ही व्यक्ति का सबसे बड़ा मित्र बन सकता है। यदि वे मानसिक शक्ति के लिए नियमित साधना, योग, प्रार्थना और परिश्रम करें तो उनका आत्मबल बढ़ेगा और जीवन की हर चुनौती उनके लिए अवसर बन जाएगी।

सङ्कट के क्षणों में धैर्य और आत्मबल का प्रयोग ही मनुष्य का वास्तविक आभूषण है। जो व्यक्ति अपने भीतर

की शक्ति को पहचानता और उसे उजागर करता है, वही जीवन में विजयी होता है।

Explanation–Life often tests us with storms of hardship. Yet it is precisely in such moments that patience reveals itself as the greatest strength. Just as the depths of the ocean remain calm though the waves above rage in turbulence, so must the wise remain steady in the midst of trials.

Anangsara, daughter of emperor, endured countless afflictions, yet her patience never wavered, nor did she hide the power of her spirit. Lives of many great personalities and noble women proclaims that true victory lies not in concealing strength but in manifesting it with courage and right effort.

A disciple confessed to his master, "Master, in adversity my mind trembles." The master lit a lamp and said, "Look, when the wind blows the flame flickers. But if a glass covers the lamp, no storm can extinguish it. Patience and inner strength are that glass cover which protects the flame of your spirit in life's storms."

It is said–"Patience is the root of all accomplishment."

Today's youth often become disheartened at small failures–low marks, a missed opportunity, or struggles in relationships. This leads to stress, loss of mental equilibrium, and sometimes even a tragic inclination

toward self-harm. Such outcomes arise solely from the absence of mental education. Mental education cultivates inner patience and in adverse situations, patience becomes one's most faithful and enduring companion. By cultivating mental strength through discipline, prayer, meditation, and perseverance, they can transform obstacles into opportunities.

The true ornament of man is patience in adversity. He who recognises his strength and manifests it with steady effort becomes victorious in life.

❀❀❀

50

तप्परो साहसेणं, णाणी सय पडिऊल-परिट्ठिदीइ।
माणससत्तिबलेणं, पगड-साहसो विजय-हेदू॥50॥

ज्ञानीजनों को प्रतिकूल परिस्थिति में सदैव साहस के साथ तत्पर रहना चाहिए। मानसिक शक्ति के बल से जो साहस प्रकट होता है वही विजय का कारण है।

The wise must always remain ready with courage in adverse times. The courage that springs from inner strength is the true cause of victory."

व्याख्या—सच्चा ज्ञानी वही है जो कठिन परिस्थितियों में भी भयभीत नहीं होता। प्रतिकूलता उसके लिए बाधा नहीं, बल्कि अपने साहस को परखने का अवसर होती है। जिस प्रकार आँधी पर्वत की अटलता को सिद्ध करती है, उसी प्रकार कठिन समय ज्ञानी के धैर्य और साहस को प्रकट करता है।

महापुरुषों ने संघर्षों के बीच कभी साहस नहीं छोड़ा। उनका मानसिक बल ही उनका कवच बना और वही उनके दिव्य ज्ञान का आधार। महात्मा गाँधी ने सत्य और अहिंसा के बल से ब्रिटिश साम्राज्य को चुनौती दी। उनका बल शारीरिक नहीं, मानसिक था—और वही बल विजय का कारण बना।

एक योद्धा युद्धभूमि में अकेला पड़ गया। शत्रु चारों ओर से घेर चुके थे। किन्तु उसने मन ही मन कहा, "भय

ही मेरी हार है, साहस ही मेरी विजय।'' उस क्षण उसकी मानसिक शक्ति ने उसके शरीर को कई गुना अधिक समर्थ बना दिया, उसने सकारात्मकता और साहस के साथ ऐसा युद्ध किया कि उसके शत्रु भी उसकी वीरता से काँप उठे। यही है साहस का चमत्कार–जो भीतर से जन्म लेता है।

आज की युवा पीढ़ी छोटी असफलताओं या कठिनाइयों से जल्दी निराश हो जाती है। परन्तु यही पल है जहाँ उन्हें अपने साहस को जगाना चाहिए। प्रतियोगिता की परीक्षा हो या जीवन की दौड़–साहस वह दीपक है जो अन्धकार में राह दिखाता है। जो मानसिक शक्ति को साध लेता है, उसके लिए कठिनाइयाँ विजय की सीढ़ी बन जाती हैं।

प्रतिकूल समय में साहस का सहारा और मानसिक शक्ति का बल ही विजय की कुञ्जी है। ज्ञानी जन इससे कभी विमुख नहीं होते–यही उनका गौरव है।

Explanation–True wisdom is tested not in times of comfort but in the storms of adversity. Obstacles do not diminish the wise; they bring forth their steadfastness. Just as the mountain stands unmoved despite the raging winds, so too does adversity reveal the unshaken courage of the wise.

Great men endured countless afflictions yet never abandoned courage. Their mental strength became their shield and the foundation of his omniscience. Mahatma Gandhi's courage-rooted not in physical might but in the power of the spirit–brought British empire to its knees.

A tale is told of a lone warrior surrounded by enemies. He whispered to himself, “Fear is my defeat, courage is my victory.” In that moment, his inner strength multiplied his power, with unwavering positivity and fearless courage, he fought so fiercely that even his foes trembled before his valour. Such is the miracle of courage born of the mind.

In today’s world, the youth tend to lose heart quickly when faced with small failures or obstacles. Yet these are the very moments when they must summon their inner courage. Whether it is the test of competition or the marathan of life. Courage shines like a guiding lamp in the deepest.

❀❀❀

51

रोवो खयदे गेहे, णीराभावे विसेसतावेणं।
किण्णु काणण-रुक्खो ण, णस्सेदि णीराभावम्मि वि॥51॥

पानी के अभाव में विशेष सन्ताप से घर में लगे गमले के पौधे नष्ट हो जाते हैं किन्तु उस नीर के अभाव में भी जंगल का पेड़ नाश को प्राप्त नहीं होता।

Without water, the potted plant withers away; yet, even in drought, the tree of the forest stands firm."

व्याख्या—यह श्लोक केवल पौधों की बात नहीं करता—यह हमारे जीवन का दर्पण है। गमले का पौधा सुन्दर दिखता है, सजा-संवरा होता है, पर उसका अस्तित्व पूरी तरह बाहरी जल पर निर्भर है। जरा-सी उपेक्षा हुई और वह मुरझा गया। जबकि जंगल का वृक्ष भीतर से इतना गहरा और आत्मनिर्भर होता है कि बाहरी वर्षा का अभाव भी उसे नष्ट नहीं कर पाता।

आज के बच्चे और युवा समाज की अंधी दौड़ में गमले के पौधों की तरह बनते जा रहे हैं। फैशन, ब्रांड्स, सोशल मीडिया लाइक्स और दिखावटी जीवन उनके 'जल' बन गए हैं। जब ये बाहरी सहारे नहीं मिलते तो वे निराशा, अवसाद और हताशा का शिकार हो जाते हैं। यही कारण है कि छोटी-सी असफलता उन्हें तोड़ देती है।

परन्तु शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य यही है कि वह मनुष्य को गमले से निकालकर जंगल के वृक्ष जैसा गहरा

और आत्मनिर्भर बनाए। शिक्षा केवल ज्ञान नहीं, बल्कि आत्मबल, धैर्य और मूल्य देती है। जब शिक्षा संस्कारों से जुड़ती है, तो व्यक्ति भीतर से इतना मजबूत हो जाता है कि समाज का दबाव, असफलता का भय या बाहरी प्रलोभन उसे डिगा नहीं पाता।

कहा भी है–**''आत्मबलं परं बलम्।''** आत्मबल ही सर्वोत्तम बल है।

युवाओं को चाहिए कि वे केवल ''बाहरी तालियों'' पर निर्भर न रहें। सोशल मीडिया की चमक, समाज की प्रतिस्पर्धा और दूसरों से तुलना एक गमले का जल है–यह स्थायी नहीं। शिक्षा और संस्कार ही वे गहरी जड़ें हैं जो जीवन को जंगल के वृक्ष की तरह स्थायी, अडिग और आत्मनिर्भर बना सकती हैं।

बाहरी सहारों पर निर्भर जीवन क्षणिक है। शिक्षा हमें आत्मबल और स्वावलम्बन देती है, जिससे हम समाज की दौड़ में खोकर भी अपनी जड़ों से जुड़े रहते हैं। यही वास्तविक विजय है।

Explanation–This verse is not about plants alone; it is a mirror of our lives. The potted plant looks beautiful, carefully decorated, yet its survival is entirely dependent on external watering. A moment's neglect, and it dies. But the forest tree, rooted deep within the earth, sustains itself even when rains fail.

So too, many youth today live like potted plants–relying on fashion, brands, social media likes, and

societal applause. These are their "water." When such external validation dries up, they fall prey to despair, depression, or self-doubt.

The true purpose of education is to lift us beyond such dependence–to root us like forest trees. Education, when combined with values, nourishes inner strength, resilience, and integrity. With such depth, no storm of failure, no drought of recognition, can destroy one's spirit.

"The greatest strength is the strength of the self."

Do not depend on "external claps." The glare of social media, the race of society, the endless comparisons–these are only temporary waterings. True education and values are the roots that make one like the forest tree: steady, self-reliant, and unshaken even in drought.

A life dependent on outer supports is fragile. Education gives the inner roots of self-reliance and strength, enabling us to stand tall amidst society's pressures.

❀❀❀

52

गंभीरो य सहिण्हू, धीरो वीरो तहेव विज्जत्थी।
सगणिंदापसंसासु, समो मदो पडण-मग्गो जं।।52।।

विद्यार्थी को गम्भीर, सहनशील, धीर, वीर एवं अपनी निंदा व प्रशंसा में समान होना चाहिए क्योंकि अहङ्कार पतन का मार्ग है।

A student must be grave in thought, tolerant in adversity, steadfast in patience, courageous in action, and equal in both praise and blame–for pride is the pathway to downfall.

व्याख्या–विद्यार्थी का जीवन केवल पुस्तकीय ज्ञान अर्जित करने का नाम नहीं है, बल्कि चरित्र निर्माण और व्यक्तित्व विकास का पथ है। गम्भीरता उसके चिन्तन को गहराई देती है, सहनशीलता उसे संघर्ष में स्थिर रखती है, धैर्य उसकी सफलता का बीज है और वीरता उसे कठिनाइयों के सामने निर्भय खड़ा करती है।

सच्चा विद्यार्थी वही है जो निन्दा और प्रशंसा दोनों में समान रहता है। यदि प्रशंसा से वह उछल पड़े और निन्दा से टूट जाए, तो उसका व्यक्तित्व असन्तुलित हो जाता है। अहङ्कार का अंकुर जैसे ही मन में उगता है, पतन की जड़ वहीं से फैलने लगती है। इतिहास साक्षी है–कौरवों का पतन अहङ्कार से हुआ और रावण का साम्राज्य भी इसी अहङ्कार के कारण नष्ट हुआ।

एक साधु के पास दो शिष्य थे। दोनों को समान शिक्षा मिली। पर एक शिष्य हर प्रशंसा पर गर्व से फूल जाता और हर आलोचना पर दुखी होता; उसका मन कभी स्थिर न रह सका। दूसरा शिष्य सबको नम्रता से स्वीकार करता–प्रशंसा में भी विनम्र और निन्दा में भी शान्त। वही आगे चलकर गुणवान्, लोकप्रिय और गुरु के पद को स्वीकार करने योग्य हुआ।

'विनयो हि मनुष्याणां भूषणं श्रेष्ठमुत्तमम्।' विनय ही मनुष्य का सर्वोत्तम आभूषण है।

आज के विद्यार्थियों को चाहिए कि वे सोशल मीडिया पर मिलने वाले लाइक्स और कमेंट्स के आधार पर अपना आत्ममूल्य तय न करें। यह प्रशंसा और निन्दा क्षणभंगुर है। सच्ची शिक्षा हमें इतना स्थिर बनाती है कि न बाहरी प्रशंसा से अभिमान बढ़े और न आलोचना से मन गिरे।

विद्यार्थी का व्यक्तित्व गम्भीरता, सहनशीलता, धैर्य और विनय से ही खिलता है। अहङ्कार से सफलता क्षणिक है, पर विनम्रता से ही स्थायी प्रगति सम्भव है।

Explanation–The life of a student is not merely the pursuit of academic knowledge; it is the shaping of character and personality. Seriousness deepens thought, tolerance steadies one in struggle, patience plants the seed of success, and courage empowers the spirit to face obstacles fearlessly.

The true student remains balanced in both criticism and praise. To rise in vanity when applauded, or to

fall into despair when criticised, is the sign of an untrained mind. The moment pride enters the heart, decline begins. History bears witness: the Kauravas fell through pride, and Ravana's mighty empire collapsed for the same reason.

A sage had two disciples. One swelled with arrogance when praised and grew despondent when criticised–his mind never steady. The other accepted both with humility, calm in applause and calm in rebuke. In the course of time, he grew to be revered, cherished by the people, and deserving of the noble position of a guru.

"Humility is man's highest ornament."

Today's students must not measure their worth by social media likes or comments. Praise and blame are fleeting. True education makes one so steady that neither external applause breeds arrogance, nor criticism causes despair.

The student's personality blossoms through seriousness, tolerance, patience, courage, and humility. Pride may bring momentary rise, but humility ensures lasting progress.

❀❀❀

53

विज्जत्थी मणोबली, कया वि कुव्वंति अप्पघादं णो।
णेव अहिसावकज्जं, कुलकलंकिदकज्जं पि णेव॥53॥

विद्यार्थियों को मनोबली होना चाहिए, जिससे वे कभी आत्मघात नहीं करते। मनोबली होने से वे कोई अभिशाप रूप कार्य या कुल को कलङ्कित करने वाले कार्य कभी नहीं करते।

A student must be endowed with mental strength, so that he never resorts to self-destruction. With strong willpower, he refrains from actions that are accursed or bring disgrace to his family."

व्याख्या–शिक्षा का मूल उद्देश्य केवल ज्ञान देना नहीं है, बल्कि मनुष्य को मनोबली बनाना है–अर्थात् ऐसा सशक्त मन जो कठिन से कठिन परिस्थिति में भी टूटे नहीं। जिस विद्यार्थी का मनोबल दृढ़ होता है, वह निराशा और अवसाद में भी प्रकाश की किरण खोज लेता है।

आत्महत्या जैसे घोर कार्य वही करता है जिसका मनोबल कमजोर पड़ जाता है। मनोबली विद्यार्थी जीवन के संघर्षों को अवसर में बदल देता है। वह कुल, समाज और राष्ट्र को कभी कलङ्कित नहीं करता, बल्कि अपने आचरण से उन्हें गौरवान्वित करता है।

एक विद्यार्थी बार-बार परीक्षा में असफल हो रहा था। उसके मित्र उसका उपहास उड़ाते। एक दिन वह हार मानने

ही वाला था, लेकिन उसने अपने गुरु की यह बात याद की–"पराजय केवल वही मानता है, जो स्वयं हार मान ले।" उसने पुनः प्रयास किया, और अन्ततः सफलता प्राप्त कर न केवल अपने परिवार का मान बढ़ाया बल्कि अपने गाँव का भी गौरव बन गया।

आज का युवा सोशल मीडिया प्रतिस्पर्धा और असफलताओं के दबाव में जल्दी टूट जाता है। सम्यक शिक्षा उसे यह सिखाती है कि असफलता अन्त नहीं, बल्कि नए प्रयास की शुरुआत है। जो विद्यार्थी मानसिक दृढ़ता अपनाता है, वही आत्मघात जैसे कृत्यों से दूर रहता है और जीवन को सार्थक बनाता है।

मनोबली विद्यार्थी न स्वयं को गिराता है, न अपने परिवार या समाज पर कलङ्क लगाता है। उसकी स्थिरता और साहस ही शिक्षा का सच्चा फल है।

Explanations–The true aim of education is not only to impart knowledge but to make a person resilient in mind. A student with firm willpower does not succumb to despair, nor does he yield to temptations that lead to ruin.

It is the weak-minded who fall prey to self-destruction. But the strong-willed student transforms obstacles into opportunities, bringing honour–not disgrace–to his lineage and community.

Once there was a student who repeatedly failed his examinations. Ridiculed by peers, he nearly gave up. But he remembered his teacher's words:

“Defeat exists only for those who choose to stop trying.” He persevered, succeeded, and became the pride of his family and village.

In today’s age of competition and social media pressure, youth often feel crushed by failure. True education instills willpower to see failure not as the end, but as the beginning of a renewed effort. A strong-minded student never thinks of self-harm but instead creates meaning and dignity in his life.

Mental strength is the greatest fruit of education. It saves the student from despair, safeguards his family’s honour, and makes him a beacon of hope for society.

❀❀❀

54

जलेण सुज्झदि वत्थं, रत्ताइ-कलंक-जुत्तं मलिणं च।
विज्जत्थीण माणसं, आयरेणं सुवियारेणं॥54॥

जैसे जल से रक्तादि दाग से युक्त वस्त्र व मलिन वस्त्र शुद्ध होता है उसी प्रकार सदाचरण व सुविचार से विद्यार्थियों का मानस शुद्ध होता है।

As water cleanses a garment stained with blood and dirt, so do good conduct and noble thoughts purify the mind of students.

व्याख्या–शिक्षा का उद्देश्य केवल बुद्धि को तीक्ष्ण करना नहीं है, बल्कि मन की गन्दगी को धोना भी है। जिस प्रकार जल वस्त्र पर लगे गहरे से गहरे दाग को धुलकर स्वच्छ कर देता है, उसी प्रकार सदाचरण और सुविचार जीवन से विकारों और मलिनताओं को दूर कर देते हैं।

विद्यार्थी जीवन में जब-जब मन ईर्ष्या, द्वेष, आलस्य, लोभ या क्रोध से भरने लगे, तो सदाचार (सत्कर्म) और सुविचार (सत्संगति, श्रेष्ठ चिन्तन) वही ''जल'' हैं, जो इन दागों को मिटाकर आत्मा की उज्ज्वलता पुनः प्रकट कर देते हैं।

एक विद्यालय में एक छात्र चोरी करते पकड़ा गया। गुरु ने उसे दण्ड न देकर कहा–''तुम्हें कल से प्रतिदिन एक

अच्छा काम लिखकर दिखाना होगा।" धीरे-धीरे जब उसके कर्म और विचार बदलने लगे, तो उसका मन भी स्वच्छ हो गया। यह वही प्रक्रिया थी, जैसे मैले वस्त्र को बार-बार धोकर उसे शुद्ध किया जाता है।

शास्त्रों में कहा है–**"चित्तं शुद्धये कर्मणां साधनम्॥**

मन की शुद्धि ही सभी साधनों का लक्ष्य है।

आज के युवा अनेक प्रलोभनों और विचलनों से घिरे हुए हैं। इंटरनेट, सोशल मीडिया और भौतिक प्रतिस्पर्धा मन पर "दाग" छोड़ देती है। किन्तु यदि वे नियमित रूप से अच्छे साहित्य पढ़ें, श्रेष्ठ व्यक्तियों के सम्पर्क में रहें और छोटे-छोटे सत्कर्म करें, तो उनका मन पुनः निर्मल और उज्ज्वल हो जाएगा।

जैसे वस्त्र को स्वच्छ रखने के लिए जल आवश्यक है, वैसे ही विद्यार्थी जीवन को निर्मल बनाए रखने के लिए सत्कर्म और सुविचार आवश्यक हैं। यही शिक्षा का वास्तविक सौंदर्य है।

Explanation–The goal of education is not merely to sharpen the intellect but to cleanse the inner self. Just as water washes away the deepest stains from a cloth, virtuous actions and uplifting thoughts wash away the impurities of jealousy, greed, anger, and despair.

When a student allows himself to be carried away by envy, hatred, idleness or temptation, it is noble

conduct and noble contemplation that restore the mind to its natural purity.

A boy at school was once caught stealing. Instead of punishment, his teacher instructed him to write down one good deed he had done each day. Slowly, his actions and thoughts changed, and with them, his heart was cleansed–like a garment repeatedly washed until it shines again.

The scriptures remind us: “The purification of the mind is the ultimate aim of all practices.”

In today’s world, youth face constant distractions and temptations. Social media pressures, competition, and consumerism leave stains on the mind. But through reading noble literature, keeping good company, and practicing small acts of kindness, they can keep their minds pure and luminous.

As water is essential to wash garments, so are good conduct and noble thoughts essential to purify the life of a student. This is the true fragrance of education.

❀❀❀

55

णव-णव-उज्जा-सत्तिं, गहदि विज्जुदेण विज्जुदुवयरणं।
जह तह सज्झाणेणं, माणससत्तिं दु विज्जत्थी॥55॥

जिस प्रकार विद्युत उपकरण विद्युत से नव-नव ऊर्जा शक्ति ग्रहण करता है उसी प्रकार विद्यार्थी समीचीन ध्यान से मानसिक शक्ति प्राप्त करता है।

"Just as an electrical device derives power from electricity, so does a student draw the strength of mental education through focused attention.

व्याख्या—विद्यार्थी का मन ठीक उसी प्रकार है, जैसे कोई यन्त्र। यदि यन्त्र विद्युत धारा से जुड़ा न हो तो वह निष्क्रिय पड़ा रहता है। उसी प्रकार यदि विद्यार्थी का मन ध्यान की धारा से जुड़ा न हो तो शिक्षा अधूरी रह जाती है।

ध्यान ही वह विद्युत-शक्ति है, जो विचारों को ऊर्जा देती है और स्मरणशक्ति को प्रखर बनाती है। केवल पुस्तकें पढ़ना या कक्षाओं में बैठना शिक्षा नहीं है, बल्कि ध्यानपूर्वक अध्ययन करना ही सच्ची शिक्षा है।

एक गुरु अपने शिष्यों को पढ़ा रहे थे। उन्होंने सभी से पूछा—"तुम्हारे घर की दीपशाला में दीपक कैसे जलता है?"

किसी ने कहा—तेल से, किसी ने कहा—बाती से। गुरु ने मुस्कराकर कहा—"नहीं, दीपक इसलिए जलता है क्योंकि

उसकी लौ अविचल है। जैसे ही वह डगमगाती है, प्रकाश मन्द हो जाता है।''

वैसे ही विद्यार्थी का ध्यान यदि स्थिर रहे तो उसका ज्ञान प्रखर रहता है, और यदि चञ्चल हो तो शिक्षा अन्धकार में खो जाती है।

''एकाग्रता सर्वविद्यायाः मूलम्।''

एकाग्रता ही सभी विद्याओं का मूल है।

आज की पीढ़ी मोबाइल, सोशल मीडिया और निरंतर विचलनों से घिरी हुई है। मन बिना विद्युत के यन्त्र की भाँति निष्क्रिय हो जाता है। यदि युवा प्रतिदिन थोड़ा समय एकाग्र होकर ध्यान और गहन अध्ययन में लगाएँ, तो वे मानसिक शिक्षा की वास्तविक शक्ति को प्राप्त कर सकते हैं।

जिस प्रकार बिजली से उपकरण जीवन्त होते हैं, उसी प्रकार ध्यान से विद्यार्थी का मन जीवंत होकर ज्ञान से प्रकाशित होता है।

Explanation–The human mind is like a machine. Without the current of concentration, it remains inert. Meditation is that electric power which energizes thoughts and sharpens memory. Books and lectures alone cannot make education complete; it is attentive reflection that transforms information into wisdom.

A parable is told of a teacher who asked his students: "Why does the lamp in your home give light."

One said–because of oil, another–because of the wick. The teacher replied: “No, the lamp shines because its flame is steady. When it flickers, light diminishes.”

So too, when the student’s attention is steady, knowledge shines forth; when it wavers, darkness prevails.

As the ancient saying goes: “Concentration is the root of all learning.”

In an age of smartphones and endless distractions, focus is the electricity of the mind. Without it, education is powerless. But with mindful attention, even a few hours of study can illuminate the intellect and strengthen character.

Attention is the power source of learning. It is what turns knowledge into living wisdom, just as electricity brings machines to life.

❀❀❀

56

सगचित्त-णिरोहस्स दु, पणिहीइ सिमरण-सत्ति-विड्ढीए।
धारणा-दिढं करिदुं, विज्जत्थी कुणदु सज्झाणं॥56॥

अपने चित्त के निरोध के लिए, एकाग्रता के लिए, स्मरण शक्ति की वृद्धि के लिए, धारणा (memory) दृढ़ करने के लिए विद्यार्थी को सद्ध्यान करना चाहिए।

For the restraint of the restless mind, for concentration, for the strengthening of memory, and for the firm retention of knowledge, a student must practice true meditation."

व्याख्या–शिक्षा तभी फलवती होती है जब मन एकाग्र हो। चित्त का निरोध अर्थात् चञ्चल वृत्तियों का नियन्त्रण, शिक्षा का अनिवार्य अंग है। स्मरण-शक्ति केवल जन्मजात देन नहीं, बल्कि ध्यान के अभ्यास से पुष्ट होने वाला गुण है।

ध्यान मन के विक्षेपों को रोकता है और धारणा (स्मृति की दृढ़ता) को विकसित करता है। जब विद्यार्थी सदैव सजग रहकर अध्ययन करता है, तो उसके द्वारा ग्रहण किया गया ज्ञान कभी नष्ट नहीं होता।

प्राचीन भारत में एक बालक "कौटिल्य" (चाणक्य) प्रतिदिन अपने अध्ययन से पहले ध्यान करता था। एक

बार उसके मित्रों ने पूछा–"तुम ध्यान क्यों करते हो? सीधे पढ़ाई क्यों नहीं शुरू करते?"

वह बोला–"ध्यान मेरे मन को ऐसा बना देता है, जैसे उपजाऊ खेत। उसमें बोया हुआ बीज कभी व्यर्थ नहीं जाता।"

यही कारण है कि आगे चलकर उसकी स्मरण शक्ति इतनी अद्‍भुत बनी कि अर्थशास्त्र जैसे ग्रन्थ की रचना कर सका।

ध्यान स्मृति को दृढ़ करता है। आज के विद्यार्थी अक्सर शिकायत करते हैं–"हमें याद नहीं रहता, पढ़ा हुआ भूल जाते हैं।" इसका कारण केवल बुद्धि की कमी नहीं, बल्कि ध्यान की कमी है। यदि युवा प्रतिदिन थोड़ी देर ध्यान का अभ्यास करें, तो उनकी स्मरण शक्ति प्रखर होगी और परीक्षाओं का तनाव भी कम होगा।

ध्यान, स्मृति की दृढ़ता और एकाग्रता का बीज है। विद्यार्थी के लिए यह केवल साधना नहीं, बल्कि शिक्षा की आत्मा है।

Explanation–Education bears fruit only when the mind is calm and focused. The restraint of the mind, that is, the control of restless tendencies, is an essential part of education. Memory is not merely a natural gift–it is nurtured through meditation. Meditation silences distractions, cultivates concentration, and anchors

knowledge deeply within. When a student learns with full awareness and attentiveness, the wisdom he gains remains with him forever.

In ancient India, young Chanakya (Kautilya) would meditate before beginning his studies. When asked why, he replied: “Meditation makes my mind like fertile soil. Whatever is sown in it will surely grow.”

It was this habit that later enabled him to compose the monumental Arthashastra.

“True meditation is that which makes memory unshakable.”

Many students today complain: “We cannot remember, we forget quickly.” The problem lies not in the brain, but in the absence of focus. With regular meditation, their memory can be sharpened, their concentration deepened, and the pressure of examinations eased.

Meditation is the power that steadies the mind, strengthens memory, and turns learning into lasting wisdom.

❀❀❀

57

ओमपणवबीयक्खर-मासयेज्ज णहं सज्झाण-विसया।
आणपाणेण सहिदा, सहजावत्था झाण-हेदू।।57।।

विद्यार्थियों को प्रणव बीजाक्षर ॐ, नभ (शून्य) आदि सद्ध्यान के विषयों का आश्रय लेना चाहिए। श्वासोच्छ्वास से सहित सहज अवस्था ध्यान का हेतु है।

"Students should take the sacred syllable Om, the vast sky, and the boundless void as objects of meditation. The natural state, accompanied by mindful breathing leads to meditation."

व्याख्या–सच्चा ध्यान केवल बाह्य आडम्बरों पर नहीं, बल्कि उन विषयों पर होता है जो मन को शान्त और आत्मा को गम्भीर बनाते हैं। विद्यार्थी के लिए 'ॐ'–जो सम्पूर्ण ज्ञान और अस्तित्व का प्रतीक है, नभ (आकाश– जो अनन्तता का द्योतक है, तथा शून्य–जो निराकार और निर्विकार स्थिति का चिह्न है–ये सभी उत्तम ध्यान के विषय हैं।

इन पर ध्यान करने से चित्त स्वभावतः सरल और स्थिर हो जाता है। ध्यान को कठिन क्रिया मानना भूल है; वस्तुतः यह सहजता की ओर लौटना है।

एक बार एक बालक ने अपने गुरु से पूछा–"गुरुदेव! ध्यान करना कठिन क्यों लगता है?"

गुरु ने एक कटोरे में जल भरकर कहा–"इसे देखो।"

बालक बोला–"यह काँप रहा है।"

गुरु ने मुस्कराकर कहा–"क्योंकि तुम इसे हिलाते हो। यदि इसे स्वभाव पर छोड़ दो, तो जल अपने आप स्थिर हो जाएगा।"

वैसे ही मन को भी स्वभाव पर छोड़ो, ध्यान सहज हो जाएगा। स्वाभाविक सरलता ध्यान का कारण है।

आज के विद्यार्थी सोचते हैं कि ध्यान करना कठिन साधना है। वास्तव में यह कठिन नहीं, बल्कि सबसे सरल है। जब वे मोबाइल और शोर-शराबे से दूर होकर बस 'ॐ' का उच्चारण करते हैं, या आकाश की ओर निहारते हैं, तो धीरे-धीरे मन शान्त और स्थिर हो जाता है। यही वास्तविक ध्यान है।

ध्यान कोई जटिल क्रिया नहीं, बल्कि सहजता की ओर लौटना है। 'ॐ', आकाश और शून्य जैसे विषय मन को विस्तार देते हैं और शिक्षा को आत्मा से जोड़ते हैं।

Explanation–Meditation does not lie in outward rituals, but in turning the mind toward objects that elevate the soul–Om, the eternal symbol representing the totality of knowledge and existence, the sky, symbol of infinity; and the void, emblem of detachment. By contemplating these, the mind becomes calm and naturally steady. It is a mistake to consider meditation a difficult practice; in truth, it is a return to natural simplicity.

A disciple once asked his teacher: "Why does meditation feel so difficult?"

The teacher placed a bowl of water before him. The boy saw it trembling. The teacher said: "Because you keep shaking it. Leave it to its own nature, and it will become still."

So too with the mind–when left to its natural state, meditation arises effortlessly. "Simplicity of nature is the root of meditation."

Students often think meditation is a tough practice. But meditation is not about effort–it is about letting go. Just a few minutes of focusing on "Om" or gazing at the open sky can bring stillness. In that stillness lies strength.

Meditation is not struggle; it is returning to the natural rhythm of the self. Through Om, the sky, and the void, students learn to expand their minds and anchor their education in inner peace.

❀❀❀

58

देहो जुदिम-णिरोयी, झाणेणं माणसविगासेण सह।
पहावि-वयणं कित्ती, जसो उण्णदी विज्जत्थीण॥58॥

ध्यान से विद्यार्थियों के मानसिक विकास के साथ-साथ देह कान्तिवान् व निरोगी होती है, प्रभावी वचन, कीर्ति, यश व उन्नति भी होती है।

Through meditation, a student not only attains mental development but also a radiant and healthy body. His words become influential, his personality commands respect, and he gains honour, glory, and advancement."

व्याख्या–ध्यान केवल मन की स्थिरता का साधन नहीं है, यह समग्र विकास का पथ है। विद्यार्थी जब ध्यान करता है, तो उसका मानसिक विकास होता है–स्मरण शक्ति, एकाग्रता और निर्णय क्षमता प्रखर हो जाती है।

साथ ही शरीर में भी तेज, ओज और स्वास्थ्य उत्पन्न होता है। जिस प्रकार सूर्य की किरणें वनस्पति को पुष्ट करती हैं, वैसे ही ध्यान की किरणें शरीर को निरोग और मन को प्रफुल्लित करती हैं।

ध्यानशील विद्यार्थी के वचन में प्रभाव, व्यक्तित्व में आकर्षण और आचरण में गाम्भीर्य आ जाता है। यही कारण है कि उसे समाज में कीर्ति, यश और उन्नति प्राप्त होती है।

भगवान महावीर स्वामी के जीवन में वर्णित है कि जब वे गहन ध्यान में लीन होते थे, तो उनके चारों ओर अलौकिक आभा प्रकट होती थी। जंगली जानवर भी उनके समीप आते ही शान्ति और प्रसन्नता का अनुभव करते थे।

यही ध्यान का प्रभाव है–जो साधु के जीवन में दिखाई देता है, वही विद्यार्थी के जीवन में भी घटित हो सकता है।

"ध्यानात् तेजोबलं प्राप्यते।" ध्यान से तेज और बल प्राप्त होता है।

आज का युवा तनाव, प्रतियोगिता और शारीरिक अस्वास्थ्य से जूझ रहा है। ध्यान उसे मानसिक शान्ति, शारीरिक स्वास्थ्य और आत्मबल प्रदान करता है। केवल दस मिनट का नियमित ध्यान विद्यार्थी को परीक्षाओं में सफलता, मित्रों के बीच सम्मान और जीवन में प्रगति दिला सकता है।

ध्यान से मनुष्य मानसिक रूप से प्रखर, शारीरिक रूप से स्वस्थ और सामाजिक रूप से सम्मानित बनता है।

Explanation–Meditation is not confined to inner stillness; it is the fountain of holistic growth. It sharpens memory, deepens concentration, and strengthens decision–making. At the same time, it grants vitality to the body, rendering it radiant and disease-free. Just as the rays of the sun nourish plants, so do the rays of meditation keep the body healthy and the mind joyful.

A meditative student's speech carries power, his presence exudes dignity, his personality radiates charm and society naturally bestows upon him recognition and honour.

The life of Lord Mahavira tells us that whenever he immersed himself in deep meditation, an extraordinary aura surrounded him, filling all around with peace. The same influence, in lesser degree, manifests in a student who sincerely practices meditation.

The scriptures affirm: “From meditation arises radiance and strength.”

In today’s age of stress, competition, and ill-health, meditation is the key to balance. Just a few minutes of regular practice can sharpen intellect, enhance health, and open the path to success and respect.

Meditation is the root of a student’s all-round excellence–bright mind, healthy body, and honoured life.

❀❀❀

59

पज्जलिदेग-दीवेण, पजलंति अप्पज्जलिद-बहुदीवा।
जह तह विणद-णाणिणा, लहंति णाणं बहु-अण्णाणी॥59॥

जिस प्रकार एक जले हुए दीपक से बहुत सारे अप्रज्ज्वलित दीपक जल जाते हैं, उसी प्रकार अहङ्कार से रहित विनयी ज्ञानी पुरुष से अनेक अज्ञानी ज्ञान प्राप्त करते हैं।

Just as a single lit lamp can ignite countless others without losing its flame, so too does a humble and egoless scholar enlighten many ignorant minds without diminishing his own wisdom."

व्याख्या–शिक्षा और ज्ञान की सबसे बड़ी विशेषता है कि वह बाँटने से घटती नहीं, बल्कि और बढ़ती है। जैसे एक दीपक का प्रकाश अनेक दीपकों को प्रज्ज्वलित करता है और स्वयं कम नहीं होता, वैसे ही सच्चा ज्ञानी अपने भीतर के प्रकाश को बाँटकर अज्ञानियों को प्रबुद्ध करता है।

परन्तु शर्त यह है कि ज्ञानी अहङ्कार रहित हो। यदि दीपक पर ढक्कन रखा जाए तो वह किसी को रोशनी नहीं दे सकता। उसी प्रकार अहङ्कार में डूबा व्यक्ति अपने ज्ञान को समाज तक नहीं पहुँचा पाता।

''विद्या ददाति विनयं।'' सच्चा ज्ञान विनय देता है, और वही दूसरों को प्रकाशमान करता है।

आज के युग में प्रतिस्पर्द्धा के कारण विद्यार्थी अक्सर ज्ञान को केवल अपने लिए ही रखना चाहते हैं। परन्तु यदि वे अपने सहपाठियों की मदद करें, अपने notes साझा करें,

तो न केवल उनका मित्र समूह प्रबुद्ध होगा, बल्कि स्वयं उनका ज्ञान भी और गहरा होगा।

"Helping others learn is the best way to learn yourself."

ज्ञान दीपक है। जितना बाँटा जाए, उतना ही बढ़ता है। सच्चा ज्ञानी वही है जो विनम्र होकर समाज में प्रकाश फैलाता है।

Explanation–Knowledge, unlike material wealth, grows by sharing. The flame of wisdom kindles other minds, dispelling darkness collectively. But arrogance is like a cover upon the lamp–it prevents the light from reaching others. Only humility allows knowledge to radiate freely.

In the hermitage of Sage, princes learned under his guidance. He would say: "Knowledge is like a lamp–keep it lit, and it will illuminate not only itself but the world around it." Thus, disciples became shining examples of virtue and righteousness.

The scriptures declare: "True knowledge bestows humility."

In today's competitive world, students often hoard their learning. But when they share notes, tutor friends, or discuss ideas, their own understanding deepens. To teach is to learn twice.

Knowledge is a flame that multiplies when shared. A true scholar is one who, free of ego, spreads the light of wisdom to all.

❀❀❀

60

तिल्ल-पेल्लणेण रत्त-गब्भणिवहणेण कणग-तावणेण।
ताण मुल्लं व वड्ढदि, विज्जत्थीण संघस्सेणं॥60॥

जिस प्रकार तिलों को पेलने से, मेहन्दी को पीसने से व स्वर्ण को ताप देने से उनका मूल्य वृद्धिङ्गत होता है उसी प्रकार सङ्घर्ष से विद्यार्थियों का मूल्य वृद्धिङ्गत होता है।

"Just as sesame yields oil when pressed, henna releases colour when ground, and gold attains brilliance when purified by fire, so too does the true worth of a student increase through struggle."

व्याख्या—जीवन में मूल्य तभी बढ़ता है जब व्यक्ति कठिनाइयों और संघर्षों से गुजरता है। तिल को पेले बिना तेल नहीं निकलता, मेहन्दी को पीसे बिना वह रङ्ग नहीं देती और स्वर्ण को तपाए बिना वह आभूषण का रूप नहीं लेता। इसी प्रकार विद्यार्थी यदि कठिन अध्ययन, अनुशासन और परिश्रम से न गुजरें, तो उनका ज्ञान केवल सतही रह जाएगा।

इतिहास में कई साधकों ने कठिन तप और संघर्ष किया। जिससे उनका आन्तरिक प्रकाश और भी प्रखर हुआ, और वे जगत् को सत्य और अहिंसा का संदेश दे सके।

वैज्ञानिक थॉमस एडिसन ने हजार से अधिक असफल प्रयासों के बाद बल्ब का आविष्कार किया। संघर्ष ने ही उनके ज्ञान का मूल्य बढ़ाया। बिना कष्ट के कोई उपलब्धि सम्भव नहीं।

आज की युवा पीढ़ी सफलता चाहती है। लेकिन संघर्ष ही व्यक्ति को परिष्कृत करता है। परीक्षाओं की तैयारी, खेलों का अभ्यास या जीवन की किसी भी प्रतियोगिता में धैर्य और संघर्ष से ही स्थायी सफलता मिलती है।

जैसे जिम में मांसपेशियों को तनाव से ताकत मिलती है, वैसे ही मन और आत्मा को संघर्ष से बल मिलता हैं।

संघर्ष ही वह ताप और दाब है जो व्यक्ति को साधारण से असाधारण बनाता है।

Explanation–Life's value is tested in the crucible of challenges. Without discipline and effort, knowledge remains shallow, like unpressed seeds, unground henna and gold that has not been refined by fire. It is adversity that shapes greatness.

In history, many seekers performed austerities. Through this struggle, their inner radiance deepened, and they became a beacon of truth and nonviolence. Similarly, Thomas Edison, after countless failures, invented the light bulb–his perseverance transformed potential into brilliance. Without hardship, no true gain is possible.

In an age of instant gratification, the youth must learn that struggle refines character. Just as muscles grow under resistance, so too the mind and soul strengthen through trials. Exams, failures and setbacks are not defeats but the fire that purifies.

Struggle is the pressure and heat that elevates the ordinary into the extraordinary.

❀❀❀

61

जेसुं विज्जत्थीसुं, मादु-पिदु-भादु-सिक्खगादीणं च।
बहुभारो अवेक्खा वि, हवेज्जा ते माणसरोयी॥61॥

जिन विद्यार्थियों पर माता, पिता, भाई व शिक्षक आदि का बहुत भार होता है और अपेक्षा भी होती है, वे मानसिक रोगी होते हैं।

Though students carry the burden of expectations from parents, siblings, and teachers, when this pressure grows excessive, it breaks their inner harmony and even leads to mental illness.”

व्याख्या–शिक्षा का उद्देश्य व्यक्तित्व का विकास है, न कि केवल अपेक्षाओं का बोझ। जब विद्यार्थी पर घर-परिवार और समाज की अपेक्षाएँ सीमा से अधिक हो जाती हैं, तो उसकी मानसिक शान्ति भङ्ग हो जाती है।

अत्यधिक दबाव उसे रोगी बना सकता है। जैसे कोई पौधा उचित जल और धूप से पनपता है, पर यदि उसे अति जल दे दिया जाए, तो उसकी जड़ें सड़ जाती हैं।

प्राचीन काल में गुरुकुलों में शिक्षा सहज और स्वाभाविक थी। वहाँ शिष्य पर कठोरता अवश्य थी, परन्तु साथ ही सहानुभूति भी थी।

आधुनिक युग में हम देखते हैं कि कई विद्यार्थी, माता-पिता और समाज की अपेक्षाओं के बोझ से अवसाद

और आत्महत्या तक की ओर धकेल दिए जाते हैं।

जापान में "कैराशी" (अत्यधिक काम के कारण मृत्यु) और भारत में student suicide की बढ़ती घटनाएँ इसी सत्य को प्रमाणित करती हैं।

अपेक्षाओं का संयम ही जीवन में सन्तुलन ला सकता है।

युवा यह समझें कि दूसरों की अपेक्षाएँ पूरी करना ही जीवन का अंतिम लक्ष्य नहीं है। स्वयं के भीतर आत्मबल और आत्मविश्वास का विकास ही शिक्षा की सच्ची पहचान है और अभिभावकों को चाहिए कि वे बच्चों को सहारा दें, न कि केवल तुलना और दबाव।

शिक्षा वही है जो विद्यार्थी को आत्मबल दे, न कि मानसिक रोग। दबाव नहीं, प्रेरणा ही प्रगति का साधन है।

Explanation–The aim of education is to nurture, not to suffocate. When the expectations placed on a student by his home, family, and society grow beyond limits, they shatter his inner calm and disturb his mental peace. Excessive pressure can turn him into a patient, harming both his mind and body.

Like a plant that thrives on measured sunlight and water, but withers if over–watered, a student needs guidance with balance, not suffocating demands.

In ancient gurukuls, discipline was firm yet compassionate. Today, however, countless students crumble under the crushing weight of expectations–leading to depression or even suicide. The tragedies

of "karoshi" in Japan or student suicides in India echo this painful truth.

Restraint in our expectations can preserve balance and well-being.

Students must realise that their worth is not measured only by fulfilling others' demands. True education is the development of self-confidence and inner strength. Likewise, parents and teachers must serve as supportive guides, not taskmasters.

True education uplifts; it inspires rather than oppresses. Pressure crushes, but encouragement cultivates growth.

❀❀❀

62

माणस-आरोग्गत्थं, विज्जत्थीण दाएज्ज सातंतं।
पडणप्पमुहदारं व, किण्णु सच्छंद-पवत्ती सय॥62॥

मानसिक आरोग्य के लिए विद्यार्थियों को (अध्ययनादि की) स्वतंत्रता देनी चाहिए किन्तु (स्वच्छन्दता कभी नहीं होने देनी चाहिए क्योंकि) स्वच्छन्द प्रवृत्ति सदैव ही पतन के मुख द्वार के समान है।

For the mental well-being of students, they must be granted the freedom to study and grow, but never unrestrained liberty-for unrestrained liberty is ever the gateway to downfall."

व्याख्या–स्वतन्त्रता और स्वच्छन्दता में सूक्ष्म किन्तु गहन अन्तर है। स्वतन्त्रता विद्यार्थी के व्यक्तित्व को विकसित करती है, उसकी सोच की उड़ान देती है, जबकि स्वच्छंदता अनुशासनहीनता का रूप लेकर पतन की ओर ले जाती है।

मानसिक आरोग्य तभी सम्भव है जब विद्यार्थी को पढ़ने, सोचने, और अपने विचार प्रकट करने का अवसर मिले, पर साथ ही नैतिक मर्यादाएँ और अनुशासन का आधार भी बना रहे।

राम का जीवन स्वतन्त्रता का प्रतीक था। उन्होंने गुरुजनों की मर्यादा का पालन करते हुए विद्या अर्जित की। इसके विपरीत रावण स्वच्छन्दता का प्रतीक था। उसे कोई

रोक नहीं सकता था; उसका जीवन अनियन्त्रित प्रवृत्तियों से पतन का कारण बना।

आज भी हम देखते हैं—यदि युवाओं को पूर्णतः दबा दिया जाए तो वे विद्रोही हो जाते हैं, और यदि उन्हें पूरी स्वच्छन्दता दे दी जाए तो वे दिशा खो देते हैं। दोनों ही स्थितियाँ मानसिक अस्वस्थता का कारण हैं।

आगम कहता है—"विवेकहीन स्वतन्त्रता बन्धन का कारण है।" अर्थात स्वतन्त्रता विवेक और संयम से जुड़ी हो, तो ही कल्याणकारी है।

आज के छात्रों को यह समझना चाहिए कि वास्तविक स्वतन्त्रता अपने कर्तव्यों का पालन करने और अपनी प्रतिभा को दिशा देने में है। "मैं जैसा चाहूँ वैसा करूँ" यह स्वच्छन्दता है, जो अन्ततः पतन की राह खोलती है। अभिभावकों और शिक्षकों को भी यह विवेक रखना चाहिए कि बच्चों को दबाएँ नहीं, बल्कि उन्हें सही दिशा की स्वतन्त्रता दें।

स्वतन्त्रता मानसिक आरोग्य का अमृत है, पर स्वच्छन्दता विष है। शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थी को अनुशासित स्वतन्त्रता प्रदान करना है।

Explanation–The line between freedom and licentiousness is subtle yet vital. Freedom nurtures the intellect, gives wings to thought, and fosters growth; but when it slips into indiscipline, it turns destructive. True mental well-being can be achieved only when

a student is given the freedom to read, reflect, and express his thoughts, while staying rooted in moral values and guided by discipline.

Rama's life was the symbol of freedom. He used his freedom within the framework of discipline and became the greatest king. Ravana, on the other hand, embodied licentiousness–heedless of guidance, he brought ruin upon himself and his kingdom.

If the youth are completely suppressed, they become rebellious, and if they are given absolute freedom, they lose direction. Both situations leads to mental unrest and imbalance.

"Freedom without discernment becomes bondage."

True independence lies in fulfilling duties and channeling talents. The notion of "I will do as I please" is not freedom but licentiousness, which inevitably opens the door to ruin.

Parents and teachers should grant space to grow, but never allow that space to turn into recklessness.

Freedom disciplined by wisdom is the path of growth; unrestrained liberty is the seed of downfall.

❀❀❀

63

जह वट्टो पासाणो, खुल्ल-खलेण पडदि गिरि-सिहरादो।
विज्जत्थी अह-पडणं, णिच्छिदो जह तह गव्वेणं॥63॥

जिस प्रकार एक गोल पत्थर छोटी सी ठोकर से गिरि-शिखर से नीचे गिर जाता है उसी प्रकार अहङ्कार से विद्यार्थी का अधोपतन निश्चित है।

Just as a round stone, with a mere push, tumbles down from the summit of a mountain, so too the downfall of a student filled with arrogance is inevitable."

व्याख्या–विद्या का सबसे बड़ा शत्रु अहङ्कार है। जिस प्रकार पर्वत की चोटी पर रखा गोल पत्थर, चाहे कितना ही ऊँचा क्यों न पहुँचा हो, बस एक छोटी-सी ठोकर से लुढ़ककर गहरी खाई में गिर पड़ता है, वैसे ही विद्यार्थी भी चाहे कितना ही विद्वान या कुशल क्यों न हो, यदि उसके हृदय में अहङ्कार घर कर ले, तो उसका पतन निश्चित है।

रामायण में रावण का उदाहरण स्मरणीय है। वह अपार ज्ञान और तपश्चर्या से सम्पन्न था। किन्तु उसके अहङ्कार ने ही उसे पतन की ओर धकेल दिया।

''विद्या विनयेन शोभते।'' अर्थात विद्या तभी सुशोभित है जब वह विनय से संयुक्त हो।

आज के विद्यार्थी अक्सर छोटी-सी सफलता पर भी अहङ्कार से भर जाते हैं। पर याद रखना चाहिए कि यह अहङ्कार उन्हें उसी पत्थर की भाँति गिरा सकता है, जिसे गिराने के लिए भारी आंधी नहीं, एक छोटी-सी ठोकर ही पर्याप्त है।

युवाओं को चाहिए कि वे सफलता को सिर चढ़ने न दें, बल्कि विनम्रता के साथ उसे और आगे बढ़ने का आधार बनाएँ।

अहङ्कार पतन का कारण है, और विनम्रता उत्थान का। विद्यार्थी का वास्तविक वैभव उसकी विद्या नहीं, उसकी विनय है।

Explanation–Arrogance is the sworn enemy of knowledge. Like round stone perched on a mountain peak that tumbles into a deep abyss with the lightest touch, so too a student, however wise or skilled, is bound for ruin when arrogance finds a place in his heart.

In the Ramayana, Ravana stands as a warning. Possessing immense knowledge and power, it was his arrogance that sealed his fate.

"Knowledge shines only when adorned with humility."

In today's world, many young learners inflate with pride at even the smallest achievements. Yet one must remember–the higher the peak, the harder the fall, and arrogance ensures that fall. True greatness lies not in boasting of one's abilities but in humbly nurturing them for the good of all.

Arrogance is the push that leads to downfall; humility is the anchor that sustains growth. The real glory of a student is not measured by the vastness of his learning, but by the depth of his humility.

❀❀❀

64

सुसब्भदा-सक्किदीण, मज्जादाइ विज्जेज्ज विज्जत्थी।
सव्वुण्णदि-विगासाण, खीरपत्ते खीरं व सया॥64॥

सर्वोन्नति व विकास के लिए विद्यार्थियों को सदैव सभ्यता व संस्कृति की मर्यादा में उसी प्रकार रहना चाहिए जैसे दूध के पात्र में दूध।

"For true progress and upliftment, students must always remain within the bounds of civility and culture–just as milk remains pure only when contained in a vessel."

व्याख्या–विकास केवल ज्ञान से नहीं, बल्कि मर्यादा और संस्कृति की रक्षा से होता है। विद्यार्थी जीवन वह पात्र है जिसमें यदि विद्या का दूध डाला जाए तो वह तभी सुगन्धित और शीतल रहेगा, जब पात्र स्वच्छ और सुरक्षित हो। बिना मर्यादा के विद्या वैसी ही है जैसे खुले में रखा दूध, जो शीघ्र दूषित हो जाता है।

चाणक्य ने नन्दवंश का अन्त कर चन्द्रगुप्त मौर्य को सम्राट बनाया। यह कार्य केवल विद्या से नहीं, बल्कि संस्कृति और राष्ट्र की मर्यादा को ध्यान में रखकर हुआ।

दूसरी ओर, यदि सभ्यता और संस्कृति का आधार न हो, तो विद्या विनाश का साधन बन जाती है। दुर्योधन जैसे पात्र उदाहरण हैं–बलशाली और ज्ञानी होकर भी सभ्यता-विहीनता ने उन्हें पतन की ओर धकेल दिया।

"संस्कृति ही राष्ट्र की आत्मा है।" विद्या तभी सार्थक है जब वह संस्कृति की संवाहक हो।

आज की युवा पीढ़ी तेजी से आधुनिकता की ओर भाग रही है। नई खोजें और ज्ञान स्वागत योग्य हैं, पर यदि सभ्यता और संस्कृति की मर्यादा टूट जाए तो वह ज्ञान समाज और व्यक्ति दोनों के लिए घातक बन सकता है। युवा यदि अपनी जड़ों से जुड़े रहते हुए प्रगति करेंगे, तो उनका जीवन दूध के पात्र की तरह शुद्ध और स्थिर रहेगा।

विद्यार्थी के लिए विद्या और संस्कृति एक-दूसरे के पूरक हैं। ज्ञान ही पर्याप्त नहीं है; मर्यादा ही उसे अमरत्व देती है।

Explanation–Growth is not achieved by knowledge alone, but by safeguarding the values that nurture it. Education without discipline and cultural grounding is like milk left exposed–it soon turns sour.

Chanakya's guidance to Chandragupta Maurya was not merely a triumph of intellect but also of cultural responsibility, restoring dharma and order. Conversely, when culture is absent, knowledge itself becomes destructive–Duryodhan, despite his strength and wisdom, fell into ruin for this very reason.

The sages affirm: : Culture is the soul of a nation." Learning attains meaning only when it preserves and transmits cultural values.

In today's fast-paced world, young minds chase modernity with zeal. While embracing innovation is vital, abandoning cultural roots invites decay. A student who advances with humility and cultural grounding will shine with purity, like milk preserved safely in its vessel.

Knowledge gives height, but culture gives foundation. Together they shape enduring greatness.

❀❀❀

65

अहंकार-छिद्दादो, संपुण्ण-गुणा विज्जत्थीणं तह।
छिद्द-जुत्त-पत्तादो, संपुण्ण-जलं जह णिस्सरदि॥65॥

जिस प्रकार छिद्र युक्त पात्र से सम्पूर्ण जल निकल जाता है उसी प्रकार अहङ्कार के छिद्र से विद्यार्थियों के सम्पूर्ण गुण निःसृत हो जाते हैं।

Just as all the water flows out of a vessel with a hole, in the same way, all the virtues of a student drain away through the hole of arrogance.

व्याख्या–जिस प्रकार छिद्रयुक्त पात्र से धीरे-धीरे सारा जल रिसकर नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार यदि विद्यार्थी के हृदय में अहङ्कार का छिद्र हो, तो उसके भीतर संचित सभी गुण, सारी विद्या और संस्कार व्यर्थ होकर बाहर निकल जाते हैं। पात्र का छिद्र जितना बड़ा होता है, जल उतनी ही शीघ्रता से समाप्त हो जाता है; ठीक वैसे ही, अहङ्कार जितना प्रबल होता है, गुणों का ह्रास उतना ही शीघ्र होता है।

'विनय ही विद्या का आभूषण है।' जब विद्वान व्यक्ति नम्र रहता है, तो उसकी विद्या दूसरों के लिए कल्याणकारी बनती है। परन्तु अहङ्कार से युक्त व्यक्ति, चाहे कितना ही ज्ञानी क्यों न हो, अन्ततः उपहास और तिरस्कार का पात्र बनता है। दुर्योधन इसका जीवंत उदाहरण है–शौर्य, धन और बल होने के बाद भी अहङ्कार रूपी छिद्र ने उसे विनाश की ओर ढकेल दिया।

आधुनिक प्रतिस्पर्धा में जब कोई उपलब्धि मिलती है तो प्राय: घमण्ड घर कर लेता है। किन्तु सच्चा विद्यार्थी वही है जो सफलता में भी विनम्र रहे। जैसे वटवृक्ष जितना विशाल होता है, उतना ही गहरा। उसकी जड़ों में धैर्य और स्थिरता होती है। युवा यदि अहङ्कार को त्याग कर विनम्रता और सेवाभाव अपनाएँ, तो उनके गुण सुरक्षित रहेंगे और समाज में उनका प्रभाव स्थायी होगा।

Explanation–Just as water gradually leaks away from a vessel with a hole, so too the virtues and learning of a student seep out through the fissure of arrogance. The larger the hole, the faster the loss; likewise, the stronger the ego, the swifter the decay of character.

Humility is the ornament of knowledge. A humble scholar becomes a lamp for others, but a proud one-no matter how learned-becomes an object of ridicule and ultimately falls into ruin. Duryodhana in the Mahabharata is a telling example: endowed with wealth, power, and courage, yet undone by the hole of pride.

In a world of competition and rapid success, arrogance often creeps in uninvited. But the true student is the one who, even in triumph, remains grounded. The greater the banyan tree, the deeper its roots; in the same way, the greater the achievement, the deeper should be the humility. By rejecting pride and embracing modesty and service, young people can safeguard their virtues and make their influence enduring.

❀❀❀

66

खयंति विज्जत्थि-गुणा, तह कदायार-अविणय-पमादेहि।
जह झंझा णिव्वावदि, पज्जलिदं दीवं खणेगे॥66॥

जिस प्रकार आंधी एक क्षण में प्रज्ज्वलित दीप को बुझा देती है उसी प्रकार कदाचार, अविनय व प्रमाद से विद्यार्थी के सभी गुण नष्ट हो जाते हैं।

As a storm can snuff out a glowing lamp in an instant, so too do misconduct, indiscipline and carelessness wipe away all the virtues of a student.

व्याख्या–जिस प्रकार प्रचण्ड आँधी एक क्षण में प्रज्ज्वलित दीपक को बुझा देती है, उसी प्रकार जब विद्यार्थी अपने आचरण में दोष, गुरुजन के प्रति अविनय और जीवन में प्रमाद को स्थान देता है, तो उसके अर्जित सभी गुण और संस्कार पलभर में नष्ट हो जाते हैं। दीपक को जलाना कठिन है, परन्तु बुझाना अत्यन्त सरल। उसी तरह शिक्षा और गुणों का अर्जन वर्षों की तपस्या है, जबकि प्रमाद और दुश्चरित्र उन्हें क्षणमात्र में मिटा देता है।

शास्त्रों में कहा गया है–"विनय ही वह द्वार है, जिससे ज्ञान का प्रकाश भीतर प्रवेश करता है।" यदि यह द्वार अविनय से बंद हो जाए, तो शिक्षा भीतर तक पहुँच ही नहीं सकती। भर्तृहरि की नीतिशतक में भी उल्लेख है कि

"अविनयी व्यक्ति की विद्या वैसे ही निष्फल है, जैसे बिना सुगन्ध का पुष्प।"

आज की दुनिया में अनेक आकर्षण हैं–डिजिटल दुनिया, त्वरित सुखों का मोह, और आलस्य का वातावरण। यदि विद्यार्थी अनुशासनहीनता और प्रमाद का शिकार हो जाए, तो उसकी प्रतिभा भी नष्ट हो जाती है। परन्तु जो युवा संयम और विनय को थामे रहते हैं, वे तूफानों में भी दीपक की तरह स्थिर प्रकाश देते हैं।

शिक्षा केवल पुस्तकों का संग्रह नहीं है, बल्कि वह जीवन के गुणों का दीप है। यदि दीप को आँधी से बचाना है, तो आचरण की मर्यादा, विनय और सतर्कता की ढाल सदैव साथ रखनी होगी। तभी विद्यार्थी अपने गुणों को सुरक्षित रखकर समाज और स्वयं दोनों को आलोकित कर सकता है।

Explanation–Just as a fierce storm can extinguish a shining lamp in a single instant, so too do misconduct, disrespect toward teachers, and negligence destroy all the virtues a student has acquired. To kindle a flame requires great effort, but to put it out takes but a breath; in the same way, cultivating virtues is the labour of years, while losing them through heedlessness takes only a moment.

The scriptures affirm: "Humility is the doorway through which the light of knowledge enters." If that doorway is sealed by arrogance or irreverence, education cannot penetrate the heart. As Bhartahari

observed in his Nitishataka, “The learning of a disrespectful man is as fruitless as a flower without fragrance.”

In a world of endless distractions–digital temptations, fleeting pleasures, and the ease of idleness–carelessness can swiftly destroy talent. Yet those who hold firmly to discipline and humility shine like lamps that remain steady even in the storm.

Education is not merely the gathering of texts, but the lighting of life with virtue. To protect this lamp, one must shield it with righteous conduct, humility, and vigilance. Only then can students preserve their qualities and spread light to themselves and to society.

❀❀❀

67

तड-माविदुं असक्को, कद्दमे णिमग्गो गयरायो जह।
पणक्खविसयासत्तो, तह सगलक्खं पप्पोदुं पि॥67॥

जिस प्रकार कीचड़ में फँसा हाथी तट पर आने में असमर्थ होता है, उसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय विषयों में आसक्त जीव अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में भी असमर्थ होता है।

As an elephant trapped in mire cannot reach the bank,so too the soul entangled in sensual attachments is rendered powerless to attain its true goal.

व्याख्या–जिस प्रकार कीचड़ में फँसा हुआ हाथी अपनी पूरी शक्ति के बावजूद किनारे पर आने में असमर्थ हो जाता है, उसी प्रकार जब जीव पञ्चेन्द्रिय विषयों रूप, रस, गन्ध, शब्द और स्पर्श–में आसक्त हो जाता है, तो वह अपने जीवन के उच्चतम लक्ष्य को प्राप्त करने में असमर्थ हो जाता है। कीचड़ हाथी की अपार शक्ति को बाँध देता है; वैसे ही इन्द्रिय विषयों की लिप्सा आत्मा की अमूल्य शक्ति को जकड़ देती है।

इन्द्रिय विषयों में फँसना आत्मा के पंख बाँधने के समान है। सम्यक शिक्षा वही है, जो इन बन्धनों से मुक्ति दिलाए और आत्मा को उसके लक्ष्य की ओर अग्रसर करे।

जब भीम अपने बल पर गर्व करते थे, तब कृष्ण उन्हें समझाते थे कि वास्तविक बल आत्मसंयम में है, न कि मात्र

शारीरिक शक्ति में। यही संदेश यहाँ निहित है—हाथी की तरह प्रचण्ड बलवान होते हुए भी यदि इन्द्रियों के कीचड़ में फँस गए, तो गति रुक जाएगी।

आज के युवाओं के लिए यह गाथा दर्पण है। आधुनिक जीवन में असंख्य आकर्षण—सोशल मीडिया की लत, नशे का प्रलोभन, भोग-विलास का मोह—ये सब उसी कीचड़ के रूप हैं। यदि युवा अपनी ऊर्जाओं को इन विषयों में उलझा दें, तो उनका उज्ज्वल भविष्य थम जाता है। परन्तु जो आत्मसंयम और विवेक का मार्ग अपनाते हैं, वे अपने लक्ष्य—चाहे वह शैक्षिक हो, व्यावसायिक हो या आध्यात्मिक-निश्चित ही प्राप्त करते हैं।

जैसे हाथी को कीचड़ से निकालने के लिए बाहरी सहायता चाहिए, वैसे ही जीव को इन्द्रिय विषयों से निकालने के लिए सम्यक शिक्षा और गुरु मार्गदर्शन चाहिए। यही शिक्षा आत्मा को उसकी ऊँचाईयों तक ले जाती है।

Explanation–Just as an elephant, once trapped in a swamp, finds itself unable to reach the bank despite its immense strength, so too does a soul that clings to the pleasures of the five senses, fail to attain its higher goal. The mire binds the elephant’s mighty power; sense-attachments shackle the soul’s innate energy.

The Jain Acharyas have declared that indulgence in sense-objects is like binding the wings of the soul. True education is that which frees one from such

fetters and directs the self toward its ultimate aim.

A fitting example is found in the Mahabharata, where Krishna reminded Bhima that true strength lies not in physical might, but in self-restraint. The elephant's strength is wasted if mired in mud; in the same way, human talent and potential are squandered when sunk in sensory indulgence.

The modern swamp is made of distractions–social media addictions, temptations of intoxication, and the allure of luxury. If one's energies are consumed there, progress halts. Yet the youth who embrace discipline and discernment stride steadily toward their goals, whether academic, professional, or spiritual.

Just as the elephant needs help to be freed from the swamp, so does the soul require the guidance of right education and the counsel of teachers to rise above the mire of the senses. Only then does the soul ascend to its destined heights.

❀❀❀

68

माणस-सिक्खा रुंधदि, दुव्वसण-पाव-दुह-मग्गं ताणं।
णिम्मेर-कज्जं धम्म-कुडुंब-समायाण दोहं पि॥68॥

मानसिक शिक्षा दुर्व्यसन, पाप व दुःख के मार्ग का, उनके मर्यादा रहित वा निर्लज्ज कार्यों का एवं धर्म, परिवार व समाज के प्रति द्रोह का भी निरोध करती है।

Mental education restrains vices, sin, and the path of suffering. It prevents shameless and unruly conduct and curbs rebellion against religion, family, and society.

व्याख्या–मानसिक शिक्षा केवल ज्ञान का ही विषय नहीं है, यह मनुष्य के विचारों का रक्षा कवच है। यही शिक्षा है जो व्यक्ति के मन को संयमित करती है और उसे दुर्व्यसनों से दूर रखती है। जब मन नियन्त्रित होता है, तो वाणी और कर्म भी निर्मल हो जाते हैं।

जैसे एक बाग बिना माली की देखभाल के खरपतवार से भर जाता है, वैसे ही मन यदि शिक्षा से रहित हो तो पाप और अवगुणों से भर जाता है। किन्तु यदि शिक्षा रूपी माली मन की देखभाल करता है, तो वही मन सुगन्धित पुष्पों के समान सद्गुणों से शोभित होता है।

आधुनिक समाज में नशे, असंयमित जीवन, और इंटरनेट-मोबाइल का अत्यधिक प्रयोग युवाओं की मानसिक शान्ति को भङ्ग कर रहे हैं। मानसिक शिक्षा ही वह शक्ति

है, जो उन्हें विवेकशील बनाती है, मर्यादाओं का मूल्य सिखाती है और परिवार व समाज के प्रति उत्तरदायित्व का भाव जगाती है।

मानसिक शिक्षा केवल पुस्तकीय ज्ञान नहीं है, बल्कि वह ज्योति है जो भीतर के अन्धकार को मिटाती है। यही शिक्षा मनुष्य को मर्यादा में रखती है, धर्म–परिवार–समाज के प्रति समर्पण भाव जगाती है और जीवन को उच्चतम पथ पर अग्रसर करती है।

Explanation–Mental education is not merely knowledge, it is the protective armor of human thought. It disciplines the mind, distances it from vice, and makes speech and conduct pure.

Just as a garden, left untended, is overrun by weeds, so too a mind without the care of education is filled with sins and impurities. But when education tends the mind like a gardener, it blossoms with fragrant virtues.

Modern distractions–intoxication, unrestrained living, the excessive use of mobile and internet–erode mental peace. Mental education alone offers the power of discernment, teaches values of restraint, and awakens responsibility toward family and society.

Mental education is not book-learning; it is an inner light that dispels darkness. It preserves dignity, awakens devotion to religion and society, and leads humanity toward the highest path of life.

❀❀❀

69

आध्यात्मिक शिक्षा

भवदुहाणि णस्संते, अज्झप्पविज्जाबलेण णियमेण।
दुह-कारग-कम्माणं, णासगा अज्झप्पविज्जा दु॥69॥

आध्यात्मविद्या के बल से नियम से संसार के दुःखों का नाश होता है। आध्यात्मविद्या दुःखकारक कर्मों की नाशक है।

By the strength of spiritual knowledge, the sorrows of worldly existence are destroyed in due course. Spiritual wisdom alone annihilates the karmas that cause suffering.

व्याख्या—आध्यात्मविद्या वह शाश्वत दीपक है, जो मनुष्य को भीतर से आलोकित करती है। संसार में दुःख का मूल कारण हमारे कर्मबन्धन हैं, और इन बन्धनों को काटने का सामर्थ्य केवल आध्यात्मविद्या में ही निहित है। जब ज्ञान साधना और आत्मचिन्तन से जुड़ता है, तो वह व्यक्ति को दुखों से परे ले जाकर शान्ति और मोक्ष की ओर अग्रसर करता है।

"आध्यात्म ही कल्याण का मार्ग है।" जैसे तेज धूप में केवल शीतल छाया ही शान्ति दे सकती है, वैसे ही जीवन की तपती धूप से मुक्ति केवल आध्यात्मविद्या प्रदान करती है।

युवा पीढ़ी के लिए इसका विशेष महत्व है। आज वे बाहरी भौतिक उपलब्धियों की दौड़ में थक कर अवसाद

और तनाव के शिकार हो रहे हैं। यदि आध्यात्मविद्या को जीवन का अंग बनाया जाए तो वही ज्ञान उन्हें आत्मबल देगा, और जीवन की कठिनाइयों को सहने योग्य बनाएगा।

आध्यात्मविद्या दु:खों की विनाशक है और सुख का सच्चा साधन है। यह कर्मों की जञ्जीरों को काटती है और आत्मा को उसकी शुद्ध, स्वतन्त्र स्थिति की ओर ले जाती है।

Explanation–Spiritual knowledge is the eternal lamp that illumines the inner being. The root of sorrow lies in karmic bondage, and it is only through spiritual wisdom that these fetters can be severed. When knowledge is wedded to meditation and self-reflection, it elevates the soul beyond suffering and guides it toward peace and liberation.

"Spirituality is the path of supreme welfare." Just as in the scorching heat, only the cool shade brings relief, so too in the burning trials of life, spiritual knowledge alone grants solace.

For the youth of today, immersed in the relentless race of material achievement, depression and stress are frequent companions. Spiritual knowledge, when embraced, becomes their inner strength, granting discernment over karmic actions and enabling them to endure life's challenges with serenity.

Spiritual wisdom is the destroyer of sorrow and the true path to happiness. It severs the chains of karma and restores the soul to its pure, liberated state.

❀❀❀

70

सामण्णो जीवो अवि, सत्तीए सिद्ध-सुद्ध-परमप्पा।
पत्तेयं विज्जत्थी, मण्णेज्ज एरिसो विणयेण॥70॥

प्रत्येक विद्यार्थी को विनयपूर्वक ऐसा मानना चाहिए कि सामान्य जीव भी शक्ति से सिद्ध शुद्ध परमात्मा हैं।

A student, with humility, should believe that every ordinary being too has the potential to become a perfected, pure soul.

व्याख्या—यह गाथा विद्यार्थी को नम्रता और विवेक का पाठ पढ़ाती है। आध्यात्म के आलोक में कोई भी जीव तुच्छ नहीं है, हर आत्मा में असीम सामर्थ्य छिपा है। जैसे बीज में विशाल वटवृक्ष बनने की क्षमता होती है, वैसे ही प्रत्येक जीव में सिद्ध परमात्मा बनने की सम्भावना विद्यमान है।

"सभी जीव आत्मा के शुद्ध स्वरूप को धारण करने में सक्षम हैं।" यदि विद्यार्थी इस दृष्टिकोण को अपनाता है, तो उसमें अहङ्कार का स्थान नहीं रहता। वह अपने सहपाठियों, शिक्षकों, और समाज के प्रत्येक सदस्य को सम्मान की दृष्टि से देखता है। यही दृष्टिकोण सामाजिक सौहार्द और आत्मिक प्रगति का आधार बनता है।

जैसे कोई साधारण कोयला उचित ताप और दाब पाकर हीरे में परिवर्तित हो सकता है, वैसे ही प्रत्येक जीव साधना और सदाचार से परमात्मा का तेज प्राप्त कर सकता है।

आज के युवाओं के लिए यह संदेश और भी महत्त्वपूर्ण है। प्रतियोगिता और ईर्ष्या के वातावरण में वे प्रायः दूसरों को कमतर आँकते हैं। यदि वे यह मान लें कि हर आत्मा भावी परमात्मा है, मनुष्य, पशु, पक्षी के समान चींटी आदि यहाँ तक कि पेड़-पौधों में भी प्राण हैं तो उनमें उनके प्रति संवेदना, करुणा, सहयोग, और सच्चा आत्मविश्वास जागेगा। फिर वे उन्हें सतायेंगे नहीं, मारेंगे नहीं।

हर जीव में छिपे परमात्मा को पहचानना–यही शिक्षा है, यही अध्यात्म है। विद्यार्थी यदि इस सत्य को आत्मसात कर ले, तो उसका जीवन न केवल ज्ञानमय होगा, बल्कि करुणा, नम्रता और आत्मविकास से परिपूर्ण भी होगा।

Explanation–This verse teaches the student humility and discernment. In the light of spirituality, no being is insignificant. Each soul harbors infinite potential. Just as a seed has the power to grow into a mighty banyan tree, so too every living being has within it the possibility of attaining the state of the perfected self.

All beings are endowed with the essence of the Supreme Self. When a student embraces this view, pride dissolves. He learns to respect his peers, teachers, and every member of society. This perspective becomes the foundation of social harmony and spiritual progress.

Just as common carbon, under pressure, transforms into a diamond, so too the ordinary soul, through discipline and virtue, shines with the brilliance of divinity.

For today's youth, immersed in competition and rivalry, this truth holds special relevance. If they realize every soul is a potential Supreme Soul–be it in humans, animals, birds, tiny creatures, or even in trees and plants–the heart awakens to empathy, compassion and harmony. In such awareness, there remains no urge to hurt or to kill.

To recognise the divine within all beings, is true education, and this is true spirituality. When a student internalizes this truth, his life blossoms with knowledge, compassion, humility, and self-realisation.

❀❀❀

71

रुक्खरूवे फलदाण-मत्त-णियदी पत्तेयं बीयस्स।
जह तह भव्वजीवस्स, सुद्धप्पजुद-सिद्धावत्था।।71।।

जैसे वृक्ष के रूप में फल देने मात्र की नियति प्रत्येक बीज की है, वैसी ही भव्य जीव की नियति शुद्धात्मा से युक्त सिद्धावस्था है।

Just as it is the destiny of every seed to grow into a tree and bear fruit, so too is it the destiny of every noble soul to attain the state of a pure and liberated Self."

व्याख्या—मनुष्य जीवन का सारा रहस्य इसी सरल उपमा में छिपा हुआ है। बीज चाहे किसी भी भूमि में गिरा हो, उसका अन्तर्निहित स्वभाव है वृक्ष बनना और फल देना। वही उसकी नियति है। उसी प्रकार, भव्य जीव का सहज स्वरूप है—शुद्धात्मा की प्राप्ति और सिद्धावस्था की ओर अग्रसर होना। यह कोई बाहरी वरदान नहीं, बल्कि उसकी आत्मा का मौलिक स्वरूप है।

बीज यदि पथरीली भूमि पर भी गिर जाए तो अंकुरण में विलम्ब होता है, पर उसकी बीजरूप शक्ति नष्ट नहीं होती। उसी प्रकार, आत्मा भी यदि कषायों और मोह के कठोर आवरणों में दब जाए, तो उसका शुद्ध स्वरूप दब जाता है, नष्ट नहीं होता।

एक माली ने बीज को साधारण समझकर सड़क पर फेंक दिया। वर्षा आई, मिट्टी जमी और वही बीज धीरे-धीरे अंकुर बनकर इतना विशाल वृक्ष बना कि राहगीरों को छाया देने लगा। यही आत्मा की कहानी है। यदि वर्तमान में हम दुर्बल, भ्रमित या दोषों में घिरे हों, तो भी हमारे भीतर का 'सिद्धत्व का बीज' कभी नष्ट नहीं होता। साधना, संयम और शिक्षा की वर्षा मिलते ही वह अंकुर फूटता है।

हर विद्यार्थी के भीतर असीम सम्भावनाएँ छिपी हैं। हो सकता है वे अभी आलस्य, विकर्षण या असमंजस से जूझ रहे हों, पर उनका नियत लक्ष्य है-अपनी आत्मा को जाग्रत कर सच्चा मानव और अन्ततः मुक्त आत्मा बनना। जैसे बीज फलदायी वृक्ष बनने तक अनेक आँधियाँ और ऋतुएँ सहता है, वैसे ही युवाओं को भी परीक्षाओं और संघर्षों से गुजरना पड़ता है। पर उन्हें यह स्मरण रखना चाहिए कि उनकी असली पहचान असफलताओं से नहीं, बल्कि भीतर छिपी सिद्धि की सम्भावना से होती है।

हर जीव अपने भीतर सिद्धावस्था का बीज लिए हुए है। शिक्षा, साधना और सदाचार उस बीज को वृक्ष में बदलने वाली वर्षा और मिट्टी हैं। इस सत्य को समझकर हर युवा अपने जीवन को नई दिशा दे सकता है।

Explanation–The essence of life lies hidden in this metaphor. A seed, regardless of where it falls, carries within it the inherent potential to grow into a tree. This is its destiny. Likewise, the destiny of every noble soul is not bound by external circumstances but

by its innate nature to realise the pure Self and ascend to the state of Siddha.

Even if a seed falls upon rocky soil, its inner power of germination is not destroyed; it merely awaits the right season. In the same way, the soul, though covered by layers of passions and delusion, never loses its essential purity.

Once a gardener threw away a seed on the roadside, deeming it worthless. But when the rains came, the seed sprouted, grew, and eventually became a huge tree that offered shade to travellers. So it is with the soul: though neglected, once nourished by the rain of discipline, restraint, education, and virtue, it unfolds its true greatness.

Within every student lies hidden potential waiting to blossom. Failures, distractions, and confusions may cloud the present, but the essential truth remains: they are destined to realise their inner strength. Just as the seed grows through storms and seasons to bear fruit, so too must they endure trials with courage. Their true identity is not defined by present limitations but by the infinite possibility of becoming enlightened, compassionate, and ultimately liberated beings.

Within every being lies the seed of perfection. Education, discipline and righteous conduct serve as the rain and soil that nurture this seed into a flourishing tree. Realising this truth, each individual can steer life towards a higher purpose.

❀❀❀

72

णाण-पयासो दु अप्प-पदेसे अज्झप्प-मिहिरुदयेणं।
अक्कुदयेण पयासो, लोए गगणंगणे जह तह॥72॥

जैसे गगनाङ्गन में सूर्य के उदय से लोक में प्रकाश होता है, उसी प्रकार अध्यात्म रूपी सूर्य के उदय से आत्मा के प्रदेश में ज्ञान का प्रकाश होता है।

Just as with the rising of the sun in the sky the world is illuminated, in the same way, with the rising of the sun of spirituality, the regions of the soul are illumined with the light of knowledge.

व्याख्या—जिस प्रकार आकाश में सूर्य का उदय समस्त जगत् को आलोकित करता है और अन्धकार को नष्ट कर देता है, उसी प्रकार जब मनुष्य के भीतर अध्यात्म रूपी सूर्य उदित होता है, तो उसकी आत्मा के प्रत्येक कोने में ज्ञान का प्रकाश फैल जाता है।

सांसारिक अज्ञान रूपी अन्धकार विलीन हो जाता है और आत्मा अपने वास्तविक स्वरूप को पहचान सकता है।

बाह्य सूर्य लोक को प्रकाशित करता है, परन्तु अध्यात्म का सूर्य आत्मा के भीतर छिपे दिव्य खजाने को प्रकट करता है। यही ज्ञान का आलोक मुक्ति का पथ प्रशस्त करता है।

Explanation–Just as the rising sun illuminates the entire world and dispels the darkness, so too, when the sun of spirituality rises within a person, the light of knowledge spreads to every corner of the soul.

The darkness of worldly ignorance vanishes, and the soul begins to recognise its true nature.

The outer sun illumines the world, but the sun of spirituality reveals the hidden divine treasure within the self.

It is this radiance of knowledge that paves the path to liberation.

❀❀❀

73

अज्झप्पक्को सोसदि, पावपंकं विअसदि पुण्णकमलं।
कामं विसय-कसायं, विणस्सेदि अज्झप्प-विज्जा॥73॥

आध्यात्म का सूर्य पाप रूपी पङ्क का अवशोषण करता है एवं पुण्य रूपी कमल विकसित होता है। आध्यात्मविद्या कामवासना एवं विषय-कषाय का नाश करती है।

The sun of spirituality absorbs the mire of sin and allows the lotus of virtue to bloom. Spiritual wisdom destroys lust, attachment to worldly pleasures and the turmoil of passions."

व्याख्या–मनुष्य का हृदय एक सरोवर है। जब उसमें पाप, कषाय और वासनाओं की गाद भर जाती है, तो आत्मा की निर्मल ज्योति मलिन हो जाती है। किन्तु जब अध्यात्म का सूर्य उदित होता है, तो उसकी किरणें उस मलिन पङ्क को सोख लेती हैं और भीतर छिपा हुआ पुण्यरूपी कमल खिल उठता है। जैसे कीचड़ में भी कमल अपनी शोभा और सुगन्ध से सबको आकर्षित करता है, वैसे ही अध्यात्म का आलोक प्राप्त करने वाला जीव संसार के बीच रहकर भी पवित्र, संयमी और कल्याणकारी जीवन जीता है।

आचार्यों ने कहा है–"अध्यात्म का प्रकाश आते ही मोह की रात्रि समाप्त हो जाती है।" वास्तव में अध्यात्मविद्या वह साधन है जो मन को संयत करती है, इन्द्रियों को नियंत्रित करती है और आत्मा को शुद्ध बनाती है। यह वासनाओं और

विषयभोगों की जंजीरों को काटकर आत्मा को स्वतन्त्रता और प्रकाश की ओर ले जाती है।

शास्त्रों और समाज में अनेक उदाहरण मिलते हैं। एक युवक, जो पहले धन, ऐश्वर्य और भोगों में डूबा हुआ था, एक सन्त के उपदेश से भीतर झांका। जब उसने आत्मा को पहचाना, तो धीरे-धीरे दुराचार और भोगों से मुक्ति पाई, संयम अपनाया और आज वही व्यक्ति समाज के लिए सदाचार का दीपक बन गया।

आधुनिक जीवन में सोशल मीडिया, फैशन और उपभोग की संस्कृति उनके लिए पङ्क के समान है। लेकिन यदि वे अध्यात्म का सूर्य अपने जीवन में उगाते हैं—ध्यान, सदाचार, आत्मचिन्तन और सेवा जैसे साधनों से-तो वही पंक उनकी प्रगति का आधार बन सकता है। जैसे कमल कीचड़ में रहते हुए भी स्वच्छ और सुगन्धित खिलता है, वैसे ही युवा संसार की गन्दगी के बीच रहकर भी उज्ज्वल और संयमी जीवन जी सकते हैं।

अध्यात्म का वास्तविक कार्य आत्मा के भीतर छिपी शक्ति को प्रकट करना है। यह पाप को मिटाकर पुण्य को प्रकट करता है, वासनाओं को नष्ट कर संयम को पुष्पित करता है। यही जीवन की सच्ची उन्नति है।

Explanation–The human heart is like a pond. When covered with the sludge of sin and passions, the radiance of the soul is dimmed. But when the sun of

spirituality rises, its rays absorb the mire and awaken the hidden lotus of virtue. Just as a lotus blossoms in muddy waters, untouched in its purity and fragrance, so does the soul that receives the light of spiritual wisdom.

As the scriptures declare: "When the light of spirituality dawns, the night of delusion ends." Spiritual knowledge disciplines the mind, restrains the senses, and purifies the soul. It breaks the chains of indulgence and attachment, guiding the self toward freedom and illumination.

Scriptures offer many examples. A young man once drowned in luxury and indulgence heard the words of a saint. He turned inward, realised his true self, and slowly abandoned his vices. Today, he shines as a beacon of virtue for society.

The culture of materialism, digital distractions, and desires is the mire of our age. Yet if they allow the sun of spirituality to shine through practices like mindfulness, morality, and service, even this mire can nourish their inner growth. Like a lotus that blossoms unsullied in mud, they too can rise above temptations and live radiant, disciplined lives.

Spirituality is the power that transforms filth into fragrance and bondage into freedom. It absorbs sin, blossoms virtue, and leads the soul toward its highest potential. This is true progress of life.

❀❀❀

74

पत्तपरमसत्तीए, अज्झप्पणाणेण पावदि विजयं।
आगद-पडिऊलदासु, जीवणे विसमपरिट्ठिदीसु।।74।।

आध्यात्मज्ञान से प्राप्त परम शक्ति से जीव जीवन में आने वाली प्रतिकूलताओं व विषम-परिस्थितियों में भी विजय प्राप्त करता है।

Through the supreme power gained from spiritual knowledge, the soul conquers adversities and emerges victorious even in the most difficult situations of life.”

व्याख्या–जीवन का मार्ग सदैव समतल नहीं होता। इसमें कहीं सुखद पुष्प-पथ है तो कहीं कठिन शूल-पथ भी। जब प्रतिकूलताएँ सामने आती हैं–कभी असफलता, कभी आलोचना, कभी अभाव या रोग के रूप में-तब सामान्य व्यक्ति टूट जाता है। परन्तु वह जीव, जिसने आध्यात्मज्ञान से परमशक्ति प्राप्त की है, न कभी विचलित होता है और न ही निराश।

आध्यात्मज्ञान आत्मा को यह स्मरण कराता है कि मैं नश्वर देह नहीं, अपितु शुद्ध, बुद्ध, मुक्त आत्मा हूँ। इस ज्ञान से उत्पन्न शक्ति मनुष्य को हर संकट में दृढ़ बना देती है। जैसे गहरी जड़ों वाला वटवृक्ष आँधियों के बीच भी अडिग खड़ा रहता है, वैसे ही आध्यात्म से सशक्त आत्मा विषम परिस्थितियों में भी अपने लक्ष्यों को साध लेती है।

"सच्चा विजेता वही है, जो पहले अपने भीतर के भय, मोह और दुर्बलताओं पर विजय पाता है।" यही आत्मबल आध्यात्म का वास्तविक वरदान है।

तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथ स्वामी के जीवन को देखें। घोर कष्ट, ओले, शोले, पत्थरों की वर्षा–सब कुछ सहकर भी उन्होंने अपने व्रत और सङ्कल्प को नहीं छोड़ा। यही आत्मज्ञान की परमशक्ति थी जिसने उन्हें कर्मों से मुक्त कर केवलज्ञानी–महान विजेता बनाया।

आज के समय में युवाओं के सामने प्रतियोगी परीक्षाओं का तनाव, करियर का दबाव, सोशल मीडिया की तुलना, और कभी-कभी असफलताओं का बोझ होता है। ऐसे समय में यदि वे अध्यात्म से जुड़ते हैं–ध्यान, स्वाध्याय और आत्मचिन्तन करते हैं तो उनका आत्मबल इतना प्रबल हो जाता है कि कोई भी प्रतिकूलता उन्हें पराजित नहीं कर सकती। सफलता उन्हीं के कदम चूमती है जो भीतर से मजबूत होते हैं।

आध्यात्मज्ञान से मिलने वाली परमशक्ति मनुष्य को जीवन की सबसे कठिन परिस्थितियों में भी विजयी बनाती है। यह शक्ति बाहरी साधनों से नहीं, बल्कि आत्मा की गहराई में जागृत आस्था, धैर्य और आत्मबल से प्राप्त होती है।

Explanation–Life is not always smooth; it alternates between roses and thorns. When failures, criticisms, poverty, or illness strike, an ordinary person may collapse. But the one strengthened by spiritual wisdom never loses courage or hope.

Spiritual knowledge reminds us: “I am not this perishable body, but the pure, enlightened, eternal soul.” This realisation generates an inner power that enables a person to withstand storms like a deeply rooted tree.

“The true conqueror is he who first defeats his inner fears and weaknesses.” This inner strength is the true gift of spirituality.

Despite dreadful sufferings–the pelting of hail, the blaze of flames, the raining of stones–Lord Parshvanath bore it without ever forsaking his resolve. That was the supreme strength of spiritual knowledge, which liberated him from the chains of karmas and elevate them to the state of omniscience–the greatest of all victors.

In today’s world, young people face exam stress, career struggles, peer pressure, and the weight of constant comparisons. If they cultivate spirituality–through meditation, self-study, and introspection–they build such inner resilience that no adversity can defeat them. True success bows before inner strength.

The supreme power of spirituality makes a person unconquerable. Victory in life comes not from external resources but from the awakened strength of the soul.

❀❀❀

75

अज्झप्पणाणबलेण, णिस्सीम-णाणं दंसणं सत्तिं।
परमाणंदेण जुदं, अणुवमं बलं तह पप्पोदि।।75।।

अध्यात्मज्ञान के बल से जीव निःसीम (अनन्त) ज्ञान, दर्शन, शक्ति व परमानन्द से युक्त अनुपम बल को प्राप्त करता है।

Through spiritual wisdom, the soul attains infinite knowledge, infinite perception, infinite power, and infinite bliss–an inexhaustible inner strength.

व्याख्या–जब जीव अध्यात्म का आलम्बन लेता है, तब उसके भीतर छिपी हुई असीम क्षमताएँ जागृत होने लगती हैं।

आध्यात्मिक ज्ञान का चमत्कार यह है कि वह जीव को सीमाओं से परे ले जाता है। जैसे दीपक जलते ही अन्धकार लुप्त हो जाता है, वैसे ही आत्मबोध होते ही अज्ञान का तमस नष्ट हो जाता है और आत्मा अपनी मौलिक विभूतियों–अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त शक्ति और अनन्त आनन्द–से जुड़ जाती है।

जैसे सूर्य बादलों के पीछे छिप जाता है तो उसका प्रकाश दिखाई नहीं देता, किन्तु बादल हटते ही वही सूर्य सम्पूर्ण जगत् को आलोकित कर देता है। उसी प्रकार कर्मरूपी बादलों से ढकी आत्मा जब अध्यात्मज्ञान की किरण से शुद्ध होती है, तब उसकी अनन्त विभूतियाँ प्रकट हो जाती हैं।

साधारणतः मनुष्य अपने आपको सीमित मान लेती है–''मैं यह नहीं कर सकता, मुझमें इतनी शक्ति नहीं है।'' किन्तु आध्यात्मिक शिक्षा उन्हें यह विश्वास देती है कि उनकी आत्मा असीम शक्ति युक्त है। यदि वे ध्यान, स्वाध्याय और सन्मार्ग का अनुसरण करें, तो वे जीवन में अद्भुत सामर्थ्य प्राप्त कर सकते हैं। यही सामर्थ्य उन्हें भय, अवसाद और नकारात्मकता से मुक्त कर सच्चे आनन्द की ओर ले जाती है।

आध्यात्मिक ज्ञान केवल जानकारी भर नहीं, बल्कि आत्मा की मौलिक विभूतियों का उद्घाटन है। यह जीव को उसकी वास्तविक स्थिति–अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त शक्ति और अनन्त आनन्द–से परिचित कराकर उसे परम बल से सम्पन्न बना देता है।

Explanation– When a being turns to spirituality, the boundless energies concealed within start to awaken.

The marvel of spiritual wisdom lies in its power to carry the soul beyond every boundary. As a lamp's flame dispels the gloom of night, so does the light of self-realisation dissolve the darkness of ignorance, restoring the soul to its innate radiance. Just as the sun, hidden by clouds, reveals its brilliance once the clouds disperse, so too the soul, when freed from karmic veils, manifests its boundless attributes.

Ordinarily, man thinks of himself as limited: "I know so little, I can do so little." But spirituality reveals that the soul is inherently infinite.

With meditation, study, and right conduct, they can unlock immense strength and joy within themselves, rising above fear and despair.

Spiritual knowledge is not mere learning–it is the revelation of the soul's eternal nature. It leads to infinite wisdom, infinite vision, infinite strength, and infinite bliss.

❀❀❀

76

अज्झप्पजलजुदहिअय-जलासये परमाणंद-कमलाणि।
अज्झप्पणाणहीणा, चित्ते अंकिद-रुक्खादीव॥76॥

अध्यात्म जल से युक्त हृदय रूपी जलाशय में परमानन्द के कमल खिलते हैं। अध्यात्मज्ञान से हीन जीव चित्र में बने वृक्ष आदि के समान है।

When the heart is filled with the water of spirituality, lotuses of supreme bliss blossom within. The being bereft of spiritual knowledge is like a tree painted on canvas–appearing outwardly real, yet lifeless within.

व्याख्या—इस गाथा का आशय अत्यन्त मनोहर है। इसमें अध्यात्म की तुलना उस जल से की गई है, जो हृदय रूपी सरोवर में प्रवाहित होकर परम आनन्द के कमल को खिला देता है। जिस हृदय में अध्यात्म का जल है, वहाँ निर्मलता, शीतलता और जीवन्तता है—वहाँ आनन्द, शान्ति और आत्मिक प्रसन्नता का कमल प्रस्फुटित होता है। इसके विपरीत, अध्यात्म-ज्ञान से हीन जीव ऐसा है मानो चित्र में अङ्कित वृक्ष-जिसे देखकर बाहरी रूप में तो वृक्ष प्रतीत होता है, पर उसमें न हरियाली है, न जीवन का स्पन्दन।

यही कारण है कि जीवन को केवल बाह्य आडम्बरों, पदों या वैभवों से सींचा नहीं जा सकता। यदि हृदय में अध्यात्म का जल नहीं है, तो जीवन सूखा और नीरस रह जाता है। पर जैसे ही आत्मा में अध्यात्म का स्पर्श होता

है, वैसे ही भीतर की सुप्त शक्तियाँ, सुगन्धित कमलों की भाँति, एक-एक कर खिलने लगती हैं।

आज की पीढ़ी प्रायः बाहरी उपलब्धियों की दौड़ में इतनी खो जाती है कि आत्मिक चेतना को नजर अन्दाज कर देती है। परिणाम यह होता है कि बाहर से सब कुछ सम्पन्न प्रतीत होता है, पर भीतर खालीपन और बेचैनी बनी रहती है। यदि वे अपने जीवन में थोड़ी-सी भी साधना, आत्मचिन्तन और अध्यात्म का जल भर दें, तो वही जीवन हरा-भरा हो जाएगा, जिसमें आनंद और शान्ति के कमल खिलेंगे।

आध्यात्म ही जीवन में वास्तविक रस और ताजगी भरता है। बाहरी जीवन चित्र का वृक्ष हो सकता है, पर आन्तरिक जीवन तभी जीवन्त है जब उसमें आध्यात्म का जल प्रवाहित होता है और उसमें परम आनन्द के कमल खिलते हैं।

Explanation–This verse beautifully conveys that spirituality is like water filling the lake of the heart, where the lotus of supreme bliss blossoms. A heart nourished by spiritual water becomes pure, cool, and vibrant-radiating peace, joy, and inner fulfillment. In contrast, a being devoid of spiritual knowledge is like a tree painted in a picture: it may appear to be a tree, but it has no greenery, fragrance, or life.

Life cannot truly flourish through outer show, wealth, or status alone. Without the waters of spirituality, life remains dry and hollow. But the moment the soul is touched by spiritual awareness, the hidden powers within bloom like fragrant lotuses, one after another.

For today's youth, this carries a deep lesson. In chasing worldly achievements, they often ignore their inner self, leading to emptiness despite external success. Just a small stream of spiritual practice, reflection, and mindfulness can turn their life into a flourishing garden of peace and bliss.

Spirituality alone brings vitality and meaning to life. Outwardly one may appear complete, but true inner life blossoms only when the heart is filled with the waters of spirituality, allowing the lotus of supreme bliss to bloom within.

❀❀❀

77

लद्धविस्सगुरुगोरव-भारद-मज्झप्पणाणधारगादु।
तस्स बलेणुसह-राम-वीरादी होज्ज परमप्पा।।77।।

आध्यात्मविद्या का धारक होने से भारत विश्वगुरु के गौरव को प्राप्त है। उस आध्यात्मज्ञान के बल से ही ऋषभदेव, राम, महावीर इत्यादि परमात्मा हुए।

It is by upholding spiritual wisdom that Bharat has earned the honour of World Teacher; and it is by the strength of this spiritual wisdom. Rishabhadeva, Rama, Mahavira and many others realised the supreme and became divine.

व्याख्या–भारत की भूमि का वैभव केवल उसकी भौतिक समृद्धि में नहीं, बल्कि उसकी आध्यात्म विद्या में निहित है। यही कारण है कि इस धरा ने विश्व को दिशा देने वाला ''विश्वगुरु'' का गौरव प्राप्त किया। जब-जब भारत ने अपनी आत्मा की ओर दृष्टि की, तब-तब ऋषभदेव जैसे प्रथम तीर्थंकर, राम जैसे मर्यादा पुरुषोत्तम, और महावीर जैसे निर्विकार सत्य के साधक उत्पन्न हुए। उनका सामर्थ्य किसी भौतिक शक्ति से नहीं, बल्कि आध्यात्म विद्या की अगाध गहराई से था।

आध्यात्म विद्या केवल ग्रन्थों का ज्ञान नहीं है, यह तो आत्मा के भीतर छिपी उस ज्योति को प्रज्वलित करना है

जो मनुष्य को परमात्मा के मार्ग पर ले जाती है। यह वही विद्या है जिसने भारत को आक्रान्ताओं के आघात सहने के बाद भी जीवित रखा, और यही विद्या है जिसने संसार को अहिंसा, सत्य, आत्मसंयम और करुणा का संदेश दिया।

युद्धभूमि में जब अर्जुन मोह से ग्रस्त हुआ, तो श्रीकृष्ण ने उसे कोई शस्त्र नहीं दिया, अपितु आध्यात्मिक ज्ञान का अमृत दिया, जो आज "भगवद्गीता" के नाम से पूरी दुनिया में गूंजता है। यह सिद्ध करता है कि आध्यात्म विद्या केवल भारत की आत्मा ही नहीं, बल्कि उसकी विश्वगुरुता का मूलाधार है।

यदि युवा केवल तकनीकी शिक्षा तक सीमित रहेंगे, तो उनका विकास अधूरा रहेगा। जब वे आध्यात्म को अपनी शिक्षा के साथ जोड़ेंगे, तब ही वे सम्पूर्ण, सन्तुलित और नेतृत्वकारी व्यक्तित्व बन सकेंगे।

Explanation–The glory of Bharat does not lie merely in its material wealth, but in its spiritual wisdom. This is why this land earned the honour of guiding the world as the "World Teacher." Whenever Bharat turned inward towards its soul, noble people like Rishabhadeva, the first Tirthankara, Rama, the embodiment of righteous-ness, and Mahavira, the witness of pure truth were born. Their strength did not come from material power, but from the infinite depth of spiritual wisdom.

Spiritual knowledge is not merely the learning of scriptures; it is the kindling of the inner light of the

soul that leads a human being to the Supreme. It is the wisdom that kept Bharat alive even after enduring the blows of invaders and it is this wisdom that gave the world the message of non-violence, truth, self-restraint and compassion."

When Arjuna was overcome by delusion on the battlefield. Shri Krishna did not hand him a weapon; instead, he bestowed upon him the nectar of spiritual knowledge, which resounds today across the world as the Bhagvad Gita. This proves that spiritual wisdom is not only the soul of Bharat but also the foundation of its role as a World teacher.

If the youth remain confined only to technical education, their growth will remain partial; but when they write spirituality with education, they shall evolve into complete, balanced and truly inspiring leaders.

❀❀❀

78

शिक्षा कैसी हो

सुसिक्खा णेव कयावि, संकिलेस-कारगा भारभूदा।
जीवणाहारभूदा, सव्वाहिय-पिय-सारभूदा॥78॥

सुशिक्षा कदापि सङ्क्लेशकारक व भारभूत नहीं होनी चाहिए। वह जीवन के लिए आधारभूत, सारभूत एवं सबसे अधिक प्रिय होनी चाहिए।

True education should never become burdensome or distressing. It must be the foundation and essence of life, and the learner's most beloved companion.

व्याख्या–सच्ची शिक्षा कभी बोझ नहीं होती। यदि शिक्षा विद्यार्थियों को केवल डर, दबाव और तनाव दे रही है–जैसे कि आपके बच्चों पर एक्जाम स्ट्रेस, ट्यूशन का बोझ, मार्क्स की होड़, और करियर का प्रेशर होता है–तो यह शिक्षा अपने मूल उद्देश्य से भटक चुकी है।

शिक्षा का उद्देश्य है–जीवन को सरल, उज्ज्वल और सार्थक बनाना। वह विद्यार्थियों में आनन्द, आत्मबल और सृजनशीलता जगाए।

एक छात्र रोज सोचता था–"अगर 95% अंक नहीं आए, तो मैं असफल हूँ।" धीरे-धीरे वह उदास और आत्मविश्वासहीन हो गया। एक दिन उसके अध्यापक ने

समझाया–''बेटा, अंक सफलता का पैमाना नहीं हैं। अगर शिक्षा ने तुम्हें सहनशील, ईमानदार और आत्मनिर्भर बना दिया, तो तुम वास्तव में शिक्षित हो।'' उस दिन से वह शिक्षा को बोझ नहीं, बल्कि जीवन की ज्योति समझने लगा।

जब शिक्षा विद्यार्थी के लिए रुचिकर, हृदयस्पर्शी और जीवनोपयोगी होती है, तभी वह प्रिय लगती है। जैसे पौधे के लिए जल अनिवार्य है, परन्तु वही जल यदि अत्यधिक मात्रा में भर दिया जाए तो पौधा नष्ट हो सकता है, वैसे ही शिक्षा भी होनी चाहिए–सन्तुलित, पोषक, और जीवन का आधार।

शिक्षा बोझ न बन सके, बने प्रकाश का द्वार।
सारभूत जो जीवन में, वही है शिक्षा सार॥

आज की पीढ़ी को याद रखना चाहिए कि शिक्षा केवल डिग्री या नौकरी पाने का साधन नहीं है। यह उनके चारित्रिक बल, मानसिक शान्ति और जीवन की दिशा को गढ़ती है। जब शिक्षा प्रिय लगने लगे, तो ही वह सच्ची सुशिक्षा कहलाती है।

Explanation–In today's times, many students face exam stress, pressure of marks, competition, and constant fear of failure. When education becomes nothing but a race for grades and certificates, it strays away from its true purpose.

The real aim of education is to simplify, enlighten, and beautify life. It should inspire creativity, inner strength, and joy in the learner's heart.

There was once a student who believed–“If I don’t score 95%, I am a failure.” He slowly became anxious and lost his confidence. One day, his teacher told him–“Marks are not the true measure of success. If education teaches you honesty, resilience, and self-reliance, then you are truly educated.” From that day, he realised that learning is not a burden, but the very light of life.

Let knowledge never weigh us down, but be the door to light. The essence of life it must remain, making the future bright.

When knowledge is engaging, meaningful, and directly useful in one’s life, it becomes delightful rather than heavy. Just as water is essential for a plant but can destroy it in excess, so too education must be balanced, nourishing, and life-sustaining.

Education should not be reduced to chasing grades or securing jobs. Its true value lies in shaping character, mental peace, resilience, and clarity of purpose. Only when learning becomes beloved, uplifting and life giving, can it be called true education.

❀❀❀

79

सिस्साण इट्ठरूवा, पिया व जीवण-सत्थग-कारिगा य।
सुसिक्खा वरदाणं व, देस-कुल-जादि-उण्णदियरा॥79॥

सुशिक्षा शिष्यों के लिए प्रेयसी के समान इष्ट रूप होती है। सुशिक्षा जीवन को सार्थक करने वाली, देश, कुल व जाति की उन्नति करने वाली एवं वरदान के समान होती है।

True education is like a beloved to the student. It gives meaning to life, becomes the cause of progress for family, society, and nation, and works as a divine blessing.

व्याख्या–सुशिक्षा का सम्बन्ध केवल पढ़ाई या प्रमाण-पत्रों से नहीं, बल्कि हृदय के गहरे स्नेह व आत्मिक आकर्षण से है। जैसे प्रेयसी प्रियतम के लिए प्रेरणा, उत्साह और जीवन का आधार होती है, उसी प्रकार सुशिक्षा विद्यार्थियों के लिए जीवन की प्रेरणा, सम्बल और आनन्द का स्रोत होती है।

सुशिक्षा ही जीवन को सार्थक बनाती है। वह मनुष्य को केवल अपनी उन्नति तक सीमित नहीं रखती, बल्कि उसके परिवार, समाज, जाति और राष्ट्र के उत्थान में भी योगदान करवाती है।

सच्ची शिक्षा प्रेयसी, जीवन में रस घोल।
वरदान सम राष्ट्र को, करे सदा अनमोल॥

प्राचीनकाल में एक बालक था, जिसका नाम अर्जुन था। वह बहुत साधारण परिवार से था। उसके पास धन नहीं था, वैभव नहीं था, लेकिन उसकी एकमात्र प्रिय सङ्गिनी शिक्षा थी।

वह सुबह-सुबह उठकर, पत्तों पर लिखकर अभ्यास करता। भूखा रह जाता; पर पढ़ाई छोड़ता नहीं। गाँव के लोग मजाक उड़ाते–"अरे, पढ़ाई से पेट भरता है क्या?"

किन्तु अर्जुन ने उत्तर दिया–''प्रेयसी भूख को भुला देती है, और शिक्षा मेरी प्रेयसी है।''

कुछ वर्षों बाद वही अर्जुन एक महान विद्वान् बना, जिसने अपने परिवार का नाम रोशन किया और गाँव को भी समृद्धि की राह दिखाई।

आज के युवाओं को शिक्षा को बोझ नहीं, बल्कि जीवनसाथी के समान प्रिय मानना चाहिए। यदि वे शिक्षा से प्रेम करेंगे, तो वह उन्हें सफलता, सम्मान और राष्ट्र निर्माण की ऊँचाइयों तक अवश्य पहुँचाएगी।

Explanation–Education is not merely about certificates or degrees–it is about a deep bond of love and devotion towards knowledge. Just as a beloved inspires, motivates, and becomes a source of joy, true education inspires students to live a purposeful and meaningful life.

It elevates not only the individual but also uplifts the family, community, and the entire nation.

Once, there was a boy named Arjun. He belonged to a poor family, with no wealth or comforts. But he had one true beloved–Education.

He would wake up early, write on leaves to practice, and sometimes sleep hungry but never abandoned his studies. People mocked him, saying, "Can education fill your stomach?"

But Arjun replied; "A beloved makes you forget hunger, and education is my beloved."

Years later, Arjun became a great scholar. His knowledge not only brought honour to his family but also prosperity to his entire village.

Education, like a dearest friend, brings sweetness to the soul, a blessing to the nation's heart, it makes the spirit whole.

Modern students must learn to treat education not as a burden, but as their most cherished companion. When one truly loves learning, it becomes a blessing of success, joy, and nation-building.

❀❀❀

शिक्षाविधि

सिक्खा-उक्किट्ठविही, सा जाए णेव चिंता विसादो।
कसायुव्वेगो भोग-अहिलासा खोहो चित्ते ण॥80॥

जिस विधि से चिन्ता (Tension), विषाद (Depression) न हो, कषायों का उद्वेग, भोगाभिलाषा व चित्त में क्षोभ न हो, वह ही शिक्षा की उत्कृष्ट विधि है।

The method that prevents anxiety and depression, calms the turbulence of passions, eliminates craving for sensory pleasures, and brings peace to the restless mind–that alone is the finest method of education.

व्याख्या–सच्ची शिक्षा वही है जो केवल मस्तिष्क को जानकारी से न भर दे, बल्कि मन को शान्ति प्रदान करे। आज के समय में सबसे बड़ी समस्या यही है कि विद्यार्थी अथवा सामान्य मनुष्य ज्ञान तो अर्जित कर लेता है, परन्तु मानसिक शान्ति खो देता है। चिन्ता और अवसाद आधुनिक जीवन के सबसे बड़े शत्रु हैं। यदि शिक्षा विधि ऐसी हो कि वह व्यक्ति को तनाव से मुक्ति दिलाए, उसके भीतर संयम और सन्तोष का भाव जगाए, और वासनाओं के जाल से बचाए, तभी वह सार्थक है।

कषायों–क्रोध, मान, माया और लोभ का उद्वेग जब कम होता है, तभी मनुष्य का हृदय निर्मल और स्थिर बनता है। शिक्षा का उद्देश्य केवल डिग्री देना नहीं है, बल्कि ऐसा

संस्कार देना है जिससे मनुष्य हर परिस्थिति में सन्तुलित और प्रसन्न रह सके।

शिक्षा का अर्थ केवल अक्षर ज्ञान प्राप्त करना नहीं है। सच्ची शिक्षा विधि वही है, जिससे मानव को मानसिक शान्ति, सन्तुलन और आत्मबल प्राप्त हो सके। यदि पढ़ाई से विद्यार्थी में चिन्ता, तनाव, अवसाद या अतृप्त इच्छाएँ ही बढ़ें, तो वह शिक्षा नहीं, बोझ है।

आज की पीढ़ी का सबसे बड़ा सङ्कट यही है कि वे डिग्रियों और अंकों की होड़ में जीवन का रस खो देते हैं। प्रतियोगिता और तुलना का दंश उन्हें भीतर से कमजोर कर देता है। लेकिन उत्तम शिक्षा का लक्ष्य यह है कि वह आनंदमय जीवन जीने की कला सिखाए।

कषायें–क्रोध, अहङ्कार, कपट और लोभ–जब उफान पर होते हैं, तब मनुष्य के सभी गुण ढक जाते हैं। सच्ची शिक्षा इन्हें नियंत्रित करने का उपाय है। यह हमें यह समझाती है कि वासनाओं का पीछा करने से शान्ति नहीं मिलती बल्कि वह संयम और सन्तोष से मिलती है।

आज का विद्यार्थी ज्ञान के बोझ तले दबा है। प्रतिस्पर्धा इतनी तीव्र है कि हर बच्चा "first rank", "best college" और "high package" की दौड़ में तनावग्रस्त है। माता-पिता की अपेक्षाएँ, समाज का दबाव और डिजिटल दुनिया की तुलना–ये सब मिलकर उसकी आत्मशक्ति को कमजोर कर देते हैं।

परन्तु सही शिक्षा विधि वही है जो तनाव और अवसाद को दूर करे। शिक्षा यदि केवल बोझ बने तो वह शिक्षा नहीं, बन्धन है। शिक्षाविधि तभी समीचीन कही जा सकती है जब वह मन में शान्ति लाए, आत्मबल को बढ़ाए और जीवन को संयमित करे।

एक स्कूल में दो मित्र थे। राहुल हर परीक्षा को युद्ध मानता था। रात भर पढ़ाई, दिन भर चिन्ता उसका चेहरा हमेशा थका और डरा हुआ दिखता। जब अङ्क कम आए तो वह डिप्रेशन में चला गया।

अभय भी उतना ही पढ़ता था, लेकिन साथ ही रोज थोड़ी देर ध्यान करता, खेलों में भाग लेता, और मन को शान्त रखने की आदत डालता। परीक्षा के दिन भी उसके चेहरे पर आत्मविश्वास और शान्ति रहती।

अन्त में, राहुल अङ्क तो ले आया लेकिन खुशी खो बैठा, जबकि अभय ने न केवल शिक्षा प्राप्त की बल्कि जीवन जीने की कला भी सीख ली।

यही अन्तर है–शिक्षा जो बोझ बन जाए और शिक्षा जो आत्मबल बन जाए।

ज्ञान वही जो मन को निर्मल बनाए,
कषायों की अग्नि को शीतल कर जाए।
जहाँ न चिन्ता, न अवसाद का डेरा,
वही है शिक्षा का सच्चा सवेरा।।

Explanation–Education must not merely be a burden of information; it should become the gentle art

of inner balance. In today's age, where students are often crushed under exam stress, career anxiety, and societal pressures, education should act as a shield, not a sword. Its purpose is to free the learner from fear and restlessness, and to cultivate clarity, peace, and discipline.

When passions are subdued, the heart becomes radiant and stable. A truly educated person is not the one who only collects degrees, but the one who has learned how to remain calm in adversity and humble in success.

Education is not just the learning of letters and words. Its true purpose is to cultivate mental strength, balance and self-mastery. If study fills the student's mind with worry, stress, depression and endless desires, then it is not education at all–it is a burden.

The tragedy of today's youth lies in this–that while chasing degrees and marks, they forget to savor the true flavour of life. The pressure of competition and comparison weakness them from within, but true education seeks to nurture the wisdom of living with joy and balance.

When passions–anger, pride, deceit and greed–surge within, they suppress all virtues of a person. True education becomes the guiding light, showing that peace is not in the pursuit of endless desires, but in the calm harbour of self-restraint and contentment.

In today's world, students are often burdened not by ignorance but by stress. The race for top grades,

prestigious colleges, and high-paying jobs has created a culture of anxiety. Parents' expectations, peer comparisons, and the constant pressure of social media drain the vitality of young minds.

But education is not meant to be a weight. If It becomes a burden, it ceases to be education and turns into bondage. The true purpose of education is to bring inner calm, to develop resilience, and to guide the mind away from destructive passions toward constructive balance.

In one school, there were two friends. Rahul treated every exam like a battlefield. He studied under stress, slept little, and lived in constant fear. When his results were not as expected, he collapsed into depression.

Abhay, on the other hand, studied with focus but also practiced meditation, engaged in sports, and cultivated inner peace. Even during exams, he was calm and confident. In the end, Abhay not only gained knowledge but also mastered the art of living joyfully.

This is the difference; one received education as burden the other as a blessing.

Knowledge that frees the heart from fear,
That calms the storms both far and near;
Where no stress, no sorrow stays,
There dawns true learning's golden rays.

❀❀❀

81

सुहद-णिम्मल-भावणं, किंचिवि चिय मणरंजगा सुसिक्खा।
सुसक्कारं च गहणं, कुव्वेदु-मुप्पज्जेज्ज रुइं॥81॥

शिक्षा किञ्चित् मनोरञ्जन रूप भी होनी चाहिए। वह समीचीन शिक्षा भावना को सुखद व निर्मल करने एवं सुसंस्कार को ग्रहण करने की रुचि उत्पन्न करती हो।

Education should also carry a touch of joy and entertainment. True and wholesome learning must make the emotions cheerful and pure, while simultaneously awakening a taste for imbibing noble values and virtues.

व्याख्या—यहाँ ग्रन्थकार कहते हैं कि शिक्षा केवल कठोर अनुशासन और गम्भीरता से ही नहीं चलती। यदि शिक्षा में मनोरञ्जन, सृजनात्मकता और आनन्द का तत्व जुड़ जाए तो वह और भी प्रभावी हो जाती है। मनुष्य का हृदय तभी खुलता है जब उसे सीखने में आनन्द मिले।

आज की पीढ़ी लम्बे लेक्चर और भारी-भरकम किताबों से जल्दी ऊब जाती है। पर जब शिक्षा खेलों, कला, नाट्य, सङ्गीत, और रचनात्मक गतिविधियों के साथ दी जाए, तो छात्र उसे सहजता से ग्रहण करते हैं।

सच्ची शिक्षा वह है जो मन को हल्का करे, आत्मा को निर्मल बनाए और अच्छे संस्कारों की ओर रुचि जगाए। कला और सङ्गीत शिक्षा को आत्मा से जोड़ते हैं। योग और व्यायाम शिक्षा को शरीर से जोड़ते हैं। ध्यान और प्रार्थना

शिक्षा को आत्मिक शिक्षा-शक्ति से जोड़ते हैं।

पहले शिक्षक केवल पढ़ाते ही नहीं थे, बल्कि सङ्गीत, संवाद और कहानियों के माध्यम से छात्रों में संस्कार भरते थे।

आज के स्कूलों में भी जब शिक्षक बच्चों को कहानियों, रोल-प्ले, या खेलों के माध्यम से सिखाते हैं, तो बच्चे बिना दबाव के ज्ञान के साथ संस्कार भी आत्मसात कर लेते हैं।

Explanation–Education is not meant to be a dry burden. When learning is blended with creativity, art, music, storytelling, or play, the mind becomes receptive. Joy is the key that unlocks the heart of the learner.

In modern times, where students often feel suffocated under rote learning and exam pressure, education infused with enjoyment becomes a refreshing river. It lightens the burden of the mind, purifies emotions, and develops a natural inclination towards good values.

Art and music refine emotions and nurture sensitivity. Yoga and exercise strengthen the body, the foundation of a healthy mind. Meditation and prayer cultivate concentration, inner calm and moral clarity.

In the ancient university, teachers often taught not through lectures alone, but by weaving lessons into songs, stories, and dialogue. The students remembered those lessons for life because they carried joy within them.

Likewise, today a teacher who introduces storytelling, role-play, or creative activities into lessons finds that children absorb knowledge along with virtues without resistance.

❀❀❀

82

शिक्षा केन्द्र

सुद्ध-पवण-संजुत्तो, पागदिगो होज्ज सिक्खाकेंदो।
णो होज्ज अइसीयलो, णेव अइउण्हो वरिसा वा॥82॥

शिक्षा का केन्द्र शुद्ध पवन से युक्त व प्राकृतिक होना चाहिए। अति गर्मी, अति शीत अथवा अति वर्षा वाला नहीं होना चाहिए।

"The educational centre must be situated in a pure and natural environment, filled with fresh air. It should neither be in a place of extreme cold nor in one of excessive rainfall."

व्याख्या—यह गाथा स्पष्ट करती है कि शिक्षा केवल पुस्तकों और अध्यापकों पर आधारित नहीं होती, बल्कि वातावरण और परिवेश का उस पर गहरा प्रभाव पड़ता है। विद्यार्थी जिस स्थान पर पढ़ता है, वही स्थान उसके मन, स्वास्थ्य और विचारों को आकार देता है।

शुद्ध वायु और प्राकृतिक वातावरण मन को एकाग्र और शान्त बनाते हैं।

अधिक शीत या अधिक वर्षा जैसी असुविधाएँ शिक्षा के प्रवाह को बाधित कर देती हैं। जैसे स्वस्थ बीज के लिए उपजाऊ मिट्टी और सन्तुलित जलवायु आवश्यक है,

वैसे ही विद्यार्थी के लिए सन्तुलित और प्राकृतिक शिक्षण परिसर आवश्यक है।

प्राचीन भारत में गुरुकुल सदैव वनों और नदियों के समीप स्थापित किए जाते थे, जहाँ का वातावरण स्वच्छ और प्राकृतिक होता था। वहाँ न केवल ज्ञान मिलता था, बल्कि प्रकृति के साथ सामंजस्य भी सीखा जाता था।

महाभारत काल में, जब अर्जुन और अन्य पाण्डवों ने द्रोणाचार्य से शिक्षा प्राप्त की, तो उनका आश्रम किसी महल या नगर में नहीं, बल्कि प्रकृति की गोद में, शान्त वन में था। वहाँ वृक्षों की छाया, शुद्ध पवन, और पक्षियों के स्वर शिक्षा को आनन्दमय बनाते थे।

आज भी यदि बच्चा दिनभर कंक्रीट की दीवारों और प्रदूषित हवा में पढ़े, तो उसका मन बोझिल हो जाता है। लेकिन खुले वातावरण, हरे-भरे परिसर और स्वच्छ वायु में पढ़ाई हो तो उसका मस्तिष्क स्वतः ही रचनात्मक और प्रसन्नचित्त हो उठता है।

Explanation–Education is not based solely on books and teachers; it is deeply influenced by its surroundings. The place where a student studies shapes his mind, health and thoughts.

Fresh air and a natural environment nurture calmness and concentration. Harsh conditions of climate disturb both body and mind, hampering the flow of learning. Just as a seed needs fertile soil and

balanced climate to grow into a healthy tree, so too a student requires an atmosphere of purity and balance.

The ancient Gurukuls of India were located in forests and near rivers, where students lived close to nature and imbibed lessons not only from books but also from the harmony of the environment.

Arjuna and the Pandavas studied under Dronacharya not in palaces or cities, but in serene hermitages surrounded by trees and flowing air. The environment itself was their silent teacher. Even today, a child confined in polluted air and concrete walls feels suffocated, but in open green spaces, learning becomes joyful and creative.

❀❀❀

83

सव्व-पदूसण-रहिदो, सुहद-अणुभूदि-कारगो सुकेंदो।
सुद्धभावुप्पायगो, सुणाणपिवासा-वड्ढगा॥83॥

शिक्षा केन्द्र सभी प्रकार के प्रदूषण से रहित, सुखद अनुभूति कारक, शुद्ध भावों का उत्पादक एवं सम्यग्ज्ञान की पिपासा का सम्वर्द्धक होना चाहिए।

A centre of education must be free from all forms of pollution, it must create a pleasant and elevating experience, generate pure emotions, and nurture the thirst for knowledge.

व्याख्या–शिक्षा का वातावरण केवल भवन या पुस्तकालय भर नहीं होता, बल्कि यह उस मानसिक और शारीरिक परिवेश का नाम है, जिसमें विद्यार्थी जीवन का निर्माण करता है। यदि शिक्षा का केन्द्र प्रदूषण, शोर-शराबे, और अस्वस्थ परिस्थितियों से भरा हो, तो वहाँ पढ़ने वाले छात्र का मन भी विक्षुब्ध रहता है।

सच्चा शिक्षा केन्द्र ऐसा होना चाहिए–

– जहाँ वायु, ध्वनि और मानसिक प्रदूषण का कोई स्थान न हो।

– जहाँ वातावरण में प्रवेश करते ही एक सुखद, शान्ति-प्रद अनुभूति हो।

– जहाँ भावनाएँ निर्मल हों और छात्र में ज्ञान की प्यास और सीखने का उत्साह बढ़े।

आज के समय में, जब शहरों के विद्यालय और विश्वविद्यालय प्रायः ध्वनि-प्रदूषण और प्रतिस्पर्धा की भीड़ से घिरे रहते हैं, हमें यह गाथा याद दिलाती है कि शिक्षा का वातावरण उतना ही महत्वपूर्ण है जितनी स्वयं शिक्षा।

प्राचीन आश्रमों में शिष्य जब सुबह उठते, तो सबसे पहले वे नदी का शुद्ध जल, पेड़ों की हरियाली और पक्षियों के मधुर स्वर का अनुभव करते। यही अनुभव उन्हें पढ़ाई के लिए तैयार करता था।

एक गुरुकुल में, एक विदेशी शिष्य ने आचार्य से पूछा–"गुरुदेव, आपकी शिक्षा इतनी प्रभावी क्यों है?"

गुरु मुस्कराए और बोले–"क्योंकि यहाँ प्रकृति भी हमारे साथ पढ़ाती है। यहाँ की वायु शुद्ध है, वातावरण पवित्र है, और हर कण हृदय को ज्ञान की ओर खींचता है।

Explanation–Learning does not thrive in noise, impurity, or restlessness. A true centre of education is not only about books and buildings; it is about an environment that inspires and uplifts. If an educational centre is filled with pollution, noise and unhealthy conditions, the mind of the student studying there also remains disturbed.

Educations centres should be free from air, sound, and mental pollution.

It should offer an atmosphere where the student feels peace, freshness, and joy.

It should awaken in the heart a genuine thirst for knowledge.

In the ancient forest hermitages, students awoke not to the sound of traffic or chaos, but to the purity of rivers, greenery, and birdsong. It reminds us that the atmosphere in which education takes place is as vital as education itself.

One foreign student once asked a teacher in Takshashila, “Why is your teaching so powerful?” The teacher replied, “Because here, nature itself teaches with us. The air is pure, the surroundings are sacred, and every moment draws the mind towards wisdom.”

❀❀❀

84

वसण-पाव-विमुत्तम्मि, सिक्खागेहे पारब्भो अंतो।
सिक्खाइ पहुभत्तीइ, तदा खलु सिद्धिदायगा, सा॥84॥

शिक्षा केन्द्र व्यसन व पाप से विमुक्त हों। ऐसे शिक्षागृह में शिक्षा का प्रारम्भ व अन्त प्रभु भक्ति से होना चाहिए, तब ही वह शिक्षा सिद्धिदायक होती है।

An educational institution must be free from vices and sins. The beginning of learning should be with devotion to the Divine, for only then does education lead to true accomplishment.

व्याख्या–शिक्षा का असली स्वरूप तभी उज्ज्वल बनता है, जब उसका वातावरण पवित्र और व्यसन मुक्त हो।

आज का सबसे बड़ा व्यसन है–डिजिटल व्यसन।

पहले व्यसन का मतलब केवल तम्बाकू, शराब या जुआ होता था, परन्तु आज के विद्यार्थी के लिए मोबाइल और सोशल मीडिया भी नशे से कम नहीं।

Instagram, YouTube Shorts, Gaming Apps आदि ऐसी भूलभुलैया बन गए हैं, जिनमें विद्यार्थी दिन-रात फँसे रहते हैं।

इसके परिणामस्वरूप अवसाद (Depression), चिन्ता (Anxiety), और अध्ययन से उदासीनता बढ़ रही है।

यहाँ आचार्य महाराज कह रहे हैं कि यदि शिक्षा का केन्द्र ही इन व्यसनों का अड्डा बन जाए, तो वह शिक्षा कभी सिद्धिदायक नहीं हो सकती।

सच्ची शिक्षा वहीं है–

– जो मन की निर्मलता से शुरू हो।

– जो प्रभु-भक्ति, प्रार्थना और ध्यान से आरम्भ हो।

– जो विद्यार्थी को केवल ज्ञानवान ही नहीं, बल्कि चरित्रवान और संयमी बनाए।

एक विद्यालय में बच्चों को हर दिन कक्षा से पहले पाँच मिनट ध्यान करवाया जाता था और 'ॐ' के उच्चारण से दिन की शुरुआत होती थी। धीरे-धीरे वहाँ के बच्चे मोबाइल का उपयोग संयमित करने लगे, उनका ध्यान पढ़ाई में बढ़ने लगा और उनमें अंदरूनी शान्ति दिखाई देने लगी।

इसके विपरीत, एक दूसरे विद्यालय में कोई अनुशासन नहीं था। बच्चे क्लासरूम में भी मोबाइल चलाते, आधी रात तक गेम्स खेलते और सुबह थके हुए स्कूल आते। वहाँ का परिणाम यह हुआ कि शिक्षा केवल परीक्षा पास करने तक सीमित रह गई, जीवन-निर्माण का काम न हो सका।

अतः विद्यालयों का वातावरण, शराब, तम्बाकू, ड्रग्स आदि नशीले पदार्थों से मुक्त, डिजिटल विकर्षणों से रहित, प्रेरणा, मौन और सकारात्मकता से ओतप्रोत होना चाहिए। वहाँ शिक्षा का प्रारंभ व अन्त प्रभु भक्ति से होना चाहिए तभी छात्र ज्ञान को चरित्र और विवेक में ढाल पाएँगे।

Explanation–Education reaches its highest potential only in an atmosphere that is pure, sacred and free from all vices. In today's world, the greatest vice threatening education is digital addiction.

In the past, addiction was associated solely with tobacco, alcohol or gambling but today students spend countless hours on social media, gaming, and mindless scrolling.

Instagram, YouTube shorts and gaming app have become such labyrinths the in which students remain trapped day and night.

This leads to mental pollution: anxiety, distraction, and loss of concentration.

Acharya Shree emphasizes that if an educational institution becomes a place of vices and addictions, the education imparted there can never bring the enlightenment of true accomplishment.

True education must therefore be rooted in purity and devotion.

Learning should begin with prayer, meditation, or gratitude.

Learning should make a student not only knowledgeable but also virtuous and disciplined.

In one school, the day began with five minutes of silent meditation and chanting. Students there gradually reduced their dependency on phones and grew more attentive and peaceful. But in another

institution where no discipline was observed, students were glued to their devices-even in classrooms. Their minds became restless, their results weakened, and their lives lacked depth.

Schools should create an atmosphere free from digital distractions, alcohol, tobacco, drugs and all forms of intoxicants and filled with inspiration, silence, and positivity. There, the journey of education should start and conclude with reverence and devotion to the Divine.

Only then can students transform knowledge into character and wisdom.

❀❀❀

85

शिक्षक

सिट्ठो कत्तव्वपरायणो, खमासील-गमगो सिक्खगो।
अज्झप्पणाणजुत्तो, पवित्तो सय सुहकम्मरदो॥85॥

जो शिष्ट है, कर्त्तव्यपरायण है, क्षमाशील है, गमक (ज्ञानी) है, अध्यात्मज्ञान से युक्त है, पवित्र है, सदा शुभ कर्मों में रत है, वह शिक्षक है।

He who is disciplined in conduct, devoted to duty, forgiving, knowledgeable, endowed with spiritual wisdom, pure, and always engaged in virtuous deeds–is a teacher.

व्याख्या–सच्चा शिक्षक केवल पुस्तकीय ज्ञान रखने वाला नहीं होता। उसका चरित्र शिष्टाचार से भरा होता है, वह अपने कर्तव्यों का ईमानदारी से पालन करता है, और अपने शिष्यों के लिए धैर्य एवं क्षमा का आदर्श प्रस्तुत करता है।

उसके पास केवल बाह्य ज्ञान ही नहीं, बल्कि अध्यात्म का आलोक भी होता है, जिससे वह विद्यार्थियों के अन्त:करण को संस्कारित करता है।

उसकी पवित्रता और शुभ कर्मों में निरन्तर प्रवृत्ति ही उसे वास्तविक शिक्षक बनाती है। ऐसा गुरु शिष्यों के लिए

दीपक की भाँति है, जो स्वयं जलकर दूसरों के जीवन में प्रकाश फैलाता है।

Explanation–A true teacher is not merely one who possesses bookish knowledge. His character is adorned with courtesy, he performs his duties with integrity, and he embodies patience and forgiveness for his students.

He carries not only external knowledge but also the radiance of spirituality, through which he nurtures and refines the inner being of his disciples.

His purity and constant engagement in virtuous deeds are what make him a real teacher. Such a Guru is like a lamp that burns itself to bring light into the lives of others.

❀❀❀

86

सिस्साणं च पिदरं व, धीरो वीरो गंभीर-सहिण्हू।
सरलो सहजो णेही, सक्किदि-सब्भदा-रक्खगो य॥86॥

शिक्षक शिष्यों के लिए माता-पिता के समान होता है, वह सहनशील, धीर, वीर, गम्भीर, सरल, सहज, स्नेही एवं संस्कृति व सभ्यता का संरक्षक होता है।

The teacher is like a parent to the student. He is patient, steadfast, courageous, grave yet simple, natural in his ways, and the guardian of culture and civilization."

व्याख्या–गुरु का स्थान सदैव उच्च रहा है। शिष्य के जीवन में वह केवल ज्ञान का संचारक नहीं, बल्कि जीवन का निर्माता है। माता-पिता शरीर को जन्म देते हैं, परन्तु शिक्षक आत्मा को जागृत करता है। उसके धैर्य और सहनशीलता से शिष्य सीखता है कि कठिन परिस्थितियों में भी कैसे सन्तुलित रहा जाए। उसकी वीरता प्रेरणा देती है कि सच्चा साहस केवल रणभूमि में नहीं, बल्कि अन्याय और अज्ञान से लड़ने में है।

गम्भीरता और सहजता का अद्भुत संगम ही शिक्षक का आभूषण है। वह कठोर अनुशासन में भी स्नेह रखता है और सरल वाणी में भी गहन सत्य कह देता है। संस्कृति और सभ्यता का संरक्षण उसी से सम्भव है, क्योंकि वही शिष्यों में आदर्श, मर्यादा और मूल्य का बीज बोता है। जैसे नदी अपने तटों को सँभालती है ताकि प्रवाह स्वच्छ और

सुचारु रहे, वैसे ही शिक्षक सभ्यता और संस्कृति के तट हैं, जिनसे शिष्य जीवन की धारा में बहते हुए सुरक्षित रहते हैं।

आज के शिक्षा–शास्त्र में "Role Model Learning" को सबसे प्रभावशाली माना गया है। फ़िनलैण्ड, जो विश्व में सर्वश्रेष्ठ शिक्षा व्यवस्था के लिए प्रसिद्ध है, वहाँ शिक्षकों को समाज का सर्वाधिक सम्मानित व्यक्तित्व माना जाता है, क्योंकि यह सिद्ध हो चुका है कि विद्यार्थी पुस्तक से कम और अपने गुरु के आचरण से अधिक सीखते हैं। इसी कारण शिक्षक को सभ्यता और संस्कृति का "संरक्षक स्तम्भ" कहा गया है। टैगोर ने कहा है कि शिक्षक राष्ट्र की आत्मा का संवाहक है।

स्वामी विवेकानन्द ने कहा था–"गुरु वही है जो शिष्य के हृदय में सुप्त दिव्यत्व को जाग्रत कर दे।" वास्तव में शिक्षक केवल पुस्तकीय ज्ञान नहीं देता, वह अपने जीवन से शिक्षा देता है। उसके आचरण की सरलता और सहजता ही शिष्य के लिए सबसे बड़ा पाठ है।

एक गुरु अपने शिष्यों के साथ खेत में काम कर रहे थे। शिष्य ने पूछा–"गुरुदेव, क्या यह आपका कार्य है?" गुरु ने मुस्कुराकर कहा–"शिक्षक वही है जो केवल पढ़ाए नहीं, बल्कि जीना सिखाए। जब मैं तुम्हारे साथ श्रम करता हूँ, तो तुम्हें सिखाता हूँ कि परिश्रम और विनम्रता शिक्षा का अनिवार्य अंग है।"

Explanation–The role of a teacher is not confined to classrooms; he shapes lives. Parents give birth to the body, but the teacher awakens the soul. From his patience, students learn resilience; from his courage, they learn to confront injustice and ignorance; from

his gravity, they gain depth; and from his simplicity, they find truth expressed in gentle words.

The wondrous blend of gravity and simplicity is the true ornament of a teacher. He caries love even within strict discipline, and in the gentle words, he expresses the deepest of truths.

A teacher is the custodian of values, the preserver of culture, the protector of civilization. Just as a riverbank safeguards the flow of water, the teacher safeguards the flow of youthful life, giving it direction and purity.

Educational psychology affirms the power of role model learning. In Finland–the global model of education–teachers are honoured as society's most trusted figures, for children imbibe values more from the teacher's life than from textbooks. This is why the teacher is regarded as the steadfast pillar safeguarding civilization and cultures.

Rabindranath Tagore said: The teacher is the carrier of the nation's soul.

As Swami Vivekananda said, "The true teacher is he who can awaken the divinity already within the student," Indeed, the teacher's greatest lesson lies not in lectures but in the example of his own life.

A story tells of a guru who once laboured in the fields with his pupils. When asked why, he replied, "A teacher is not one who merely speaks of work, but one who shares it. By tilling the soil with you, I teach you that humility and effort are integral to learning." The students carried this lesson all their lives.

❀❀❀

87

अप्पणुसासगो सयायारी तिजोगसंजमी दयालू।
बहुपडिहा-जुदसिक्खग-विण्णाणी ववहारकुसलो।।87।।

शिक्षक आत्मानुशासक, सदाचारी, त्रियोग संयमी, दयालु, बहुत प्रतिभा से युक्त, विज्ञानी एवं व्यवहारकुशल होता है।

A true teacher is self-disciplined, virtuous in conduct, balanced in practice, compassionate in heart, radiant with talent, endowed with wisdom, and skillful in human dealings.

व्याख्या—सच्चे शिक्षक का व्यक्तित्व स्वयं एक चलता-फिरता ग्रन्थ होता है। वह पहले अपने जीवन को अनुशासन से गढ़ता है, फिर अपने शिष्यों में उसी आत्मानुशासन का बीज बोता है। उसका सदाचार विद्यार्थियों के लिए आदर्श बनता है, मन, वचन, काय का संयम उसे एक सन्तुलित वैज्ञानिक दृष्टिकोण देता है। वह केवल ज्ञानी नहीं होता, बल्कि दयालु भी होता है क्योंकि दया के बिना ज्ञान कठोर और निष्ठुर बन जाता है। प्रतिभा उसकी पहचान है, परन्तु वह प्रतिभा अहङ्कार नहीं, बल्कि सेवा और मार्गदर्शन का साधन होती है। उसका व्यवहारकुशल स्वभाव उसे समाज में सहज स्वीकार्य बनाता है।

कहा गया है—

आचार्यात् पादमादत्ते पादं शिष्यः स्वमेधया।
पादं सब्रह्मचारिभ्यः पादं कालक्रमेण च।।

अर्थात्, विद्यार्थी गुरु से केवल एक चौथाई सीखता है, बाकी अपनी बुद्धि, सहपाठियों और समय से सीखता है।

यह तभी सम्भव है जब शिक्षक अपने सदाचार और व्यवहार से निरंतर प्रेरणा का स्रोत बना रहे।

आज emotional intelligence और life skills को शिक्षा में उतना ही महत्व दिया जा रहा है जितना कि पाठ्यक्रम को। रिसर्च यह बताती है कि विद्यार्थी उन शिक्षकों से सबसे अधिक प्रेरित होते हैं जो अनुशासित तो हों, पर साथ ही दयालु और व्यवहार में सहज हों। उदाहरण के लिए, डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम को ही देखिए–उन्होंने अपनी प्रतिभा और विज्ञान को विनम्रता और दया के साथ जोड़ा, तभी वे "teacher president" कहलाए।

सुकरात ने कहा था–"सच्चा शिक्षक वही है जो विद्यार्थियों को सोचने की कला सिखा दे।"

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने भी कहा–"शिक्षक का स्थान केवल पढ़ाने का नहीं, बल्कि समाज को संस्कारित करने का है।"

प्रसिद्ध गणितज्ञ रामानुजन जब इंग्लैण्ड में पढ़ रहे थे, तो उनके शिक्षक हार्डी ने उनकी प्रतिभा को परखा, परन्तु साथ ही उन्हें जीवन में अनुशासन और सन्तुलन भी सिखाया। हार्डी ने कहा–"ज्ञान का फूल तभी खिलता है जब अनुशासन और दया उसकी मिट्टी हो।" यही कारण था कि रामानुजन का ज्ञान विश्व के लिए वरदान सिद्ध हुआ।

Explanation–A true teacher's very being is like a living, walking scripture.

He disciplines his own life first, and then implants the same seed of discipline in his disciples. His noble conduct serves as an ideal for students and with self-restraint over mind, speech and body, he offers

a balanced and enlightened vision. He is not merely a man of learning but of compassion, for knowledge without compassion becomes stern and ruthless. His talent defines him, yet it is never a mark of vanity, rather a means of service and guidance. His courteous behaviour and gentle nature make him easily accepted in society.

The scripture declares:

"A student learns a quarter from the teacher, a quarter by his own intellect, a quarter from peers, and a quarter in time."

This is possible only when the teacher's life itself becomes a model of virtue and skill.

Research in education confirms that emotional intelligence and compassion in teachers shape students more deeply than curriculum alone. Dr. A.P.J. Abdul Kalam exemplified this blend–brilliance with humility, discipline with warmth–making him beloved as the "Teacher President."

Socrates declared that the true teacher is he who imparts to his students the art of thinking.

Dr. Sarvepalli Radha Krishnan also said that the role of a teacher is not merely to teach, but to cultivate values in society.

The mathematician Ramanujan's mentor, Professor Hardy, recognised not just his genius but also guided him with discipline and humility. Hardy reminded, "Knowledge blossoms only when watered by discipline and compassion." This balance made Ramanujan's work immortal.

❀❀❀

88

**पहावगप्पवयणवत्ता हिद-मिद-पिय-भासगो विणदो य।
दूरदंसी सुभविस्स-णिम्मावगो देसभत्तो वि॥88॥**

शिक्षक हित-मित-प्रियभाषी, विनयी, प्रभावक व अल्प-वचन बोलने वाला, दूरदर्शी, अच्छे भविष्य का निर्माता एवं देशभक्त भी होता है।

The teacher is a true friend, gentle in speech, humble in conduct, influential in presence, one who speaks briefly yet wisely word, far-sighted, a builder of the future, and deeply patriotic.

व्याख्या–शिक्षक का व्यक्तित्व केवल कक्षा तक सीमित नहीं होता, वह जीवन का मार्गदर्शक और समाज का निर्माता होता है। उसका भाषण प्रियभाषण होता है–कठोर सत्य भी वह मधुर वाणी से कह देता है, जिससे शिष्य आहत नहीं बल्कि प्रेरित होता है। उसकी वाणी में विनय और प्रभाव दोनों होते हैं। वह सामान्य बातों से हटकर कुछ ऐसा कहता है जो शिष्य के हृदय में अङ्कित हो जाए और जीवन का मार्ग बदल दे।

शिक्षक दूरदर्शी होता है, इसलिए वह केवल आज की शिक्षा नहीं देता बल्कि कल का भविष्य गढ़ता है। उसके शिष्य ही राष्ट्र के स्तम्भ बनते हैं। इसलिए शिक्षक में देशभक्ति का भाव होना आवश्यक है–क्योंकि यदि गुरु राष्ट्र के प्रति उत्तरदायी है तो उसके शिष्य भी देश की सेवा और संस्कृति की रक्षा करेंगे।

नीतिशतक में कहा गया है–

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रियं।
प्रियं च नानृतं ब्रूयात् एष धर्मः सनातनः॥"

अर्थात्, सत्य बोले, प्रिय बोले, परन्तु अप्रिय सत्य न बोले; और प्रिय कहने के लिए असत्य न बोले। यही सनातन धर्म है।

आज के समय में शिक्षक को केवल ज्ञानदाता नहीं बल्कि mentor और nation builder माना जा रहा है। जैसे डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन, जिन्होंने शिक्षा को राष्ट्रीय उत्थान का सबसे बड़ा साधन कहा। वही विचार नेल्सन मंडेला के शब्दों में मिलता है– "Education is the most powerful weapon which you can use to change the world."

Explanation–A teacher's influence extends beyond the classroom. His words, though truthful, are spoken with gentleness, so they inspire rather than wound. His humility makes him approachable, and his vision shapes not just students but the destiny of a nation. The true teacher is a patriot at heart, for only a nation-loving guide can nurture citizens who uplift their land.

The Nitishataka says: "Speak the truth, speak it pleasantly, but never speak unpleasant truth; nor speak pleasant falsehood. This is eternal righteousness."

Today, teachers are seen as mentors and nation-builders. Dr. S. Radhakrishnan declared that "education is the key to national progress." Nelson Mandela echoed: "Education is the most powerful weapon which you can use to change the world."

❀❀❀

89

सुगुरु-मणोविण्णाणी, पवीणो दु सिस्स-चित्तं पढेदुं।
देहरोयं हरेदुं, पाणायाम-जोगाइ-जुदो॥89॥

श्रेष्ठ गुरु शिष्य के चित्त को पढ़ने में प्रवीण, मनोवैज्ञानिक होते हैं। वे शारीरिक रोग को हरने के लिए प्राणायाम व योगादि से युक्त होते हैं।

A true teacher is a skilled psychologist, able to read the mind of the student. He also possesses the wisdom of yoga and pranayama to cure ailments of the body and to nurture inner balance.

व्याख्या—सच्चा गुरु केवल ग्रन्थों का ज्ञाता नहीं होता, वह शिष्य के मनोमंदिर का सूक्ष्म पाठक भी होता है। शिष्य के चित्त की हलचल, उसके मन की उलझनें, उसकी छिपी पीड़ाएँ—इन सबको गुरु बिना बोले ही समझ लेता है। यही उसकी मनोवैज्ञानिक प्रवीणता है। वह जानता है कि कब विद्यार्थी प्रोत्साहन चाहता है, कब सहानुभूति और कब अनुशासन।

इसके साथ ही श्रेष्ठ गुरु शरीर और मन के सन्तुलन का भी ध्यान रखते हैं। वे प्राणायाम और योग की विधियों से शिष्य को न केवल रोगमुक्त करते हैं, बल्कि उसे धैर्य, एकाग्रता और आन्तरिक शान्ति की शिक्षा भी देते हैं। शरीर स्वस्थ है तो मन स्थिर होता है, और मन स्थिर है तो शिक्षा का बीज पनपता है।

“योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः” ‘योग चित्त की वृत्तियों का निरोध है।’ गुरु इस साधन को शिष्य के जीवन में उतारकर उसके मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य का आधार बनाते हैं।

आज के समय में विद्यार्थी stress, depression और anxiety से घिरे रहते हैं। श्रेष्ठ गुरु, मनोवैज्ञानिक समझ और योग-प्राणायाम की शिक्षा देकर उनके भीतर आत्मविश्वास और मानसिक शक्ति का संचार करते हैं। यही कारण है कि आधुनिक शिक्षा प्रणाली में counselling और mindfulness practices को महत्त्व दिया जा रहा है।

एक बार एक शिष्य अपने गुरु के पास आया और बोला–“गुरुदेव, मेरा मन बहुत अशान्त है, मैं पढ़ाई में ध्यान नहीं लगा पाता।” गुरु ने मुस्कुराकर कहा–“आओ, मेरे साथ बैठो।” उन्होंने उसे प्राणायाम की साधना कराई। कुछ ही दिनों में शिष्य का मन शान्त हुआ और वह अध्ययन में निपुण हो गया। गुरु ने कहा–“जब सांस संयमित होती है, तब चित्त भी संयमित हो जाता है।”

गुरु शिष्य के चित्त में उठ रहे तूफानों को शान्तकर प्राणायाम आदि के माध्यम से उसे अध्ययन में स्थिर करते हैं।

Explanation–The great teacher does not merely know the texts; he knows the heart of his disciple. He perceives the hidden anxieties, the silent struggles, and the unspoken questions. His words, care, and guidance reach where even the student himself cannot.

At the same time, he teaches the art of health and calmness through pranayama and yoga. These are not just physical exercises but tools to harmonise the body and mind. When the breath is steady, the mind is still; when the mind is still, learning flourishes.

The scripture declares: “Yoga is the cessation of the fluctuations of the mind.”

The teacher brings this wisdom alive in the student’s life, making education holistic and transformative.

In the modern world, students are often troubled by stress, depression, and anxiety. A true teacher, with psychological sensitivity and yogic guidance, empowers them to regain confidence and stability. This is why counselling, mindfulness, and yoga are now essential parts of progressive education.

A student once complained to his master, “Gurudev, my mind is restless, I cannot study.” The teacher sat him down and guided him into the rhythm of pranayama. Within weeks, the boy's mind grew calm and his studies improved. The teacher reminded him, “When the breath is mastered, the mind is mastered.”

The guru pacifies the tempests surging within the disciple’s mind and, through pranayama and other disciplines, anchors him in concentration and study.

❀❀❀

90,91

आदर्श शिष्य

सिट्ठो दमी य सन्तो, मंदकसायजुदो सेवाभावी।
उज्जमी विणयसीलो, भव-देह-भोय-विरत्तो जो।।90।।

सो आयंसोसिस्सो, सयायारी तहा गुरुपदसेवी।
सण्णाणपिवासगो य, एगग्गो ववहारणिउणो।।91।।

जो शिष्ट, इन्द्रियों का दमन करने वाला, शान्त, मन्दकषाय से युक्त, सेवाभावी, उद्यमी, विनयशील, संसार-शरीर-भोगों से विरक्त, सदाचारी, गुरु चरणों का सेवक, ज्ञानपिपासु, एकाग्र मन वाला और व्यवहार-निपुण होता है, वह आदर्श शिष्य है।

One who is disciplined, master of his senses, serene, gentle in passions, devoted to service, diligent, humble, detached from worldly enjoyments, righteous in conduct, reverent at the feet of the Guru, eager for knowledge, steadfast in mind and adept in conduct, is an ideal disciple.

व्याख्या–सच्चा शिष्य वही है जो शिष्ट है, अपनी इन्द्रियों को संयमित करता है, शान्त है और मन्द कषायों से युक्त होकर चलता है। वह सेवा-भावी है, उद्यमी है, विनयशील है, संसार की क्षणभंगुर भोग-वासनाओं से विविक्त है। उसका आचरण सदैव पवित्र होता है, गुरु चरणों की सेवा में उसका जीवन समर्पित होता है, ज्ञान की पिपासा से उसका मन सदा व्यग्र रहता है, और उसकी वृत्ति एकाग्र

एवं व्यवहार में प्रवीण होती है। ऐसा शिष्य ही राष्ट्र का भविष्य निर्माता कहलाता है।

गुरु और शिष्य का सम्बन्ध केवल ज्ञान का आदान-प्रदान नहीं है, वह आत्मा और आत्मा का पवित्र मिलन है। शिष्य जब विनयशीलता और सेवा से गुरु के चरणों में झुकता है, तब उसमें केवल नम्रता ही नहीं, बल्कि चरित्र का महान बीज रोपा जाता हैं। ऐसे शिष्य का जीवन शिक्षा के कारण सुगन्धित पुष्प की भाँति होता है—जो स्वयं खिला रहता है और दूसरों को भी महकाता है।

केवल विनय के द्वारा ही ज्ञान की प्राप्ति सम्भव है। शिष्य के लिए सबसे बड़ा गुण उसकी नम्रता है।

आज की युवा पीढ़ी अक्सर सोशल मीडिया, उपभोगवाद और दिखावे की चमक में खो जाती है। परन्तु सच्चा शिष्य वही है जो इन आकर्षणों से ऊपर उठकर आत्मसंयम और आत्मविकास की ओर अग्रसर होता है। आज की दुनिया में यह संयम और विनय ही उसे मानसिक शक्ति, एकाग्रता और वास्तविक सफलता की ओर ले जाते हैं।

एक बार आचार्य कौटिल्य के पास एक बालक शिक्षा के लिए आया। वह अत्यन्त बुद्धिमान था, परन्तु उसमें घमण्ड झलकता था। आचार्य ने उसे बार-बार केवल सेवा और साधना का कार्य सौंपा। महीनों बाद जब उसका अहङ्कार टूट गया, तभी आचार्य ने उसे राजनीति और नीति का ज्ञान दिया। और वही बालक आगे चलकर महान चन्द्रगुप्त बना। यह कथा स्पष्ट करती है कि ज्ञान पिपासा और उद्यम तभी सार्थक होते हैं जब वे विनय और संयम से युक्त हों।

Explanation–A true disciple is cultured, self-controlled, calm, free from harsh passions, ever ready to serve, diligent, humble, detached from worldly pleasures, pure in conduct, devoted to the feet of the teacher, thirsty for knowledge, focused in mind, and skilled in conduct. Such a disciple is not merely a learner–he is the seed of a noble future, the torchbearer of society, and the architect of the nation.

The bond between teacher and disciple is not only an exchange of information but a sacred communion of souls. When the student bows in humility and serves the guru, the fragrance of character blossoms in him. His life, nourished by discipline and wisdom, becomes like a flower that blooms and spreads fragrance all around.

"By humility alone knowledge descends." It is humility that opens the gate to true wisdom.

In today's age of consumerism, distraction, and social media glitter, youth often lose themselves. Yet, the true disciple is one who rises above these, practicing restraint, humility, and devotion. Such qualities alone bring mental strength, clarity, and real success.

It is said that when a young boy approached Chanakya for learning, he was brilliant but arrogant. The teacher, instead of teaching, gave him only tasks of service and discipline. Months later, when his pride dissolved, knowledge was imparted. That boy later became the great Chandragupta. This shows that knowledge, effort, and discipline bear fruit only when rooted in humility and self-control.

❀❀❀

92

सत्तिगभोयी णिद्दाविजयी जागरुओ एगग्गमणो।
अज्झयण-अज्झावणे, वइरिस्साइ-भावविहीणो॥92॥

एक आदर्श शिष्य सात्विक भोजन करने वाला, निद्रा विजयी, जागरुक, अध्ययन व अध्यापन में एकाग्र मन वाला तथा बैर, ईर्ष्यादि भावों से रहित होता है।

A true disciple is one who lives with discipline and simplicity. He eats sattvic food–not for indulgence but for sustaining energy. For indeed, "as the food, so the mind." Pure food purifies the heart, sharpens intellect, and deepens concentration.

व्याख्या–सच्चा शिष्य वही है जिसकी जीवनशैली संयमित और सात्विक हो। भोजन केवल देह को ऊर्जा देने का साधन है, वह इन्द्रिय भोग का माध्यम नहीं। अतः शिष्य का आहार हल्का, पवित्र और सात्विक होना चाहिए, क्योंकि जैसा अन्न वैसा मन। सात्विक भोजन से चित्त निर्मल होता है, अध्ययन के प्रति मन एकाग्र और बुद्धि प्रकाशमान रहती है।

शिष्य को निद्रा पर भी संयम रखना चाहिए। आलस्य और अधिक निद्रा विद्या के शत्रु हैं, जबकि जागरूकता और सतर्कता अध्ययन को गहराई तक पहुँचाती है। ऐसा शिष्य रात्रि का कुछ अंश ध्यान, अध्ययन और आत्ममंथन में लगाता है।

उसके लिए अध्ययन केवल परीक्षा की तैयारी नहीं, बल्कि आत्मविकास का साधन होता है। इसलिए वह पठन

और मनन दोनों में पूरी एकाग्रता से जुड़ा रहता है। वह न किसी से बैर रखता है, न ईर्ष्या। क्योंकि उसे ज्ञात है कि बैर और ईर्ष्या से चित्त में विक्षेप पैदा होते हैं और ज्ञान का प्रकाश मन्द पड़ जाता है।

आज युवाओं में junk food, देर रात जागना, मोबाइल पर घंटों समय बिताना, ईर्ष्या और comparison culture बहुत बढ़ गया है। इसका सीधा असर उनकी एकाग्रता, स्मृति और स्वास्थ्य पर पड़ता है। यदि वे सात्विक आहार लें, उचित समय पर सोएँ–जागें और ईर्ष्या की बजाय healthy competition अपनाएँ, तो उनका व्यक्तित्व असाधारण रूप से खिल सकता है।

एक गुरु ने अपने शिष्यों को कहा–"आज से तुम केवल सात्विक भोजन करोगे और देर रात तक अनावश्यक जागना त्यागोगे।" एक शिष्य ने इस नियम को गम्भीरता से अपनाया। कुछ ही महीनों में उसकी स्मरण शक्ति इतनी प्रबल हो गई कि वह वृहद् ग्रन्थों को सहज ही कण्ठस्थ कर लेता। जबकि अन्य शिष्य जो असंयमित भोजन और निद्रा में लिप्त रहे, वे उतनी प्रगति न कर सके। गुरु ने अन्ततः कहा–"विद्या वही अपनाता है, जिसने पहले अपने भोजन और निद्रा पर विजय पा ली है।"

सही है आहार, विहार, आचरण, जागरण और निद्रा सब में संयम रखने वाला ही योग और ज्ञान में सफल होता है।

Explanation–The mark of a true disciple lies in a life of discipline and purity. Food should serve only

to sustain the body, never to gratify the senses. Hence, a disciple must choose a diet that is light, sacred and pure–for the nature of one's food shapes the nature of one's mind. Sattvic food purifies the mind, keeps it focused on study, and makes the intellect radiant.

He conquers sleep and laziness, for excess sleep is the enemy of learning. Instead, he cultivates awareness and vigilance, devoting even the quiet hours of the night to study, reflection, and meditation. His study is not mere preparation for examinations but a journey of inner growth.

Such a student remains free from envy and hatred, for he knows that jealousy clouds the mind and diminishes the light of wisdom.

In today's world, junk food, late-night scrolling, and constant comparisons drain the youth of energy and focus. By embracing pure diet, balanced rest, and a mind free from jealousy, students can enhance their memory, concentration, and overall growth.

A teacher once instructed his disciples to eat pure food and avoid late-night indulgence. One student followed this earnestly. Within months, his memory and focus grew so sharp that he could recite long scriptures effortlessly, while others lagged behind. The teacher concluded: "He who conquers food and sleep first, conquers knowledge thereafter."

"He who is moderate in eating and recreation, moderate in work, moderate in sleep and wakefulness–attains success in yoga and knowledge.

❀❀❀

93

शिष्य-गुरु सम्बन्ध

सुद-जणग-संबंधोव्व, णिस्सत्थो हवेज्ज गुरु-सिस्साणं।
सवर-हिदयरो णिच्चं, पहूदु वरो गुरू सिस्सस्स।।93।।

गुरु व शिष्य का सम्बन्ध नित्य निःस्वार्थ, स्वपर हितकारी एवं पिता व पुत्र के सम्बन्ध के समान होना चाहिए। शिष्य के लिए गुरु प्रभु से भी श्रेष्ठ होते हैं।

The bond between teacher and disciple must be eternal–selfless, mutually beneficial, and as intimate as that between father and son. For a true student, the teacher is greater even than God.

व्याख्या–गुरु-शिष्य सम्बन्ध केवल शिक्षा तक सीमित नहीं है, वह आत्मा और संस्कृति का गहरा बन्धन है। गुरु केवल ज्ञान देने वाला नहीं, बल्कि चरित्र गढ़ने वाला मूर्तिकार है। निःस्वार्थ भाव से शिष्य के हित में लगा गुरु ही सच्चा गुरु है, और ऐसा शिष्य जो गुरु को पिता से भी बढ़कर सम्मान दे, वही वास्तव में शिष्य कहलाने योग्य है।

आज जब शिक्षक-छात्र सम्बन्ध केवल ''क्लासरूम'' तक सीमित हो गया है, तब यह स्मरण करना जरूरी है कि सच्ची शिक्षा वही है जो निःस्वार्थ हो और जीवन-निर्माण करे। यदि शिक्षक केवल "पढ़ाने वाला'' रह जाए और शिष्य केवल ''डिग्री लेने वाला'' रह जाए, तो शिक्षा का उद्देश्य अधूरा रह जाता है। आज के युवाओं को यह

समझना चाहिए कि गुरु का सम्मान केवल औपचारिकता नहीं, बल्कि आत्मा की उन्नति का मूल है।

एक बार एक राजा ने अपने पुत्र से पूछा–"तुम्हारे लिए सबसे महान कौन है? मैं, जो तुम्हें राज्य देने वाला हूँ, या तुम्हारा गुरु?"

पुत्र ने उत्तर दिया–"पिताश्री, आप मुझे राज्य दे सकते हैं, पर मेरा गुरु मुझे आत्मराज्य का अधिकारी बनाता है। आप मुझे धन देते हैं, पर गुरु मुझे ज्ञान और धर्म देता है। इसलिए मेरे लिए गुरु, प्रभु से भी श्रेष्ठ हैं।"

राजा ने प्रसन्न होकर कहा–"वह पुत्र ही वास्तव में भाग्यशाली है, जिसका गुरु और शिष्य का सम्बन्ध निःस्वार्थ पिता-पुत्र जैसा हो।"

भारतीय परम्परा में गुरु को साक्षात् परमब्रह्म कहा गया है। क्योंकि भगवान तो अदृश्य हैं, परन्तु गुरु उसी परम तत्व की मूर्त अभिव्यक्ति हैं, जो जीव को अज्ञान से मोक्ष की ओर ले जाते हैं।

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

अर्थात् गुरु ही ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर हैं, और वही परमब्रह्म हैं।

Explanation–The relationship between guru and disciple transcends mere instruction; it is a deep bond

of soul and culture. The guru is not only the dispenser of knowledge but the moulder of character. He alone is the true guru who selflessly dedicates himself to the disciple's well-being and he alone describes who reveres his guru more than his own father.

In today's world, the teacher-student relationship often gets reduced to formal classroom transactions. But true education is not transactional; it is transformational. The teacher's role is not merely to deliver information, but to shape character and awaken inner wisdom. Students must recognise that honouring the teacher is not a formality, but a sacred step in their own growth.

A king once asked his son, "Who is greater for you-your father who gives you the kingdom, or your teacher?"

The prince replied, "Father, you give me a throne, but my teacher gives me the wisdom to rule myself. You give me riches, but he gives me righteousness. Therefore, my Guru is greater than even the gods."

The Indian tradition reveres the Guru as the supreme being, for though the Divine remains unseen, the Guru stands as his visible expression, leading the soul from the darkness of ignorance to the light of liberation.

"The Guru is Brahma, the Guru is Vishnu, the Guru is Maheshwara. The Guru is verily the Supreme Brahma; salutations to that revered Guru.

❀❀❀

94

सत्थ-भावणा णेव दु, कयावि संबंधे गुरु-सिस्साणं।
णो कोहाइ-वियारा, मित्ति-वच्छलाइ-भावणा हि॥94॥

गुरु व शिष्य के सम्बन्ध में कभी भी स्वार्थ भावना नहीं होनी चाहिए, क्रोधादि विकारी भाव नहीं होने चाहिए, मात्र मैत्री, वात्सल्यादि भावना ही होनी चाहिए।

The relationship between teacher and disciple must be free of selfishness and untouched by anger or pride. It should be nurtured only with the sentiments of friendship, affection, and trust.

व्याख्या–गुरु-शिष्य का सम्बन्ध तब ही पवित्र रहता है जब उसके भीतर स्वार्थ का कोई अंश न हो। यदि गुरु शिष्य से लाभ की अपेक्षा करे या शिष्य गुरु से केवल लोभवश जुड़ा हो, तो वह सम्बन्ध शीघ्र ही दूषित हो जाता है। सच्चा सम्बन्ध तो वही है, जिसमें गुरु वात्सल्य से भरा हुआ पिता-सा हो और शिष्य मैत्री और श्रद्धा से परिपूर्ण पुत्र-सा।

कई बार विद्यार्थी और शिक्षक का रिश्ता केवल ''फीस और पढ़ाई'' का लेन-देन बनकर रह जाता है। यह शिक्षा नहीं, सौदा है। शिक्षा का आधार तो विश्वास, वात्सल्य और मैत्री होना चाहिए। जब शिक्षक अपने शिष्य के उज्ज्वल भविष्य के लिए तन-मन से समर्पित होता है और शिष्य गुरु को निस्वार्थ श्रद्धा अर्पित करता है, तभी शिक्षा जीवन को आलोकित करती है।

एक बार एक शिष्य अपने गुरु की सेवा में वर्षों से लगा हुआ था। वह गुरु के लिए जल लाता, जंगल से लकड़ियाँ काटकर लाता और हर समय गुरु की आज्ञा में तत्पर रहता। उसने कभी अपने लिए कोई विशेष इच्छा व्यक्त नहीं की। एक दिन गुरु ने उससे कहा–''वत्स, तुम इतने वर्षों से मेरी सेवा कर रहे हो, बताओ, तुम क्या चाहते हो? धन, विद्या या कोई वरदान? शिष्य ने हाथ जोड़कर कहा–गुरुदेव, मेरे लिए आप भगवान हैं। मैं आपकी सेवा इसलिए नहीं करता कि मुझे कुछ प्राप्त हो, बल्कि इसलिए कि मेरे जीवन का उद्देश्य ही आपके चरणों में है।'' शिष्य की बात सुन गुरु की आँखें भर आईं। उन्होंने कहा–''वत्स, निःस्वार्थ भाव ही सच्चा शिष्यत्व है। जब शिष्य कुछ पाने की इच्छा छोड़ देता है, तभी वह सब कुछ पा लेता है।

इस प्रकार जब स्वार्थ और क्रोध समाप्त हो जाते हैं तभी सच्ची शिक्षा का आरम्भ होता है, जो दोनों हृदयों को ज्ञान के प्रकाश से आलोकित कर देती है। जहाँ स्वार्थ प्रवेश करता है, वहाँ शिक्षा मुरझा जाती है, किन्तु जहाँ प्रेम और निःस्वार्थ समर्पण वास करते है, वहाँ ज्ञान पुष्पित व पल्लवित होता है।

Explanation–The relationship of guru and disciple stays sacred only when no trace of selfishness enters it. If the guru expects gain from the disciple or the disciple clings to the guru merely out of greed, that relationship soon becomes tainted, or the sanctity of the bond is quickly lost. The guru relationship is one where the guru is like a father overflowing with affection and the disciple like a son adorned with faith and reverence.

This teaching holds even greater significance for the present generation. Too often, the bond between student and teacher dwindles into nothing more than an exchange of fees for instruction. But education is not commerce. Its very root lies in trust, in affection, in faith and in friendship. When the teacher devotes his whole being to the radiant future of his pupil and the disciple, in turn, offers selfless reverence to his guru, then and only education become a light that illumines life.

Once, a disciple had been serving his guru devotedly for many years. He would fetch water, gather firewood from the forest and remain ever ready to fulfill his teacher's command. Never did he express any personal desire. One day, the guru said to him: "My child, you have been serving me for so many years. Tell me, what do you wish for? Wealth, knowledge or some boon? With folded hands, the disciple replied: "Revered Guru, I revere you more than God. I don't serve you to gain anything, but because the very purpose of my life rests at your feet. If you are pleased that alone is the greatest blessing for me. Tears welled up in the guru's eyes. He said: "My child, this selfless devotion is true discipleship. When a disciple renounces the desire to gain, he gains everything."

Where self-interest enters, education withers: but where love and selfless dedication dwell, wisdom blossoms.

Thus, where selfishness and anger end, true education begins, illuminating both hearts with the eternal light of wisdom.

❀❀❀

95

जह जह वड्ढदि वडूण, णिस्सत्थ-समप्पिद-भावो गुरुस्स।
तह तह गुरु-वच्छल्लं, सिस्सा विज्जा-पारंगदा य॥95॥

जैसे जैसे शिष्यों का गुरु के लिए निःस्वार्थ समर्पित भाव वृद्धिङ्गत होता है वैसे-वैसे गुरु का वात्सल्य भी वृद्धिङ्गत होता है और शिष्य विद्या में पारङ्गत होता है।

As the disciple's selfless devotion towards the teacher grows, so does the teacher's affection, and the student becomes accomplished in learning.

व्याख्या—गुरु और शिष्य का सम्बन्ध उसी मृदुल बन्धन के समान है, जैसे वर्षा की बूंदें जब धरती को निष्कलुष भाव से सींचती हैं, तब धरती भी अनन्त फल-फूल देकर उनका प्रतिदान करती है। जिस शिष्य के हृदय में अहङ्कार नहीं, लोभ नहीं, केवल निःस्वार्थ श्रद्धा और समर्पण है, उसी पर गुरु का वात्सल्य अमृत बनकर बरसता है।

महाभारत में अर्जुन का उदाहरण इसी सत्य को उजागर करता है। उसने द्रोणाचार्य के प्रति न केवल श्रद्धा रखी, बल्कि पूरी निष्ठा और समर्पण से शिक्षा ग्रहण की। इसी निष्कलुष भाव ने उसे गाण्डीव का महान योद्धा बनाया। दूसरी ओर, एकलव्य का भी उदाहरण है—यद्यपि उसने गुरु के चरणों के पास बैठकर शिक्षा न पाई, पर उसकी निष्ठा और श्रद्धा इतनी गहन थी कि गुरु का आशीर्वाद दूर से ही उसे श्रेष्ठ धनुर्धर बना गया।

यदि विद्यार्थी अपने शिक्षकों के प्रति केवल परिणाम, अंक या प्रमाणपत्र की अपेक्षा से नहीं, बल्कि सच्चे समर्पण

और निष्ठा से जुड़ें, तो शिक्षा का वास्तविक फल उन्हें प्राप्त होगा। शिक्षक भी ऐसे शिष्य को देखकर और अधिक वात्सल्य और करुणा से भर उठता है, और उसकी उन्नति के लिए तन-मन से प्रयत्न करता है।

जिस शिष्य में सेवा और समर्पण का भाव है, वही गुरु के हृदय से निकली विद्या को पा सकता है।"

Explanation–The bond between guru and disciple is like the rain and the earth: when the earth opens itself with humility, the rain nourishes it, and together they yield life and abundance. A student with pure dedication and without pride or greed naturally attracts the deepest affection of the teacher, and through this sacred exchange, true knowledge blossoms.

Arjuna's devotion to Dronacharya made him the greatest archer of his time, and even Ekalavya, through his unwavering dedication, gained mastery without ever sitting at his guru's feet. These examples reveal that knowledge does not merely flow through words but through the invisible current of sincerity and faith.

In today's world too, when students approach teachers with selfless respect–not merely for marks or certificates–then teachers, moved by this devotion, go beyond duty to nurture their growth. In such a bond, both hearts are enriched: the disciple with wisdom, the teacher with joy.

Only the disciple who possesses the spirit of service and devotion can truly receive the knowledge that flows from the guru's heart.

❀❀❀

96

जह धेणु-वच्छल्लेण, वच्छं पडि खीरं वड्ढदि णियमा।
तहा सुसिक्खा विज्जा, विणद-सिस्साण गुरुणेहेण॥96॥

जैसे बछड़े के प्रति गाय के वात्सल्य से उसका दुग्ध वृद्धिङ्गत होता है, उसी प्रकार गुरु के स्नेह से विनयी शिष्यों की सुशिक्षा व विद्या वृद्धिङ्गत होती है।

Just as the affection of a cow for her calf increases the flow of milk, in the same way, the love and care of a teacher nourish the humble student, making his education and knowledge flourish.

व्याख्या–गुरु और शिष्य का सम्बन्ध केवल शिक्षा देने और लेने का नहीं है, बल्कि वह वात्सल्य और श्रद्धा का दिव्य सेतु है। जिस प्रकार गाय जब अपने बछड़े को देखती है तो उसका वात्सल्य उमड़ पड़ता है और दुग्ध सहज ही बहने लगता है, उसी तरह जब गुरु शिष्य की विनय, आज्ञाकारिता और सेवा भाव को देखता है, तो उसका हृदय ज्ञानामृत से भरकर बह निकलता है।

भारत की गुरुकुल परम्परा इसका जीवंत उदाहरण है। चन्द्रगुप्त मौर्य यदि साम्राज्य निर्माता बने तो उसके पीछे चाणक्य का अथाह स्नेह और ज्ञान था। अर्जुन यदि महाभारत

का महान धनुर्धर बना तो वह गुरु द्रोणाचार्य की कृपा और शिक्षा का ही परिणाम था।

डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम बचपन में गणित से भयभीत रहते थे। एक दिन उनकी शिक्षिका ने उन्हें समझाया–"तुम्हारे भीतर गणितज्ञ छुपा है, बस उसे पहचानो।" उस स्नेहिल विश्वास ने कलाम को प्रेरित किया, और आगे चलकर वही विद्यार्थी भारत के 'मिसाइल मैन' और राष्ट्रपति बने। यह गुरु के वात्सल्य की ही शक्ति थी, जिसने शिष्य के जीवन को आलोकित कर दिया।

बिन विनय न फूटे सरिता, बिन श्रद्धा न फले ज्ञान,
गुरु स्नेह से खिले हृदय, शिक्षा बने वरदान॥

आज की भाषा में कहें, तो जैसे एक मोबाइल फोन बैटरी के चार्ज होने पर ही पूरी तरह काम करता है, वैसे ही विद्यार्थी का मन गुरु के स्नेह और विश्वास से चार्ज होकर अपनी सम्पूर्ण क्षमता को प्रकट करता है। बिना उस स्नेह के, शिक्षा केवल किताबों का बोझ बन जाती है।

Explanation–The bond of guru and disciple transcends the exchange a learning; it is a sacred bridge woven of love and reverence. Just as when a cow looks upon her calf, her maternal affection overflows and milk begins to flow naturally, in the same way, when then the guru sees the disciple's humility, obedience and spirit of service, his heart overflows with streams of knowledge.

The Gurukul tradition has been the very soul of Bharat’s life. Chandragupta Maurya became the founder of an empire, behind him was the tireless effort and wisdom of Chanakya. Arjuna became the unrivalled hero of the Mahabharata solely by the grace and training of Guru Dronacharya.

Dr. A.P.J. Abdul Kalam, in his childhood, used to be afraid of mathematics. One day his teacher explained to him, “Within you lies the genius of mathematics, you only need to recognise it. That very assurance inspired Kalam and in time the same student went on to become the Missile Man of Bharat and the president of the nation. It was the power of the teacher’s encouragement that illuminated the disciple’s life.

Without humility knowledge does not sprout, without reverence wisdom does not shine; through the teacher’s love the heart blossoms and education becomes divine.

A student without a teacher’s love and faith is like a smartphone without charge–it has potential but cannot function. When the teacher’s affection charges the student, brilliance manifests naturally.

❀❀❀

97

गुरू-अदिसय-पसण्णो, तदा जदा सुसिस्सो महाणिउणो।
सिस्सो णिय गुरुचरणं, सेवंतो तसिद-चायगोव्व॥97॥

जब एक शिष्य महाकुशल होता है, तब एक अच्छे गुरु अत्यन्त प्रसन्न होते हैं। और शिष्य तब प्रसन्न होता है, जब वह प्यासे चातक के समान अपने गुरु के चरणों की सेवा करता है।

When a disciple attains great excellence, the noble teacher rejoices deeply. And the disciple rejoices when, like the thirsty chataka bird, he devotes himself to the service of his teacher's feet.

व्याख्या–गुरु और शिष्य का सम्बन्ध परस्पर पूरक है। शिष्य की प्रतिभा और प्रगति गुरु के जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि है, और गुरु का स्नेह तथा मार्गदर्शन शिष्य की प्रसन्नता का परम आधार। जिस प्रकार आकाश की ओर मुख किये चातक केवल वर्षा की बूँद की प्रतीक्षा करता है, उसी प्रकार विनयी शिष्य अपने गुरु की वाणी और चरणों की सेवा को जीवन का सबसे बड़ा वरदान मानता है।

गुरु का हृदय तब गदगद हो उठता है जब उसका शिष्य विद्या, सदाचार और संस्कारों में ऊँचाइयों को छू लेता है। और शिष्य का हृदय तब पुलकित होता है, वह गुरु की कृपा और मार्गदर्शन पाकर अपनी साधना को सफल देखता है।

गुरु हृदय प्रसन्न जब शिष्य बने गुणवान।
शिष्य हृदय प्रसन्न जब पाए गुरु वरदान॥

जैसे एक कोच तभी गर्व से भरता है जब उसका खिलाड़ी ओलम्पिक में स्वर्ण पदक जीतता है, उसी प्रकार गुरु तभी प्रसन्न होता है जब उसका शिष्य अपनी विद्या और संस्कार से जगत में नाम रोशन करता है। और विद्यार्थी की प्रसन्नता गुरु की उपस्थिति में वैसी ही होती है, जैसे चातक की प्यास वर्षा की बूँद से शान्त होती है।

Explanation–The teacher and disciple complement one another. The disciple's success is the teacher's pride; the teacher's grace is the disciple's bliss. Just as the chataka bird thirsts only for rain from the sky, so does the humble disciple thirst for the words and blessings of his teacher.

The guru's heart overflows with joy when his disciple ascends the heights of learning, righteousness and culture; while the disciple's soul thrills with joy when, through the guru's grace and guidance, he beholds his pursuit crowned with success.

The teacher smiles when the student shines,
The disciple blooms when the master is kind.

Like a coach rejoicing in the medal of his trainee, or a scientist seeing her student make a breakthrough, the bond between teacher and disciple transcends achievement–it becomes a shared victory of love and dedication.

❀❀❀

98

शिक्षा कैसे दें

ण मेत्तं पोत्थ-सिक्खा, ववहारिगं पायोगिग-सिक्खं पि।
देज्ज सरल-भावेहिं, विज्जत्थीण सुहिजीवणस्स॥98॥

विद्यार्थियों के सुखी जीवन के लिए उन्हें मात्र पुस्तकीय शिक्षा ही नहीं अपितु व्यावहारिक व प्रायोगिक शिक्षा भी सरल भावों से देनी चाहिए।

For the happiness of students' lives, they must not be given only bookish knowledge, but also practical and experiential learning, imparted with simplicity."

व्याख्या—सच्ची शिक्षा केवल ग्रन्थों और पाठ्यपुस्तकों तक सीमित नहीं है। यदि शिक्षा केवल अक्षरों की दुनिया में ही कैद रह जाए और जीवन के व्यवहार से उसका सम्बन्ध न बने, तो वह अधूरी रह जाती है। जिस प्रकार पक्षी को उड़ान के लिए दो पङ्खों की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार विद्यार्थी के लिए भी सुखी और सफल जीवन हेतु दोनों पङ्ख—पुस्तक ज्ञान और व्यवहारिक अनुभव—आवश्यक हैं।

भारत की प्राचीन गुरुकुल परम्परा में विद्यार्थियों को शास्त्रों का अध्ययन ही नहीं कराया जाता था, बल्कि खेती-बाड़ी, पशुपालन, सेवा, श्रम और जीवनोपयोगी कौशल

भी सिखाए जाते थे। वही शिक्षा पूर्ण मानी जाती थी, क्योंकि उसमें जीवन की उपयोगिता और आत्मनिर्भरता निहित थी। आधुनिक युग में यही भावना तकनीकी शिक्षा, इंटर्नशिप, वर्कशॉप और प्रोजेक्ट वर्क के माध्यम से प्रकट होती है।

एक विद्यालय में दो छात्र थे। एक केवल पुस्तकों में डूबा रहता, जबकि दूसरा अध्ययन के साथ-साथ हर प्रयोगशाला कार्य में भी भाग लेता। जब समय आया नौकरी और जीवन की कठिनाइयों का सामना करने का, तो पहला छात्र सिद्धान्तों को तो जानता था, पर व्यवहार में असमर्थ रहा। दूसरा छात्र, जिसने हाथों से कार्य सीखा था, सफलता की ऊँचाइयों तक पहुँचा। यही सिखाता है कि शिक्षा यदि सरल भावों से जीवनोपयोगी बनाई जाए, तो वह सुख का आधार बनती है।

युवाओं के लिए यह विशेष संदेश है कि केवल अंकों और डिग्रियों की दौड़ में न फँसें। जीवन में जो शिक्षा आपको आत्मनिर्भर बनाए, कठिनाइयों का समाधान सिखाए, और समाज में उपयोगी बनने की शक्ति दे—वही सच्ची शिक्षा है।

Explanation–True education is not confined merely to scriptures or textbooks. When learning is caged within letters and fails to relate to life's practice, it remains unfinished. Like a bird that needs two wings to soar, a student needs both theoretical wisdom and practical application to live a life of joy and success.

Ancient Indian gurukuls nurtured this balance–teaching not only scriptures but also farming, cattle-rearing, service, and daily life skills. Such education was deemed complete, for it embraced both utility and self-reliance. In today's context, the same spirit is found in internships, workshops, and project-based learning, technical education.

Two students studied in the same school. One lived buried in books, the other combined study with practical training. When life's real challenges arose, the first faltered despite his knowledge, while the second, equipped with practical skill, flourished. Thus it is shown; education, when rendered practical and life-oriented, becomes the true basis of well being.

The lesson for today's youth is clear: do not be trapped only in grades and certificates. Seek the education that makes you self-reliant, capable of solving problems, and useful to society. That alone is true education–and the path to happiness.

❀❀❀

99

सग-सग-वय-अणुभव-पज्जावरणाणं तह अणुसारेणं।
होज्ज सुहंकर-सिक्खा, पत्तेयं खेत्ते यालम्मि॥99॥

प्रत्येक क्षेत्र व काल में अपनी-अपनी आयु, अनुभव व पर्यावरण के अनुसार शिक्षा सुखकर होती है।

At every place and time, education becomes delightful when it is in harmony with one's age, experience, and environment.

व्याख्या–शिक्षा कभी स्थिर और जड़ नहीं रहती। वह समय, स्थान, आयु और परिस्थिति के अनुसार अपना रूप बदलती है। बालक के लिए शिक्षा खेल और कहानी के रूप में मधुर है; किशोर के लिए वह अनुशासन और विज्ञान की ओर मार्गदर्शक है; युवावस्था में वह आदर्श, संघर्ष और आत्मनिर्माण की प्रेरणा देती है; और वृद्धावस्था में वह अनुभव, शान्ति और अध्यात्म का सहचर बन जाती है।

जिस प्रकार बीज को जिस मिट्टी और जलवायु में बोया जाए, उसी के अनुसार वह अंकुरित और विकसित होता है, उसी प्रकार शिक्षा भी प्रत्येक व्यक्ति की आयु और पर्यावरण के अनुसार ही फलदायी बनती है। एक बच्चे को यदि अत्यधिक बौद्धिक भार दे दिया जाए, तो वह शिक्षा बोझ लगने लगती है। किन्तु वही शिक्षा यदि कहानियों, चित्रों और खेलों के रूप में दी जाए, तो वही बोझ आनन्द में बदल जाता है।

पहले शिष्य शिक्षा को वनों और आश्रमों में आत्मसाधना और स्वावलम्बन से सीखते थे। वहीं आधुनिक काल में रविन्द्रनाथ टैगोर जी ने शान्ति निकेतन में यह सिद्ध किया कि प्रकृति और परिवेश के अनुसार शिक्षा दी जाए तो वह बच्चों के लिए आनन्द का साधन बन जाती है।

एक बार एक गुरु ने अपने तीन शिष्यों को अलग-अलग ऋतु में एक ही वृक्ष को देखने के लिए भेजा। किसी ने वृक्ष को सूखा देखा, किसी ने उसे फूलों से लदा पाया और किसी ने उसे फलों से भरा हुआ। जब तीनों ने मिलकर अपनी अनुभूतियाँ बतायीं, तब गुरु ने कहा–''इसी प्रकार शिक्षा भी परिस्थिति और काल के अनुसार भिन्न अनुभव देती है, पर उसका मूल उद्देश्य सदा सुखद और उन्नतिकारक होता है।''

आज के युवाओं के लिए शिक्षा का स्वरूप डिजिटल बन गया है। ऑनलाइन क्लास, ई-लर्निंग और मल्टीमीडिया साधनों ने इसे रोचक बना दिया है। किन्तु वही शिक्षा यदि पुरानी पद्धति में ढाल दी जाए, तो वह भारी लगने लगेगी। इसीलिए शिक्षा को लचीला और परिवेशानुकूल बनाना ही उसका सच्चा रूप है किन्तु सदाचार, नैतिकता एवं जीवन मूल्यों से वह सदैव भरी हो।

Explanation–Education is never static and stagnant. For a child, it appears as stories and play. It adapts its form in harmony with time, place, age and circumstance. To the teenager, education serves

as a guide to discipline and science. In youth, it inspires ideal struggle and self-creation. And in old age, it stands as a companion of wisdom, serenity and spirituality.

Just as a seed grows differently depending on the soil and climate, learning also flourishes when adapted to the learner's stage of life and surroundings. When a child is given too much intellectual load, learning turns into a burden: yet the same, when conveyed through stories, images and play, changes into delight.

Gurus of old shaped education in forests and hermitages according to the student's stage of life. Tagore at Shantiniketan revived this truth, teaching children amidst nature in harmony with their environment.

Once a guru asked his three disciples to behold the same tree in different seasons. One beheld it bare and withered, another adorned with blossoms and the third heavy with fruit. When they shared there visions, the guru spoke: Thus it is with education–it yields varied experiences with time and circumstance, yet its essence and purpose ever remain to bestow happiness and to lead towards growth.

Just as digital classrooms and creative methods engage today's youth, while rote-learning alone might burden them, true education evolves with the needs of its age–ever a source of joy, not oppression–but it must always be filled with universal human values.

❀❀❀

100

गुरुकुलं व सुहसिक्खा, ण ववसायोव्व णो कय-विक्कयोव्व।
मादुपदत्तभोयणं, जह पुट्ठिमं ण कीद-अदणं॥100॥

सुशिक्षा गुरुकुल के समान होनी चाहिए, व्यापार के समान क्रय-विक्रय रूप नहीं होनी चाहिए। जिस प्रकार माता के द्वारा दिया गया भोजन पौष्टिक होता है खरीदा हुआ भोजन नहीं। (उसी प्रकार गुरु द्वारा निर्लोभ भाव से दी गयी शिक्षा श्रेयस्कर होती है, बेची गई नहीं।)

True education should be like the Gurukul system, never like a marketplace transaction. Just as a mother's food, given with love, nourishes more than purchased food, in the same way, the knowledge imparted selflessly by a Guru uplifts the soul far more than that which is bought.

व्याख्या–शिक्षा कभी भी बाजार का सामान नहीं हो सकती। यह गुरु और शिष्य के बीच का आत्मिक बन्धन है, जो निष्काम सेवा और वात्सल्य से सींचा जाता है। जैसे माँ अपने शिशु को भोजन केवल भूख मिटाने के लिए नहीं, बल्कि प्रेम और पोषण के भाव से देती है, वैसे ही सच्चा गुरु ज्ञान केवल आजीविका का साधन बनाकर नहीं, बल्कि शिष्य के जीवन को समृद्ध करने के लिए प्रदान करता है। खरीदी हुई वस्तु में माँ का वात्सल्य नहीं मिलता, उसमें वह शक्ति नहीं होती जो देह व आत्मा को पुष्ट करे। उसी

प्रकार जब शिक्षा केवल डिग्रियों की खरीद–बिक्री में बदल जाए, तो उसका रस और सार समाप्त हो जाता है।

प्राचीन भारत का गुरुकुल इसी सत्य का प्रत्यक्ष प्रमाण है। वहाँ शिक्षा धन के लेन–देन पर नहीं, बल्कि समर्पण, अनुशासन और आत्मिक सेवा पर आधारित थी। शिष्य अपने गुरु के साथ रहकर उनका कार्य करते, सेवा करते, और उसी वातावरण में चरित्र और ज्ञान दोनों का विकास होता। यही कारण था कि उन गुरुकुलों से निकलने वाले शिष्य केवल विद्वान ही नहीं, बल्कि आदर्श नायक, समाज सुधारक और नीति–निर्माता भी बने।

एक धनी व्यापारी ने अपने पुत्र को शिक्षा के लिए गुरुकुल भेजा। जब पुत्र लौटा, तो व्यापारी ने पूछा–''तुमने वहाँ क्या पाया?" पुत्र ने कहा–''पिताजी! वहाँ मुझे केवल विद्या ही नहीं, बल्कि विनय, संयम, श्रम और आत्म–नियन्त्रण भी मिले। यही सब मुझे जीवन का सबसे बड़ा धन प्रतीत होता है।'' व्यापारी ने गम्भीर होकर उत्तर दिया–"बेटा, यही वह धन है जो कभी नष्ट नहीं होता। यदि इसे रुपये से खरीदा जा सकता, तो हम बहुत पहले ही खरीद लेते।''

आज शिक्षा अक्सर प्रतिस्पर्धा, फीस, और करियर की दौड़ में बदलती जा रही है। लेकिन यदि इसमें गुरु का प्रेम, शिष्य का समर्पण और आदर्श का भाव न रहे, तो शिक्षा खोखली हो जाती है। सच्ची शिक्षा वही है जो आत्मा को संस्कारित करे, जीवन को दिशा दे, और समाज को श्रेष्ठता की ओर ले जाए।

Explanation–Education is not a commodity for sale; it is a sacred bond between teacher and student, woven with selfless care. A mother feeds her child not merely to fill the stomach, but to nurture life with affection. Similarly, a true Guru imparts wisdom not for profit, but for the enrichment of the disciple's soul. When knowledge is reduced to a trade of money and degrees, it loses its vitality and sacred essence.

The Gurukuls of ancient Bharat stand as shining examples. There, education was grounded in service, discipline, and devotion, not financial exchange. Students lived with their Gurus, serving them, learning not only scriptures but also humility, courage, and moral strength. From such institutions emerged not only scholars, but also leaders, reformers and policy maker.

A wealthy merchant sent his son to a Gurukul. Upon returning, the son said, "Father, I did not just acquire knowledge; I learned humility, restraint, and self-discipline. These are treasures no wealth can buy." The father smiled and replied, "Indeed, my son, this is the only wealth that grows with time and can never be destroyed."

In an age where education is often reduced to fees, ranks, and jobs, we must remember that true education lies in selfless transmission, character building, and inspiration. Only then does learning become a lifelong nourishment, like a mother's meal–simple, pure, and soul-sustaining.

❀❀❀

101

सिक्खगो णो विक्केज्ज, सगसद्दणाणं वत्थु-विक्कयोव्व।
ण वरा सा अप्पकेर-भावेण विणा सत्थगा णो।।101।।

शिक्षक को वस्तु विनिमय के समान अपने शब्दज्ञान को बेचना नहीं चाहिए। आत्मीय भाव के बिना वह शिक्षा कभी श्रेष्ठ नहीं होती और सार्थक भी नहीं।

A teacher must never sell his words or knowledge as if they were objects of barter. Without warmth and sincerity, education can never be noble nor truly meaningful.

व्याख्या–ज्ञान कभी व्यापार की वस्तु नहीं होता। वह हृदय का अमृत है, जो केवल आत्मीयता और स्नेह से प्रवाहित होता है। यदि गुरु केवल शब्दों को बेचने लगे और शिष्य उन्हें वस्तु की तरह खरीदने लगे, तो शिक्षा अपनी आत्मा खो देती है। श्रेष्ठ शिक्षा वही है जिसमें गुरु का वात्सल्य, त्याग और आत्मीयता हो, और शिष्य का समर्पण और श्रद्धा हो।

गुरु और शिष्य का सम्बन्ध युगों से पवित्र माना गया है। यह सम्बन्ध बाजार के सौदे जैसा नहीं, बल्कि पिता-पुत्र, या और भी गहराई से कहें तो आत्मा और परमात्मा जैसा है। जब गुरु आत्मीयता के साथ ज्ञान देता है, तो उसके शब्द केवल कानों से नहीं, बल्कि हृदय और आत्मा से ग्रहण होते हैं। यही कारण है कि प्राचीन गुरुकुल व्यवस्था में शिक्षा

न तो शुल्क पर आधारित थी, न ही स्वार्थ पर; वह पूर्णतः आत्मीय भाव और समर्पण पर टिकी थी।

एक छोटी सी कथा इस भाव को स्पष्ट करती है। आचार्य चाणक्य के पास एक धनी व्यक्ति अपने पुत्र को शिक्षा दिलवाने आया और भारी दान देने की इच्छा व्यक्त की। चाणक्य मुस्कुराकर बोले–'मैं ज्ञान दान में देता हूँ, विक्रय में नहीं। यदि तुम्हारे पुत्र में श्रद्धा और तपस्या का भाव है तो वह विद्वान बनेगा; यदि केवल धन है और आत्मीयता नहीं, तो यह शिक्षा व्यर्थ जाएगी।' इस कथन से स्पष्ट होता है कि शिक्षा का मूल्य धन से नहीं, आत्मीयता और समर्पण से तय होता है।

आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में जब फीस, ट्यूशन, और कोचिंग की भीड से विद्यार्थी घिर जाते हैं, तो शिक्षा अक्सर केवल व्यापारिक बनकर रह जाती है। लेकिन यदि उसमें आत्मीय भाव, गुरु का मार्गदर्शन और शिष्य का समर्पण न हो, तो डिग्रियाँ भले मिल जाएँ, परन्तु आत्मा की प्यास कभी नहीं बुझती।

सच्चा गुरु वही है जो केवल पढ़ाता नहीं, बल्कि जीना सिखाता है। और सच्चा शिष्य वही है जो केवल जानकारी नहीं, बल्कि संस्कार ग्रहण करता है।

Explanation–Knowledge is not merchandise; it is nectar of the soul, meant to be shared with affection and care. When a Guru imparts learning without selflessness, or when a student seeks it merely as a

commodity, the sacred essence of education is lost. True teaching requires the heart of the teacher and the devotion of the student.

The guru-disciple relationship has been revered as sacred since ancient times. It is not a bargain of the marketplace, but a bond as profound as that of father and son and even more so, like that between the soul and the supreme being. Words spoken with love sink not only into the ears but into the very soul of the disciple. In the Gurukul tradition, education was not a trade but a sacred trust. Gurukul tradition rested not on fees or personal gain but on bonds of affection and selfless dedication.

A rich man approached Acharya Chanakya, seeking education for his son and offered to give a donation in return. Chanakya replied, “I do not sell knowledge; I only give it. If your son has humility and discipline, he will gain wisdom. If not, your wealth will achieve nothing.” This reveals that true education is not bought by money but by sincerity and effort.

In today’s world, where tuition centres and commercialization of learning are widespread, this lesson becomes urgent. Degrees may be purchased, but wisdom cannot. For the youth, the call is clear: seek teachers who inspire the soul, and approach them not as traders but as guides, mentors, and givers of light.

❀❀❀

102,103,104

माणस-सत्ति-विआसग-विसया तह भोदिगाइ-विण्णाणं।
खगोलं भूगोलं च, गणिदं णायं च वागरणं॥102॥

पागद-सक्किदाइ-भासा जोदिसं वत्थुं जंतसंबंधिं।
मंत-तक्क-सत्थं पि, संगणग-जंतं इच्चाइं॥103॥

पढावेज्ज सुसिक्खगा, जहजोग्गं सक्कारं दायंता।
रक्खगं वड्ढगं कुलधम्म-सब्भदा-सक्किदीणं॥104॥ (तिगं)

सुशिक्षकों को कुलधर्म, सभ्यता व संस्कृति के रक्षक, सम्वर्द्धक, यथायोग्य संस्कारों को देते हुए मानसिक शक्ति के विकास करने वाले विषय भौतिक विज्ञानादि अन्य विज्ञान, खगोल, भूगोल, गणित, न्याय, व्याकरण, प्राकृत व संस्कृतादि भाषा, ज्योतिष, वास्तु, यंत्र सम्बन्धित (तकनीकी) शास्त्र, मन्त्र व तर्क शास्त्र तथा कम्प्यूटर इत्यादि को भी पढ़ाना चाहिए।

True teachers are guardians and sustainers of tradition, civilization, and culture. They instill noble values, nurture mental strength, and impart a vast range of disciplines–sciences, astronomy, geography, mathematics, logic, grammar, Prakrit, Sanskrit and other languages. At the same time, true education embraces Jyotisha (astrology), Vastu, Yantra-Shastra, Mantra-Shastra, Tarka-Shastra, and in modern times, technical knowledge, engineering, and computer science.

व्याख्या–सच्चा शिक्षक वह है जो केवल परम्परा का संरक्षण ही नहीं करता, बल्कि समयानुकूल ज्ञान का भी समावेश करता है। हमारे आचार्यों ने आत्मज्ञान का मार्ग दिखाया, तो भाषा को भी व्यवस्थित किया। गणित व खगोल को प्रखर किया। वास्तु और ज्योतिष ने जीवन की व्यावहारिक दिशा तय की। आधुनिक युग में यही परम्परा आगे बढ़ती है–अब शिक्षा में कम्पयूटर, तकनीकी विज्ञान, और डिजिटल ज्ञान का समावेश उतना ही आवश्यक है जितना पहले व्याकरण और खगोल था।

आचार्य चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को केवल राजनीति और युद्धकला ही नहीं सिखाई थी, बल्कि ज्योतिष, तर्कशास्त्र, और सामाजिक आचरण भी सिखाए। इसी कारण चन्द्रगुप्त ने साम्राज्य स्थापित करने के साथ-साथ उसे दीर्घकालीन स्थिरता भी दी। यह दिखाता है कि शिक्षा जब विविधता से परिपूर्ण होती है तभी स्थायी सफलता देती है।

आज के युवाओं के लिए शिक्षा का यही संदेश है– कि केवल कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग या केवल पारंपरिक शास्त्रों पर टिके रहना पर्याप्त नहीं। यदि ज्योतिष और वास्तु जैसी परम्परागत विधाएँ हमें जीवन का समन्वय सिखाती हैं, तो तकनीकी शिक्षा और कम्पयूटर विज्ञान हमें भविष्य निर्माण का साधन देते हैं। इन सबका समन्वय ही शिक्षा को जीवंत और प्रभावी बनाता है।

Explanation–A teacher who limits knowledge to one sphere is incomplete. A true teacher is one who not

only preserves tradition but also integrates knowledge that is relevant to the times. Our revered digambar Acharyas illuminated the path of self realisation, organised languages too. They advanced mathematics and astronomy. Alongside, Jyotisha and Vastu shaped practical living. In our era, the same spirit must continue–by including computer science, technology, and modern innovations within education, while still retaining cultural and spiritual foundations.

Chanakya, for instance, trained Chandragupta not only in politics and warfare but also in logic, astronomy, and social conduct. That holistic education made him not just a conqueror but a ruler capable of sustaining an empire. This illustrates that education yields true and lasting success only when it is infused with richness and diversity.

Education must be both rooted and futuristic. Tradition teaches us harmony, and modern science gives us tools to shape the future. Together, they create an education that is truly liberating and complete.

❀❀❀

105

णारीणं चउसट्ठी, तहा बाहत्तरि-कला पुरिसाणं।
जोग्गदाणुसारेणं, पढावेज्ज सया विवेगेण॥105॥

विवेकपूर्वक योग्यतानुसार नारियों को चौसठ एवं पुरुषों को बाहत्तर कला पढ़ानी चाहिए।

With discernment and according to aptitude, women should be taught the 64 arts and men the 72 arts.

व्याख्या–भारतीय संस्कृति में कला का अर्थ केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि जीवन को सम्पूर्ण बनाने वाली कौशलशक्ति है। नारी के लिए वर्णित 64 कलाएँ–जिनमें सङ्गीत, नृत्य, चित्रकला, हस्तशिल्प, सुलेख, रसायन, रसोई-कला, पुष्प-शोभा, संवाद-कला, आदि आती हैं– ये कलाएँ केवल सजावट का साधन नहीं थीं, बल्कि वे जीवन प्रबन्धन और सामाजिक प्रतिष्ठा की आधारशिला थीं। इसी प्रकार पुरुष के लिए 72 कलाएँ-जिनमें युद्धकला, शास्त्रार्थ, राजधर्म, आयुर्वेद, वास्तु, तर्कशास्त्र, खगोल, गणित, और शिल्पविद्या सम्मिलित हैं–जो जीवन को शक्तिशाली, नेतृत्वशील और उत्तरदायी बनाती थीं।

महापुरुषों का जीवन केवल वीरता का नहीं, बल्कि सौंदर्य, कला और नीति का प्रतीक था। महारानी केकया जैसी विदुषी रानियाँ या राजमहलों की शिक्षित स्त्रियाँ कला और संस्कृति की उन्नति का कारण बनीं।

यदि हम इसे आज के सन्दर्भ में देखें, तो इन 64 और 72 कलाओं का आशय है–समग्र शिक्षा। नारी को केवल रसोई या सौंदर्य की कला तक सीमित न रखकर उन्हें सङ्गीत, साहित्य, विज्ञान, नेतृत्व और डिजिटल शिक्षा तक पहुँचा देना चाहिए। पुरुषों को केवल भौतिक शक्ति या तकनीकी कौशल तक सीमित न रखकर उन्हें सहानुभूति, सहयोग, कला-संवेदनशीलता और आत्मानुशासन भी सिखाना आवश्यक है।

एक सङ्गीतज्ञ पिता ने अपनी बेटी को केवल सङ्गीत ही नहीं, बल्कि विज्ञान भी सिखाया। परिणाम यह हुआ कि वह लड़की आगे चलकर साउंड इंजीनियरिंग की विशेषज्ञ बनी और भारतीय शास्त्रीय सङ्गीत को आधुनिक तकनीक के माध्यम से पूरी दुनिया तक पहुँचाया। यह वही समन्वय है, जिसे 64 और 72 कलाओं की संकल्पना व्यक्त करती है।

आज के युवाओं के लिए संदेश यही है कि शिक्षा को सीमित न किया जाए, बल्कि हर विद्यार्थी को उसकी क्षमता और रूचि के अनुसार समग्र कला, विज्ञान और तकनीक से जोड़ना चाहिए। तभी शिक्षा जीवन को पूर्णता दे सकेगी।

Explanation–In Indian tradition, the term kala (art) does not merely mean an art as entertainment, but the totality of skills that make life whole. The 64 arts for women included music, dance, painting, calligraphy, culinary science, perfumery, conversation skills, and crafts. These were not trivial pursuits but tools of refinement, management, and cultural prestige. Similarly, the 72 arts for men covered statecraft,

astronomy, mathematics, medicine, architecture, logic, warfare, and philosophy–preparing them for leadership and responsibility.

Lives of great men were not merely a reflections of bravery but also of beauty, wisdom, art and ethics. Learned queens such as Rani Kekaya elevated entire courts through their mastery of arts and letters.

In today's context, the essence is clear: the "64 and 72 arts" represent holistic education. Women should not be confined to domestic skills; they must be encouraged in music, literature, science, leadership, and digital knowledge. Men should not be restricted to physical strength or technical training; they too must learn empathy, cooperation, cultural sensitivity, and self-discipline.

A father trained his daughter not only in classical music but also in science. She later became a sound engineer, using technology to bring Indian classical music to the world. This is the living spirit of the ancient ideal.

Education must not be confined within boundaries and equip every individual with skills, science, arts, and values according to their aptitude. Only then does education fulfill its true purpose–making life complete.

❀❀❀

106

जदि सत्थ-वाहण-जंत-संचालण-सिक्खा ससदुवओगो।
हिदयरा जदि इदरा, अणत्थगा अवि परमविज्जा॥106॥

यदि शस्त्र, वाहन व यंत्र संचालन की शिक्षा सदुपयोग से युक्त हो तो वह हितकारी होती है, इससे इतर अर्थात् शिक्षा दुरुपयोग से युक्त हो तो वह परमविद्या भी अनर्थकारी होती है।

If the knowledge of weapons, vehicles, or machines is guided by right use, it becomes beneficial. But when misused, even the highest learning turns destructive.

व्याख्या–शिक्षा का असली मूल्य ज्ञानार्जन में नहीं, अपितु उसके सदुपयोग में है। शस्त्र, वाहन या यन्त्र–ये सभी साधन जीवन को सुगम और सुरक्षित बनाने के लिए हैं। किन्तु जब इनका दुरुपयोग होता है, तो यही साधन समाज को विनाश की ओर ढकेल देते हैं।

इतिहास में देखें–अर्जुन और अश्वत्थामा दोनों शस्त्र विद्या में पारङ्गत थे। अर्जुन ने धर्म की रक्षा के लिए धनुष उठाया, जबकि अश्वत्थामा ने अन्याय का साथ देकर विद्या का दुरुपयोग किया। परिणामस्वरूप, अर्जुन को लोक-प्रशंसा मिली और अश्वत्थामा को शाप। यही है शिक्षा के सदुपयोग और दुरुपयोग का अन्तर।

आज के युग में शस्त्रों की जगह टेक्नोलॉजी है।

मोबाइल, इंटरनेट, सोशल मीडिया और आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेन्स (AI)–ये सभी आधुनिक शस्त्र हैं। यदि इनका उपयोग शिक्षा, जन–जागरण, समाज–सुधार और प्रगति के लिए किया जाए, तो ये वरदान हैं। किन्तु यदि इन्हें नफरत फैलाने, व्यसन, फेक न्यूज, साइबर अपराध या मानसिक प्रदूषण के लिए इस्तेमाल किया जाए, तो ये अभिशाप बन जाते हैं।

आज युवाओं में मोबाइल और सोशल मीडिया की लत गहरी हो रही है। बहुत से छात्र अपना अमूल्य समय पढ़ाई के बजाय स्क्रीन पर खो देते हैं। कुछ लोग AI का उपयोग रचनात्मकता के लिए करते हैं, तो कुछ धोखा देने या आलस्य बढ़ाने में। ठीक उसी प्रकार जैसे तलवार से कोई निर्दोष की रक्षा भी कर सकता है हत्या भी।

एक कॉलेज के छात्र ने गेमिंग और सोशल मीडिया में इतना समय गंवा दिया कि परीक्षा में असफल हो गया। वहीं उसके ही मित्र ने उन्हीं तकनीकों का उपयोग ऑनलाइन लर्निंग और प्रोजेक्ट रिसर्च में किया और पुरस्कार पाया। दोनों के पास समान साधन थे, लेकिन परिणाम विपरीत हुए–क्योंकि एक ने साधन को साधन माना, दूसरे ने उसे विनाश का कारण बना दिया।

शिक्षा और तकनीक दोनों दो धार वाली तलवार की तरह हैं। इनका उपयोग यदि संयम, विवेक और नैतिकता के साथ हो, तो यह उन्नति का मार्ग है; अन्यथा पतन निश्चित है।

Explanation–The true worth of education lies not in mere acquisition but in its application. Weapons, vehicles,or machines are tools; they uplift only when guided by noble intent. But when they are misused, these very means lead society towards destruction.

Arjuna and Karna were equally skilled. Arjuna used his knowledge for dharma, while Karna misused it by supporting injustice. One became celebrated, the other cursed.

In today's world, weapons have taken the form of technology–moblies, social media, and Artificial Intelligence. When used for learning, innovation, and social good, they are blessings. But when misused for addiction, fake news, cyber-crimes, or spreading hate, they become curses.

Two students had access to the same internet. One wasted his nights in endless scrolling and gaming, failed in his exams, and lost confidence. The other used online platforms for study, research, and skill-building, winning scholarships. The same tool, but drastically different outcomes–all because of the direction of its use.

Education and technology are like double-edged swords. Guided by wisdom, they uplift: guided by ignorance, they destroy.

❀❀❀

107

तिल्लेण विणा दीवो, पजलदि णो चिरं णिव्ववदि अइरं।
जह तह कीड-सिक्खा वि, इंदधणूव जहट्ठं णेव॥107॥

जैसे तेल के बिना दीपक अधिक समय तक नहीं जलता, वह शीघ्र ही बुझ जाता है। जैसे इन्द्रधनुष यथार्थ नहीं होता उसी प्रकार खरीदी हुई शिक्षा भी शीघ्र नष्ट हो जाती है, वह यथार्थ नहीं होती।

Just as a lamp without oil cannot burn for long and is soon extinguished, just as a rainbow has no real substance, in the same way, purchased education quickly fades away and is never real.

व्याख्या–शिक्षा केवल शब्दों या प्रमाणपत्रों का नाम नहीं है। खरीदी हुई शिक्षा दीपक में तेल के बिना लौ के समान है–थोड़ी देर चमक सकती है, परन्तु जल्दी ही बुझ जाती है। इसी प्रकार, दिखावे की डिग्री, रटकर पास होना, या केवल पैसे देकर खरीदी गई विद्या जीवन के पथ को कभी आलोकित नहीं कर सकती।

इन्द्रधनुष क्षणिक होता है, सुंदर तो दिखता है पर उसका कोई ठोस आधार नहीं होता। वैसी ही जो शिक्षा मेहनत, साधना और गुरु के आशीर्वाद से प्राप्त न हो वह शिक्षा भी क्षणभंगुर है।

आज के समय में "डिग्री शॉपिंग" या "ऑनलाइन शॉर्टकट डिग्रियाँ" बहुत तेजी से बढ़ रही हैं। कुछ युवा मानते हैं कि बस कागज पर प्रमाणपत्र मिल गया तो सब मिल गया। लेकिन बिना गहराई के शिक्षा जीवन की किसी कठिन परिस्थिति में सहारा नहीं बनती।

एक लड़के ने पैसे देकर परीक्षा पास की और इंजीनियर बन गया। नौकरी में जब असली मशीन खराब हुई, तो वह उसे ठीक न कर सका। उसकी चमक उसी इन्द्रधनुष जैसी थी, जो थोड़ी देर दिखाई देती है और फिर गायब हो जाती है। इसके विपरीत, वहाँ उसका सहपाठी जिसने रातों को जगकर अभ्यास किया था, आज सबका मार्गदर्शन करता है। यही अन्तर सच्ची शिक्षा और खरीदी हुई शिक्षा का है। समीचीन शिक्षा खरीदी नहीं जा सकती इसे चरित्र, धैर्य और अभ्यास के माध्यम से विकसित करना पड़ता है।

Explanation–True education is not a mere certificate, nor something to be bought and displayed. Knowledge that comes without effort, discipline, and genuine guidance is like a flame without oil–bright for a moment, but soon extinguished.

A rainbow may look beautiful, but it is an illusion without permanence. So is purchased education: attractive on the surface, but hollow and without the power to sustain life's journey.

In today's world, degree-shopping and shortcut courses have become common. But certificates without true learning collapse in real-life challenges.

A young man bought his way through exams and got an engineering job. But when faced with a real machine breakdown, he failed miserably. His shallow knowledge vanished like a rainbow. On the other hand, his classmate who had learned with patience and practice became the true problem-solver. That is the power of genuine education.

True education cannot be bought; it must be cultivated through character, patience and practice.

❀❀❀

108

मरीइगा व सिक्खा ण, सक्का सिस्स-समाय-हिदं करिदुं।
मरीइगा णो सलिलं, जं तं तुट्ठिकारगं णेव॥108॥

जो शिक्षा मरीचिका के समान होती है, वह शिष्य-समाज का हित करने में शक्य नहीं है, क्योंकि मरीचिका जल नहीं है इसलिए वह किसी के लिए तुष्टिकारक नहीं है।

Education that is like a mirage can never truly benefit the student, for a mirage is not real water, and hence it can never quench anyone's thirst.

व्याख्या–यह गाथा एक गहरी चेतावनी है। जैसे रेगिस्तान का मरीचिका (भ्रम-जल) देखने में मोहक लगता है, पर वास्तव में वह कभी भी प्यास नहीं बुझा सकता, उसी प्रकार शिक्षा यदि केवल बाहरी आडम्बर, उपाधियों और प्रमाणपत्रों पर आधारित हो, तो वह जीवन की प्यास को कभी शांत नहीं कर सकती।

सच्ची शिक्षा वह है जो आत्मा के भीतर उतरकर विवेक, करुणा और चरित्र का निर्माण करे। यदि शिक्षा केवल नौकरी, प्रतिष्ठा या भौतिक उन्नति का साधन बन जाए, तो वह मरीचिका मात्र है।

"भ्रम मार्ग का सबसे बड़ा शत्रु है।" राजा नल मोह और माया के कारण सब कुछ खो बैठे, क्योंकि उन्होंने वास्तविकता के बजाय आभास का अनुसरण किया। यह प्रसंग आज भी युवाओं को स्मरण कराता है कि बाहरी चमक-दमक के पीछे भागने से जीवन की सच्चाई नहीं मिलती।

आज की पीढ़ी में यह मरीचिका और भी बढ़ गई है। सोशल मीडिया पर चमकते हुए प्रोफाइल्स, दिखावटी सफलता की तस्वीरें, और तात्कालिक नाम व प्रसिद्धि–ये सब उस रेगिस्तानी जल जैसे हैं, जो क्षण भर आकर्षित करते हैं लेकिन अन्ततः प्यास ही छोड़ जाते हैं। शिक्षा का उद्देश्य ''ज्ञान की प्यास बुझाना'' है, न कि केवल "भ्रम का पीछा करना।''

Explanation–This verse is a profound reminder. Just as the desert mirage looks enticing from afar but never quenches thirst, so too is education that is built only upon glitter, certificates, and empty prestige. It may appear grand, but it cannot nurture the soul.

True education penetrates within and cultivates wisdom, compassion, and character. If learning is reduced merely to a means for job, wealth, or external recognition, it becomes nothing more than a mirage.

Illusion is the greatest enemy of the path. The story of King Nala illustrates this truth–illusion and delusion led him to lose everything. Likewise, students who chase appearances rather than substance ultimately lose the true essence of knowledge.

In today's world, the mirage has multiplied–shiny social media profiles, shallow instant knowledge, and superficial fame. They attract momentarily but leave the heart empty. Real education quenches the thirst of life; false education only deepens the drought.

❀❀❀

109

लोए बहुप्पयारा, विज्जा सुकला भासा विण्णाणं।
जा जीवणं सफलेदि, तं सिक्खं गहेज्ज हंसोव्व।।109।।

लोक में बहुत प्रकार की विद्या, सम्यक् कला, भाषा व विज्ञान है। जो शिक्षा जीवन को सफलीभूत करे वह शिक्षा हंस के समान ग्रहण करनी चाहिए।

In this world, there are countless forms of knowledge, fine arts, languages, and sciences that can make life truly fruitful. Education must be received like the swan, which chooses wisely.

व्याख्या–इस गाथा में आचार्य भगवन् यह संदेश दे रहे हैं कि संसार में अनेकों प्रकार की विद्याएँ, कलाएँ और ज्ञान के विषय उपलब्ध हैं–सङ्गीत कला, गणित, विज्ञान, भाषा, दर्शन, अध्यात्म आदि। लेकिन एक विद्यार्थी को हंस की भाँति विवेकपूर्वक चुनना चाहिए।

हंस के विषय में कहा जाता है कि वह दूध और पानी में से केवल दूध ग्रहण कर लेता है। उसी प्रकार शिक्षा ग्रहण करने वाला व्यक्ति भी केवल वही ज्ञान, वही कला और वही भाषा ग्रहण करे, जो जीवन को उपयोगी, सार्थक और सफल बनाए।

आज के समय में यह संदेश और भी गहरा है। हमारे चारों ओर सूचना का महासागर है–इंटरनेट, सोशल मीडिया, और डिजिटल प्लेटफॉर्म अनगिनत प्रकार की सामग्री से भरे

हैं। लेकिन उनमें से बहुत कुछ मरीचिका के समान है, जो केवल समय और ऊर्जा का अपव्यय करता है। विद्यार्थी यदि विवेकपूर्वक चुन ले कि कौन-सा ज्ञान उसके जीवन निर्माण में सहायक है, तो वही शिक्षा सार्थक होगी।

स्वामी विवेकानन्द ने कहा था-"Education is the manifestation of perfection already in man." इसका तात्पर्य यही है कि ज्ञान वही ग्रहण करो, जो भीतर की पूर्णता को प्रकट करे, न कि केवल बाहर का बोझ बढ़ाए।

Explanation–This verse teaches that although many streams of learning exist–music, arts, mathematics, science, languages, philosophy, and spirituality–the student must practice discernment like the mythical swan, which is said to separate milk from water, taking only the essence.

In the modern world, this message is especially relevant. We are surrounded by a flood of information–through the internet, social media, and digital media. Yet much of it is distraction, like a mirage, draining time and energy. True education is not to absorb everything indiscriminately but to wisely select knowledge that enriches life and builds character.

Swami Vivekananda once said, "Education is the manifestation of the perfection already within man." Thus, one must embrace only that learning which awakens inner potential, not the kind that burdens the mind.

❀❀❀

110

सक्किदि-सब्भदा-धम्म-कत्तव्व-मज्जादा-विघादगा य।
ण होज्ज सिक्खा कया वि, सुमरदु विज्जमिदं गहंतो॥110॥

विद्या को ग्रहण करते हुए यह सदैव स्मरण रखना चाहिए कि शिक्षा कदापि संस्कृति, सभ्यता, धर्म, कर्तव्य व मर्यादा की विघातक नहीं होनी चाहिए।

While acquiring knowledge, one must always remember that true education should never become destructive to culture, civilization, religion, duty, or moral discipline.

व्याख्या—सच्ची विद्या केवल बुद्धि का विस्तार नहीं करती, बल्कि हृदय और आचरण को भी संस्कारित करती है। शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य को अधिक मानवीय बनाना है—ऐसा मनुष्य, जो धर्म की मर्यादा को निभाए, कर्तव्य का पालन करे और संस्कृति व सभ्यता का संवाहक बने। यदि शिक्षा से संस्कार न बढ़े, यदि वह केवल तकनीक या कौशल तक सीमित रह जाए, तो वह अधूरी है, जैसे बिना सुगन्ध के फूल या बिना सार के फल।

इंटरनेट और सोशल मीडिया के माध्यम से जानकारी क्षण-भर में उपलब्ध है, परन्तु यदि वह जानकारी संस्कृति को तोड़े, धर्म की नींव हिलाए, मर्यादा को भंग करे, तो वह शिक्षा न होकर केवल 'सूचना' है।

शिक्षा का उद्देश्य केवल बुद्धि तेज करना नहीं, बल्कि मर्यादा और संस्कृति को अक्षुण्ण रखना है।

आज के युवाओं के सामने सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि आधुनिक ज्ञान और तकनीकी साधनों का उपयोग किस दिशा में किया जाए। यदि शिक्षा हमें कर्तव्य से विमुख कर दे, यदि हम संस्कृति और सभ्यता को भूल जाएँ, तो वह शिक्षा बोझ है। परन्तु यदि शिक्षा हमें अधिक संवेदनशील, कर्तव्यनिष्ठ और मर्यादित बनाती है, तो वही जीवन का वास्तविक अलंकार है।

Explanation–True education does not merely sharpen the intellect; it refines the heart and purifies conduct. Its purpose is to make a human more humane–a protector of culture, a practitioner of duty, and a preserver of moral order. Education that erodes values and destroys harmony is incomplete, like a flower without fragrance or a fruit without taste.

Data is easily accessible through the internet and social media. But when knowledge breaks the fabric of culture and morality, it becomes mere information, not education.

A story tells of a prince who returned after years of foreign education, boasting of his debating skills but showing no humility or compassion. His father, the king, lamented: "I desired a son who would uphold culture, not one who only inflates his ego." The purpose of education is not merely to sharpen the intellect but to preserve values and culture.

For modern youth, the real challenge lies not in acquiring knowledge but in using it wisely. If education distances us from our duty and culture, it becomes a burden. But if it leads us to greater sensitivity, responsibility, and discipline, then it becomes the true ornament of life.

❀❀❀

111

णाय-धम्म-पवट्टगा, कारगा सुह-संति-देसुण्णदीण।
सिक्खा हु सफला पवट्टिदा णिग्गंथ-अप्पणाणी॥111॥

जो शिक्षा न्याय व धर्म की प्रवर्तक है, सुख-शान्ति व देशोन्नति की कारक है वह शिक्षा सफल है, वह निर्ग्रन्थ व आत्मज्ञानियों के द्वारा प्रवर्तित है।

That education which promotes justice and dharma, which brings peace and harmony, and which contributes to the progress of the nation, is true and successful education. Such education has always been established by the Nirgrantha Gurus and the enlightened souls.

व्याख्या–सच्ची शिक्षा वही है जो केवल प्रमाण-पत्र पाने का साधन न होकर न्याय और धर्म की दिशा में जीवन को प्रवाहित करे। जब शिक्षा व्यक्ति को न्यायप्रिय, सत्यनिष्ठ और करुणामय बनाती है, तब समाज में शान्ति स्थापित होती है। जिस शिक्षा से राष्ट्र की उन्नति हो, संस्कृति का संरक्षण हो और मानवता का उत्थान हो, वही शिक्षा वास्तव में सफल है। यह शिक्षा अनादिकाल से आचार्यों और आत्मज्ञानी महापुरुषों द्वारा प्रवर्तित होती आई है, क्योंकि वे जानते हैं कि बिना धर्म और न्याय के, शिक्षा एक खोखला खोल है।

एक प्रसंग है राजा जनक का। जब उनसे पूछा गया कि

''आपके राज्य की स्थिरता और सुख का मूल क्या है?'' तो उन्होंने उत्तर दिया–

''मेरे प्रजाजन केवल विद्वान ही नहीं, धर्मनिष्ठ और न्यायप्रिय भी हैं।''

आज की युवा पीढ़ी को यह समझना होगा कि शिक्षा केवल कैरियर और धन-सम्पत्ति के लिए नहीं है। यदि आपकी शिक्षा न्याय की स्थापना और धर्म के मार्ग पर चलने में सहायक नहीं, तो उसका सार अधूरा है।

आज का युवा शिक्षित तो है, परन्तु शिक्षित होने के बावजूद समाज में अव्यवस्था क्यों? क्योंकि शिक्षा का आधार केवल करियर और प्रतियोगिता रह गया है। इससे युवाओं में तनाव, अवसाद, और असंवेदनशीलता बढ़ रही है। यदि शिक्षा के पाठ्यक्रम में न्याय, धर्म, करुणा और नैतिक मूल्यों को प्रमुखता दी जाए, तो वही शिक्षा उन्हें जीवन के हर क्षेत्र में सफल बनाएगी।

उदाहरण के लिए, जब कोई युवा डॉक्टर बने-तो उसका उद्देश्य केवल धनार्जन न होकर, रोगियों की सेवा भी हो। जब कोई युवा इंजीनियर बने–तो उसका लक्ष्य केवल भवन निर्माण न होकर, समाज की स्थिरता और सुरक्षा हो। यही है धर्म-आधारित शिक्षा की विशेषता।

Explanation–True education is not limited to acquiring degrees or worldly success. It is that which inspires justice, righteousness, and compassion in human conduct. When education becomes a force

for social harmony and national progress, it fulfills its purpose. From ancient times, enlightened teachers and seers have shown that only such education can transform lives.

When King Janaka was asked about the secret of stability in his kingdom, he replied:

"My subjects are not just learned, they are righteous and just." This shows that education grounded in dharma and justice is the foundation of a prosperous society.

For today's youth, this teaching is vital: education must go beyond careers and material gains. If it does not nurture justice, integrity, and compassion, it remains incomplete. A generation that combines knowledge with justice can become the architect of a strong, peaceful, and progressive nation.

Modern youth are educated, yet society suffers from disorder. Why? Because education today is mostly about career and competition. This leads to stress, depression, and insensitivity. If justice, dharma, compassion, and ethical values are placed at the heart of education, youth will not only succeed professionally but also become pillars of peace and progress in society.

For example, a doctor's purpose should not be limited to earning wealth but to serve humanity. An engineer should not merely build structures, but ensure safety and sustainability. This is the power of dharma-based education.

❀❀❀

112

णिरंकुस-गयोव्व जिण्णतडसंजुद-मंदाकिणी व णेया।
विणासगा सगवराण, सुसक्कारविहीणा सिक्खा॥112॥

सुसंस्कार से रहित शिक्षा निरंकुश हाथी एवं जीर्ण तट से संयुक्त नदी के समान स्वपर की विनाशिका जाननी चाहिए।

Education without values is like a wild elephant, uncontrollable and destructive, or like a river without embankments, which floods and devastates everything. Ultimately, it becomes a force of self-destruction.

व्याख्या—शिक्षा यदि सुसंस्कारों से रहित हो तो वह जीवन के लिए वरदान नहीं, बल्कि अभिशाप बन जाती है। जैसे जंगली, निरंकुश हाथी अपने बल और क्रोध में न केवल दूसरों को हानि पहुँचाता है, बल्कि अन्ततः स्वयं भी विनाश को प्राप्त होता है; उसी प्रकार संस्कारहीन शिक्षा भी समाज और स्वयं विद्यार्थी दोनों को पतन की ओर धकेल देती है। इसी तरह, जिस नदी के किनारे बाँध और तटबन्ध न हों, वह थोड़े ही समय में अपनी सीमा लाँघकर गाँव, खेत और बस्तियों को डुबा देती है और अन्ततः अपने ही जल को व्यर्थ कर देती है। शिक्षा यदि संयम, मर्यादा और धर्म से बँधी न हो तो वह मानव जीवन की धारा को भी इसी तरह भटका देती है।

महान दार्शनिक प्लेटो ने कहा था— "Education without morals is like a ship without a compass." अर्थात् यदि शिक्षा में नैतिकता का मार्गदर्शन न हो, तो वह

लक्ष्यहीन नौका की तरह है जो अन्ततः डूब जाती है।

डिजिटल युग में शिक्षा केवल ज्ञानार्जन और तकनीकी दक्षता तक सीमित कर दी गई है, लेकिन यदि उसमें संस्कार और मूल्य न हों तो वही शिक्षा साइबर क्राइम, भ्रष्टाचार, ड्रग्स, और हिंसा जैसी सामाजिक बुराइयों को जन्म देती है। सोशल मीडिया और आर्टिफिशियल इंटेलिजेन्स जैसी शक्तियाँ भी उसी नदी के समान हैं–यदि उन पर मर्यादा और संयम का बाँध न हो तो वे विनाशकारी बाढ़ ला सकती हैं।

कहा जाता है कि गुरु द्रोणाचार्य ने एक ही शिष्य को दिव्यास्त्र का ज्ञान देने से मना कर दिया था, क्योंकि वे जानते थे कि एकलव्य उस ज्ञान का दुरुपयोग करेगा। वहीं अर्जुन को वही ज्ञान दिया गया क्योंकि उसके भीतर संयम और धर्म की मर्यादा थी। इससे स्पष्ट है कि गुरु भी शिक्षा तभी देते थे जब यह सुनिश्चित हो कि वह शिक्षा सुसंस्कारों से संयुक्त होकर लोकहितकारी बनेगी।

सुसंस्कार रहित शिक्षा शक्ति तो देती है, पर दिशा नहीं देती। वह लाभ पहुँचाने के बजाय विनाश का कारण बनती है। शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञानार्जन नहीं, बल्कि चरित्र निर्माण होना चाहिए।

Explanation–Education, when stripped of values and ethics, ceases to be a blessing and turns into a curse. Just as a wild elephant, uncontrolled, destroys everything in its path and finally ruins itself, valueless education too leads society and the learner to downfall.

Similarly, a river without banks soon overflows, submerging villages and fields, and wastes its own waters. In the same way, education without discipline and morality misdirects the flow of human life.

As Plato rightly said: "Education without morals is like a ship without a compass."

In today's digital era, where knowledge is equated with information and technical skills, the absence of values makes education dangerous. Cybercrimes, corruption, drug abuse, and the misuse of technology are all signs of a river without boundaries. Social media and AI too are powerful rivers–when regulated, they nurture; when unregulated, they destroy.

Guru Dronacharya refused to impart the knowledge of divine weapons to Eklavya, knowing he lacked self-control. Yet he taught Arjuna, because Arjuna's heart was rooted in discipline and dharma. This shows that true knowledge is entrusted only to the value-conscious.

For today's youth, this verse is a reminder: education is not merely about degrees and skills. Unless it builds compassion, truthfulness, cooperation, and discipline, it is destructive power. Education must not only sharpen the mind but also purify the heart.

Education without values gives power but no direction. Such education is not a boon, but a curse. The true aim of learning is not information but transformation.

❀❀❀

113

शिक्षा का समय

गहिय सेसवे सम्मं, सिक्खं जोव्वणे कामं सेवेज्ज।
सुहं कुणंतो बुड्ढावत्थाइ साहदु परमट्ठं॥113॥

बाल्यावस्था में सम्यक् शिक्षा को ग्रहण करके यौवनावस्था में काम का सेवन करना चाहिए। पुनः शुभ अर्थात् पुण्य करते हुए वृद्धावस्था में परमार्थ को साधना चाहिए।

In childhood, one must acquire right education: in youth, one must engage in righteous and diligent work; and in old age, one must devote oneself to virtue, charity, and spiritual pursuits.

व्याख्या–जीवन तीन अवस्थाओं में बँटा हुआ है–बाल्य, युवा और वृद्ध।

बाल्यावस्था में सबसे आवश्यक है सम्यक शिक्षा। क्योंकि यह उम्र मन और बुद्धि को गढ़ने की है। जैसे ताजी मिट्टी में जो आकार दिया जाए वही स्थायी रहता है, वैसे ही बचपन की शिक्षा आजीवन चरित्र निर्माण का आधार बनती है।

यौवनावस्था कर्म और उत्साह का समय है। शिक्षा के आधार पर इस अवस्था में व्यक्ति को मर्यादित विषय-भोगों का सेवन करते हुए परिश्रम और कार्यशीलता से समाज और राष्ट्र के लिए योगदान करना चाहिए।

वृद्धावस्था का उद्देश्य है—धर्म, पुण्य और परमार्थ। क्योंकि तब जीवन का अनुभव गहरा हो चुका होता है और व्यक्ति आत्मकल्याण व लोककल्याण की दिशा में अग्रसर हो सकता है।

इस प्रकार शिक्षा जीवन की सभी अवस्थाओं का मार्गदर्शन करती है।

श्रीराम का जीवन इसका उत्तम उदाहरण है। बचपन में उन्हें गुरुकुल में सम्यक शिक्षा मिली। युवावस्था में उन्होंने पराक्रम, परिश्रम और कार्यशीलता का परिचय दिया एवं आदर्श राजा बने और जीवन के उत्तरार्ध में तप को स्वीकार करके शाश्वत सिद्ध अवस्था को प्राप्त किया।

आधुनिक शिक्षा अक्सर युवाओं को केवल नौकरी या व्यवसाय तक सीमित कर देती है। परिणामस्वरूप वे न तो बचपन में संस्कार ग्रहण करते हैं, न यौवन में कर्म की सही दिशा पाते हैं, और न वृद्धावस्था में परमार्थ की ओर उन्मुख हो पाते हैं।

इसलिए आज यह जरूरी है कि बचपन में शिक्षा केवल सूचनाओं का भण्डार न होकर संस्कारों की नींव बने। युवावस्था में शिक्षा से मिली ऊर्जा समाज-सेवा, विज्ञान, कला और राष्ट्रनिर्माण में लगे। वृद्धावस्था में शिक्षा आध्यात्मिक उन्नति और मानवीय आदर्शों को साधने का मार्गदर्शन करे।

जो बचपन में शिक्षा नहीं पाता, यौवन में संयम और कर्म नहीं करता, वह वृद्धावस्था में केवल पश्चाताप करता है।

जीवन की हर अवस्था का अपना उद्देश्य है। यदि बचपन में सही शिक्षा मिले, तो यौवन में सही कर्म होते हैं और वृद्धावस्था में जीवन सार्थक बनता है। यदि किसी अवस्था का कर्तव्य छूट गया, तो पूरा जीवन अधूरा रह जाता है।

Explanation–Life is divided into three stages; childhood, youth, and old age. Each stage has its own purpose. In childhood, the most essential need is proper education, for this is when the mind and intellect are tender. Just as the shape given to fresh clay becomes permanent, in the same way, the education imparted in childhood forms the foundation for lifelong building character.

Youth is the age of energy and enterprise. Guided by education, while living with moderation in worldly pleasures one should, in this phase of life, dedicate oneself to tireless effort and disciplined work for the betterment of society and the service of the nation.

The aim of old age is the pursuit of righteousness, merit and the supreme goal of liberation. At this stage, life's experiences are profound, the soul and service of enabling one to progress toward the upliftment of humanity.

The life of Lord Rama exemplifies this truth. He received noble education in his childhood, demonstrated valour and service in his youth, and in later life became an ideal king devoted to dharma and the welfare of his people. Later, through the path of penance, he realised the eternal and supreme state of liberation.

In today's world, education is often limited to career and livelihood. But true education must prepare a child with values, guide youth towards meaningful work, and inspire the elderly to pursue higher ideals and spiritual goals.

Hence, it is vital today that education in childhood serve not merely as a collection of facts, but as the very bedrock of values. In youth, the power and skill attained through education must be dedicated to service, science, art and the building of the nation. And in old age, education should illumine the path of spiritual upliftment and the pursuit of the highest ideals.

He who gains no education in childhood nor lives with discipline and noble action in youth, finds himself in old age consumed by repentance.

Right education in childhood shapes noble deeds in youth and brings fulfillment to old age. Yet, if even the duty of any stage of life is neglected, the whole life remains incomplete.

❀❀❀

114

ण कंखदि अत्थ-कामं, जदि णेव चित्ते धणविसय-लोहो।
तो सण्णाणं लहिय, गहेज्जा संजमं हिदत्थं॥114॥

यदि कोई युवा अर्थ व काम की आकांक्षा नहीं करता, उसके चित्त में धन व विषयों का लोभ नहीं है तो सम्यग्ज्ञान को प्राप्तकर हित के लिए संयम ग्रहण करना चाहिए।

If a youth does not crave wealth or sensual pleasures, if his mind is free from the greed of riches and indulgence, then he should embrace right knowledge and walk the path of self-restraint for the welfare of all.

व्याख्या–जीवन का यौवनकाल शक्ति, उत्साह और उमंग से परिपूर्ण होता है। प्रायः इस अवस्था में मनुष्य का मन–धन, भोग और सांसारिक आकर्षणों की ओर भटक जाता है परन्तु यदि कोई युवा विवेकशील है, और उसके मन में न धन का लोभ है, न इन्द्रिय विषयों का आकर्षण, तो समझना चाहिए कि उसमें आध्यात्मिक प्रगति का बीज अंकुरित हो चुका है।

ऐसा युवा यदि सम्यक् शिक्षा और सम्यक् ज्ञान को धारण कर ले, तो उसका जीवन केवल उसके लिए ही नहीं, बल्कि समाज और राष्ट्र के लिए भी प्रेरणादायक बन जाता है। संयम का पथ कठिन अवश्य है, परन्तु वही मनुष्य को वास्तविक शक्ति और परमानन्द प्रदान करता है।

राजमहल और भोगविलास के अवसर भगवान् महावीर स्वामी के सामने भी थे, परन्तु उन्होंने यौवनावस्था में ही न राज्य को अपनाया, न काम को बल्कि सम्यक् ज्ञान की ज्योति में संयम का पथ स्वीकार किया। और इसी संयम ने उन्हें जगत् का 'वीर' और ''महावीर'' बनाया।

आज के युग में बहुत से युवा अपने जीवन को "career" और "comfort zone" तक सीमित कर लेते हैं। लेकिन इतिहास में ऐसे उदाहरण भी हैं, जिन्होंने भोग और लोभ को त्यागकर संयम को अपनाया और समाज का कल्याण किया।

आज की पीढ़ी gadgets, reels और अनगिनत भोगों के आकर्षण से घिरी हुई है। यदि युवा इनसे ऊपर उठकर संयमित जीवन अपनाएंगे, तो उनकी ऊर्जा समाज परिवर्तन में लग सकती है।

श्रावक यदि देश संयम वा सकल संयम स्वीकार न कर पाए तो उसे जीवन में आत्म-नियंत्रण (self-control) और अनुशासन तो लाना ही चाहिए।

जैसे कोई खिलाड़ी junk food छोड़कर disciplined diet और अभ्यास से विश्व विजेता बनता है, वैसे ही युवा यदि इन्द्रिय-लोभ छोड़कर संयमित जीवन जिएँ, तो ज्ञान और शक्ति से वे भी विजयी बनेंगे।

''संयम ही वास्तविक शक्ति है; जिसके पास संयम नहीं, उसका ज्ञान भी स्थिर नहीं।''

Explanation–Youth is the age of energy and temptation. At this stage, man's mind frequently wanders towards indulgence, sensual enjoyments and the lures of the material world. But when a young person rises above the desires of wealth and lust, he becomes capable of walking on the higher path of wisdom and restraint. Such self-restraint is not weakness, but the greatest strength, leading not only to personal peace but also to the upliftment of society and nation. The path of self-restraint is certainly difficult, but it alone grants man true strength and supreme bliss.

Lord Mahavira, in his youth, renounced royal comforts and chose the path of restraint and knowledge. It is this very self-restraint that made him the Veera and the Mahaveera of the world.

In today's age, countless youth limit this aspirations to careers and personal comfort. Yet, history shines with examples of individuals who cast aside pleasure and greed, chose the path of self-restraint and worked for the upliftment of society.

In today's world of gadgets, entertainment, and endless distractions, true education lies in self-control. Restraint does not mean rejection of life, but channeling energy towards higher goals. Just as an athlete becomes a world champion by giving up junk food and adopting a disciplined diet and rigorous practice, so too can youth achieve wisdom and power by embracing self-restraint.

Self-restraint is the true strength; without it, even knowledge remains unstable.

❀❀❀

115

भवसिवसोक्खकारणं, भव्वुल्लाणं सण्णाणं णियमा।
सुणाणं विणा संती, ण जलं विणा अग्गिसमणं व॥115॥

भव्यजनों के लिए सम्यग्ज्ञान नियम से संसार-सुख व मोक्षसुख का कारण है। सम्यग्ज्ञान के बिना शान्ति वैसे ही नहीं मिलती जैसे जल के बिना अग्नि का शमन नहीं होता।

For noble souls, Right Knowledge is undoubtedly the cause of both worldly happiness and the bliss of liberation. Without Right Knowledge, peace is as impossible as extinguishing fire without water.

व्याख्या—भव्य जीवों के लिए सम्यक् ज्ञान ही वास्तविक दीपक है। यह ज्ञान संसार में भी सच्चा सुख देता है और परलोक में भी परम मोक्ष का द्वार खोलता है। यदि जीवन में सम्यक् ज्ञान न हो तो सारी शिक्षाएँ, विज्ञान, धन, वैभव और पद सब व्यर्थ हो जाते हैं।

जिस प्रकार अग्नि को बुझाने के लिए केवल जल ही समर्थ है, उसी प्रकार जीवन की असंख्य अशान्तियों को शान्त करने का साधन केवल और केवल सम्यक् ज्ञान है।

महाभारत में दुर्योधन के पास बल था, मित्रों की बड़ी सेना थी, और युद्धकला का अद्भुत कौशल भी था, परन्तु उसमें सम्यक् ज्ञान और विवेक का अभाव था।

परिणामतः उसका अन्त विनाश में हुआ। इसके विपरीत युधिष्ठिर ने सम्यक् ज्ञान और धर्म का आश्रय लिया और "धर्मराज" कहलाए।

आज के आधुनिक युग में भी यही शिक्षा उतनी ही प्रासंगिक है। तकनीक ने हमें अपार ज्ञान दिया है, इंटरनेट और सोशल मीडिया ने हमें असीमित जानकारी से भर दिया है, परन्तु यदि विवेक और सही दिशा न हो तो यही ज्ञान विनाशकारी सिद्ध हो सकता है।

युवा यदि केवल जानकारी इकट्ठा करें और यह न समझें कि क्या ग्रहण करना है और क्या त्यागना है, तो वे जीवन-पथ पर भटक जाएँगे।

अतः युवाओं के लिए संदेश यही है—सम्यक् ज्ञान अपनाओ। यही तुम्हें न केवल मानसिक शान्ति देगा, बल्कि समाज और राष्ट्र के लिए उपयोगी बनाएगा।

Explanation–For the enlightened beings, Right Knowledge is the true lamp of life. It grants real joy in the world and opens the doors of ultimate liberation. Without it, all education, science, wealth, glory, and power are meaningless.

Just as only water has the power to extinguish fire, so too only Right Knowledge can calm the countless flames of unrest in human life.

In the Mahabharata, Duryodhana possessed immense strength, loyal allies, and mastery of warfare. Yet, in the absence of Right Knowledge

and discernment, his end was ruin. By contrast, Yudhishthira, upholding Right Knowledge and Dharma, was revered as Dharmaraja.

Even in the modern age, the truth remains the same. Technology provides abundant information, and the internet floods us with endless data, but without discernment and right direction, such knowledge becomes destructive.

If the youth only collect information without knowing what to embrace and what to discard, they will surely lose their path in life.

Thus, the message for today's youth is this: Embrace Right Knowledge. It alone brings true peace, and it makes one a blessing to both society and the nation.

❀❀❀

116

इक्खू मिट्ठं सीयल-जलं सुमं सुगंधिदं सहावेण।
जह तह सण्णाणं सुह-संवेग-संजमाइ-हेदू॥116॥

जिस प्रकार स्वभावतः गन्ना मीठा, जल शीतल व पुष्प सुगन्धित होता है उसी प्रकार सम्यग्ज्ञान स्वभावतः सुख, संवेग व संयमादि का हेतु होता है।

Just as sugarcane is naturally sweet, water inherently cool, and flowers fragrant, in the same way, Right Knowledge is by nature the source of true happiness, spiritual enthusiasm, and self-restraint.

व्याख्या—प्रकृति के प्रत्येक तत्व की अपनी मौलिकता है—गन्ने की मिठास, जल की शीतलता और पुष्प की सुगन्ध। ये गुण किसी बाहरी प्रयत्न से नहीं आते, बल्कि उनकी आत्मसत्ता से प्रकट होते हैं। ठीक उसी प्रकार, सम्यक् ज्ञान मनुष्य के जीवन में जब प्रकट होता तो उससे सहज ही सुख, सन्तोष, सम्वेग और संयम जैसे दिव्य गुण जन्म लेते हैं।

सुभाषित रत्नावली में कहा है—

ज्ञानयुक्तो भवेज्जीवः स्वर्गश्रीमुक्तिवल्लभः।
ज्ञानहीनो भ्रमेन्नित्यं संसारे दुःखसागरे॥

ज्ञान से सहित जीव स्वर्ग, लक्ष्मी और मुक्ति का स्वामी होता है परन्तु ज्ञान से रहित जीव दु:ख के सागर स्वरूप संसार में निरन्तर भ्रमण करता रहता है।

जिस प्रकार सूर्य अपनी किरणों से अन्धकार का नाश करता है और कमल को खिलाता है, उसी प्रकार सम्यक् ज्ञान अज्ञान के अन्धकार को दूर करके मनुष्य के हृदय में संयम का कमल खिलाता है।

यदि गन्ने में मिठास न हो, या जल में शीतलता न हो, तो वे निरर्थक हैं। ठीक वैसे ही, यदि ज्ञान में सदाचार, आत्मसंयम और संस्कार न हो, तो वह केवल बोझ बन जाता है।

आज की पीढ़ी सूचना प्रवाह (Information Flood) के बीच जी रही है। ज्ञान तो बहुत है, लेकिन सम्यक् ज्ञान नहीं। डिग्रियाँ तो मिल रही हैं, पर जीवन में सन्तोष और शान्ति नहीं। टेक्नोलॉजी ने सुविधाएँ दी हैं, पर संयम और विवेक के बिना वही टेक्नोलॉजी व्यसन, तनाव और पतन का कारण बन रही है।

सम्यक् ज्ञान का अर्थ केवल किताबें पढ़ना नहीं, बल्कि सही और गलत में अन्तर करने की क्षमता विकसित करना है। केवल डिग्री पाना नहीं, बल्कि चरित्र और आचरण का उत्थान करना है। केवल नौकरी या धन कमाना नहीं, बल्कि जीवन को सार्थक बनाना है।

''जो दूसरों को हराने में नहीं, बल्कि स्वयं को जीतने में समर्थ हो, वही ज्ञानी है।''

सच्चा ज्ञान प्रतिस्पर्धा में दूसरों को नीचा दिखाने का साधन नहीं, बल्कि अपने भीतर के अज्ञान और अवगुणों को जीतने का उपाय है।

विज्ञान में प्रगति के साथ आध्यात्मिक विवेक, टेक्नोलॉजी के उपयोग में एथिक्स और मर्यादा, एआई और डिजिटल लर्निंग के साथ मानवीय संवेदनाएँ और करुणा भी आज समीचीन ज्ञान का एक रूप है।

यदि ज्ञान में यह सन्तुलन होगा, तभी वह गन्ने की मिठास और पुष्प की सुगन्ध की तरह जीवन को मधुर और सुगंधित बनाएगा।

सम्यक् ज्ञान वह शक्ति है, जो जीवन को शीतल, मधुर और सुगंधित बना देती है। जैसे गन्ने की मिठास, जल की शीतलता और पुष्प की सुगन्ध उसके स्वभाव का अंग हैं, वैसे ही सुख, संयम और सन्तोष सम्यक् ज्ञान का स्वभाविक परिणाम हैं। यही ज्ञान शान्ति देता है, संस्कार देता है और अन्ततः मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करता है।

Explanation–Every element of nature carries its own inherent quality-sweetness in sugarcane, coolness in water, and fragrance in flowers. Similarly, Right Knowledge does not remain barren; it naturally manifests as peace, discipline, contentment, compassion, spiritual zeal and restraint in the life of the one who attains it.

The soul endowed with knowledge reigns over heaven, prosperity and ultimate freedom, while one

bereft of knowledge drifts ceaselessly in the vast ocean of suffering called world.

Here, true knowledge does not signify mere information or rote learning, but a living knowledge that awakens discernment, steadies the soul on the path of righteousness (Dharma), and cultivates a person of deep virtues and noble character.

Just as the sun, with its rays, dispels darkness and makes the lotus bloom, in the same way true knowledge drives away the darkness of ignorance and makes the lotus of virtue, compassion and self-restraint blossom in the heart. Just as sugarcane without sweetness and water without coolness are worthless, so too knowledge when devoid of virtue, self-discipline and values, becomes nothing more than a burden.

Today's generation lives amidst a flood of information. There is plenty of knowledge but no true wisdom. Degrees are being earned, yet life lacks contentment and peace. Technology has provided comfort and convenience, but without self-restraint and discernment, the very same technology turns into an addiction, stress and downfall.

True knowledge lies not in the mere reading of books, but in cultivating the discernment to differentiate between what is right and what is wrong. It is not merely about earning a degree, but about elevating character and conduct. It is not merely about getting jobs and earning money, but about making life meaningful.

He alone is truly wise whose knowledge manifests as self-restraint and compassion in his actions, who seeks not to defeat others, but to triumph over his own self. This education impart to today's youth the lesson that true knowledge is not a weapon to put others down in rivalry, but a path to overcome the ignorance and flaws within oneself.

True knowledge manifests when scientific advancement guided by spiritual wisdom, when the use of technology is rooted in ethics and dignity and when Al and digital learning are balanced with humanity, sensitivity and compassion.

If knowledge carries this balance, only then will it make life sweet and fragrant, like the sweetness of sugarcane and the fragrance of a flower.

True knowledge is that force which renders life serene, sweet and fragrant. As sweetness is innate to sugarcane, coolness to water and fragrance to flowers so too are joy, self-restraint and contentment, the natural fruits of true knowledge. It is knowledge that grants peace, nurtures value, and ultimately illuminates the path to liberation.

❀❀❀

सण्णाणेण छक्काय-जीवा रक्खदि मण-मक्खाणि।
तह जह चक्की जयदे, चक्केणं हंदि छक्खंडं॥117॥

जिस प्रकार चक्रवर्ती चक्र से षट्खण्ड पर विजय करता है उसी प्रकार सम्यग्ज्ञान से जीव मन व पाँच इन्द्रियों रूपी षट्खंड पर विजय प्राप्त करता है एवं षट्कायिक जीवों की रक्षा करता है।

Just as a universal monarch (Chakravarti) conquers the six divisions of the world with his divine wheel, in the same way, with the power of Right Knowledge, the soul conquers the six divisions of its own– the restless mind and the five senses– and also protects the six classes of living beings.

व्याख्या–चक्रवर्ती वह होता जो अपने चक्ररत्न के बल से सम्पूर्ण षट्खण्ड भूमण्डल पर विजय प्राप्त करता है। परन्तु यह बाह्य विजय है। सम्यक् ज्ञान की महिमा इससे कहीं ऊँची है, क्योंकि यह केवल भूमि, राज्य या भौतिक सत्ता पर विजय नहीं दिलाता, बल्कि मन, इन्द्रियों और वासनाओं पर विजय दिलाता है।

मनुष्य का असली षट्खण्ड है–चञ्चल मन, पाँच इन्द्रियाँ–स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, कर्ण। इनके कारण ही जीव को बार-बार बन्धन में बंधना पड़ता है। सम्यक् ज्ञान

इन पर संयम का नियन्त्रण स्थापित करता है और जीव को आत्मबल से परिपूर्ण करता है।

एक बार एक राजा ने अपने विशाल साम्राज्य पर विजय प्राप्त की, परन्तु अपने क्रोध पर विजय न पा सका। अन्ततः उसने अपनी सम्पत्ति गँवा दी और शान्ति भी खो दी। दूसरी ओर, एक साधक जो मन और इन्द्रियों पर संयम कर लेता है वह राजाओं का राजा बन जाता है क्योंकि उसने भीतर के साम्राज्य पर अधिकार कर लिया। सच्चा विजेता वही है, जो अपनी इन्द्रियों और मन पर विजय पाता है।

आज की पीढ़ी डिजिटल चक्रवर्ती बनने की होड़ में है-मोबाइल, इंटरनेट, सोशल मीडिया, गेम्स और विज्ञापन मन की इन्द्रियों को हर समय खींचते रहते हैं।

आँखें स्क्रीन से चिपकी रहती हैं, कान गानों आदि का निरन्तर शोर सुनते हैं, रसना जंक फूड की ओर भागती है, स्पर्श और घ्राण भी भोग-विलास की ओर आकृष्ट रहते हैं।

लेकिन सच्चा सम्यक् ज्ञानी वही है जो इन पर संयम रखे, इनका सदुपयोग करे और षट्कायी जीवों (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति, और त्रस) की रक्षा करे।

जैन आगम में आता है कि एक साधक जब तपस्या के बल से अपनी इन्द्रियों को वश में कर लेता है तो जन्मजात बैरी पशु भी मैत्री से परिपूर्ण हो जाते हैं, सूखे वृक्ष फल-फूलों से लद जाते हैं, सूखी नदियों में पानी आ

जाता है। उनका व्यक्तित्व इतना तेजस्वी हो जाता है कि हिंस्र जीव भी उनके समीप अहिंस्र हो जाते हैं।

सम्यक् ज्ञान वह दिव्य चक्र है, जिससे जीव मन और इन्द्रियों के षट्खण्ड पर विजय प्राप्त करता है। यह विजय केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि सार्वभौमिक है, क्योंकि इससे जीव अन्य षट्कायिक प्राणियों की रक्षा करता है। यही सच्ची अहिंसा और सच्ची विजय है।

Explanation–"A Chakravarti is one who, through the might of his divine wheel, conquers the entire six-part realm of the world-yet this is merely an external conquest. The glory of true knowledge is far higher, for it does not grant victory over land, kingdoms, or material power alone, but over the mind, the senses, and the passions within.

For man, the real six-fold realm lies in the restless mind and the five senses. It is because of these that the soul repeatedly falls into bondage. True knowledge establishes the discipline and control over them, filling the soul with inner strength.

There was once a king who won dominion over a vast empire, yet could not triumph over his own anger. Ultimately, he lost not only his riches but also the peace of his heart. In contrast, a monk who conquers his mind and senses rises as the sovereign of sovereigns, for he has claimed true rule over the vast empire within. He alone is the true victor who masters his mind and senses.

The present generation is caught in a race to become digital conquerors. Mobiles, the internet, social media, games, and advertisements ceaselessly tug at their minds and senses, keeping them perpetually distracted. The eyes stay fixed on screens, the ears ever surrounded by ceaseless noise and music. The tongue craves junk food, while the senses of touch and smell are irresistibly drawn toward indulgence and worldly pleasures.

The truly awakened youth is he who masters these senses with discipline, employs them for noble purposes and safeguards the lives of all six classes of living beings.

According to the Jain Agama, when a monk, through the strength of austerities, subdues his senses, even the fiercest of creatures are filled with harmony, barren trees burst into bloom, and dried-up rivers flow once more. Their personality becomes so radiant that even ferocious creatures turn non-violent in their presence. This shows that one who attains inner victory influences the entire universe around him.

True knowledge is the divine wheel through which one conquers the sixfold realm of the mind, senses, and the self. This alone is true non-violence, and this is the highest form of victory.

❀❀❀

118

सदुपयोग

सुपुण्णकारगो वरो, धण- साहण-सदुवजोगो भव्वाण।
जह तह सुहदो णिच्चं, सुविज्जा-कला-सदुवजोगो॥118॥

जिस प्रकार धन व साधन का सदुपयोग भव्यों के लिए श्रेष्ठ व पुण्य का कारक है उसी प्रकार श्रेष्ठ विद्या व कला का सदुपयोग नित्य ही सुखद है।

Just as the righteous use of wealth and resources becomes auspicious and meritorious for noble beings, in the same way, the noble use of learning and arts is always blissful.

व्याख्या–धन और साधन अपने आप में न तो पुण्यकारक हैं और न ही पापकारक। वे तो केवल साधन मात्र हैं। परन्तु जब उनका सदुपयोग होता है–जैसे भूखों को अन्न देना, रोगियों की सेवा करना, समाज में धर्म और शिक्षा का प्रसार करना–तब वही धन पुण्य का कारण बन जाता है। इसके विपरीत, यदि वही धन व्यसनों, हिंसा, या दिखावे में खर्च हो, तो वह विनाशकारी सिद्ध होता है।

इसी प्रकार विद्या और कला भी तटस्थ साधन हैं। जब इन्हें सही दिशा में लगाया जाए, तो वे जीवन का आभूषण बन जाती हैं, आत्मा को शुद्ध करती हैं, और समाज को ऊँचाइयों तक ले जाती हैं। यदि सङ्गीत हो, तो वह भक्ति

में आत्मा को भावविभोर कर दे; यदि चित्रकला हो, तो वह संस्कृति का प्रतिबिम्ब बने; यदि विज्ञान हो, तो वह मानवता के उत्थान में सहायक हो। इस प्रकार विद्या और कला का सदुपयोग जीवन में नित्य सुखद और कल्याणकारी सिद्ध होता है।

आचार्य समन्तभद्र स्वामी, आचार्य अकलंकदेव स्वामी, आचार्य पूज्यपाद स्वामी आदि आचार्यों ने अपनी विद्या और काव्यकला का उपयोग ग्रन्थों की रचना में किया। उस विद्या का सदुपयोग आज तक जन-जन के जीवन में भक्ति, नैतिकता और धर्म की धारा बहा रहा है। इसके विपरीत, वही काव्यकला यदि असंयमित वासनाओं को भड़काने वाले काव्य में प्रयुक्त हो, तो वह समाज के लिए विष का कार्य करेगी।

मनीषी कहते हैं–विद्या यदि धर्म और सदाचार में प्रयुक्त हो तो कल्याण का कारण बनती है; किन्तु यदि पाप में प्रयुक्त हो तो विनाश का कारण बनती है।

Explanation–Wealth and resources, in themselves, are neither inherently virtuous nor sinful–they are merely instruments. When they are used rightly, such as to feed the hungry, care for the sick, or promote righteousness and education in society, that very wealth becomes a source of virtue and merit.

However, when misused–for indulgence, greed, or harm– the same wealth turns into a cause of sin and downfall.

In the same way, knowledge and art are also neutral tool. When directed towards the right path, they become ornaments of life, purify the soul, and elevate society to great heights.

If it is music, it should immerse the soul in devotion. If it is painting, it should reflect the richness of culture.

If it is science, it should serve as a means for the upliftment of humanity. Thus, the righteous use of knowledge and art becomes a means of enduring joy and true welfare in life.

Acharya Samantabhadra Swami,Acharya Akalanka Deva Swami,Acharya Pujyapada Swami, and many other revered Acharyas employed their profound knowledge and poetic artistry in composing timeless spiritual texts. The noble use of that knowledge has, even to this day, nurtured a stream of devotion, morality, and spiritual upliftment in countless lives. In contrast, if that very poetic art is misused to inflame unrestrained passions, it turns into poison for society.

When knowledge is applied in the service of righteousness and virtue, it becomes a cause of welfare. But when it is used for sin, it turns into a cause of destruction.

❀❀❀

योग्यजनों की ही पद नियुक्ति

जोग्गदाणुसारेणं, दाएज्ज सेवापदं सासणं दु।
णरत्त-णासो सक्को, जं गहिद-पदेण अजोग्गेण॥119॥

शासन को योग्यतानुसार ही सेवा का पद देना चाहिए, क्योंकि अयोग्य व्यक्ति के ग्रहण किये गए पद से मानवता का नाश शक्य है।

The administration should grant positions of service only according to merit, for if a position is given to an unworthy person, it can lead to the destruction of dignity.

व्याख्या—शासन और पद केवल अधिकार या शोभा का प्रतीक नहीं हैं, बल्कि वे समाज की आस्था और भविष्य का दायित्व होते हैं।

"**राजा प्रजासुखस्य हेतुर्भवति।**" अर्थात शासक प्रजा के सुख का कारण होना चाहिए।

जब कोई योग्य व्यक्ति, जिसके पास दूरदर्शिता, ईमानदारी और करुणा है, पद पर बैठता है, तो उसकी नीतियाँ शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यावरण और संस्कृति को उन्नत करती हैं।

परन्तु जब अयोग्य व्यक्ति केवल स्वार्थ और लोभ से प्रेरित होकर पद पर बैठता है, तो वह अपने निजी हित के लिए जनता का शोषण करता है, और अन्ततः मानवता और संस्कृति दोनों का ह्रास होता है।

मनुस्मृति में कहा गया है–“**राजा धर्मेण भूमिं रक्षेत्।**” अर्थात् राजा को केवल धर्म के आधार पर ही पृथ्वी की रक्षा करनी चाहिए।

आचार्यों ने भी चेतावनी दी है कि–“**अयोग्याधिष्ठित पदं सर्वनाशाय भवति।**” अर्थात्–अयोग्य व्यक्ति के हाथ में आया हुआ पद सर्वनाश का कारण बन जाता है।

यदि कोई कम्पनी योग्य नेतृत्व वाले CEO या मैनेजर को नियुक्त करती है, तो वह संस्था नवोन्मेष, पारदर्शिता और टीमवर्क के बल पर ऊँचाइयों तक पहुँचती है।

परन्तु जब किसी अयोग्य या भ्रष्ट व्यक्ति को नेतृत्व दे दिया जाता है, तो वह केवल लाभ के पीछे भागता है, और परिणामस्वरूप कर्मचारियों का शोषण, पर्यावरण की हानि और अन्ततः कम्पनी का पतन हो जाता है।

एक नगर में राजा वृद्ध हो गया और उसने अपने उत्तराधिकारी के चयन के लिए युवाओं को एक-एक बीज दिया। उसने कहा–“इन बीजों को लगाओ, जो सबसे सुन्दर पौधा लाएगा वही उत्तराधिकारी होगा।”

सभी युवाओं ने बीज बोए। महीनों बाद सभी पौधे लेकर दरबार में पहुँचे। परन्तु एक युवक खाली गमला लेकर आया। राजा ने घोषणा की–“यही मेरा उत्तराधिकारी होगा।”

सब चकित रह गए। राजा ने कहा–“मैंने सबको उबले हुए बीज दिए थे, जिनसे पौधा आ ही नहीं सकता था। इसने

झूठ नहीं बोला, बल्कि सत्यनिष्ठा से खाली गमला प्रस्तुत किया। यही नेतृत्व की योग्यता है।''

भविष्य में जब आप किसी भी संस्था, चाहे वह राजनीतिक हो या कॉर्पोरेट, का हिस्सा बनें, तो केवल पद की चाह न रखें। पहले स्वयं को योग्य, ईमानदार और सेवाभावी बनाएँ। तभी आपका पद आपको और समाज को लाभ देगा।

Explanation–Positions of governance are not mere emblems of authority or grandeur; they embody the sacred trust and future of society. The king is the cause of the people's happiness, signifying that the ruler's foremost duty is to ensure the welfare and joy of his subjects.

When a worthy individual, endowed with vision, integrity, and compassion, holds a position of authority, his policies uplift education, health, environment, and culture.

But when an unworthy person, driven only by selfishness and greed, holds a position of power, he exploits the people for his personal gain, ultimately leading to the decline of both humanity and culture. The Manusmriti declares that a king must protect the earth solely on the basis of righteousness. The Acharyas have cautioned that when power is entrusted to the unworthy, it turns into a force of ruin, bringing about widespread devastation.

If a company appoints a CEO or manager with capable leadership, the organization rises to great

heights through innovation, transparency, and teamwork. However, when leadership is handed to an unworthy or corrupt individual, he chases only profit, leading to the exploitation of employees, harm to the environment, and ultimately, the downfall of the company.

Once, in a city, there was an aged king who wished to find a worthy successor. He handed a seed to every youth and instructed, ‘Plant this seed carefully. Whoever brings me the most beautiful plant shall inherit my throne.’

Months passed, and the young men returned, proudly carrying pots filled with vibrant plants. Among them stood one youth, holding only an empty pot. The court was filled with murmurs of disbelief.

The king then rose and proclaimed, ‘Behold! This young man will be my heir.’ All were left in wonder. The king revealed, ‘The seeds I gave were boiled; they could never sprout. While others chose deceit and brought false plants, this youth stood firm in truth and presented an empty pot with integrity. Such honesty and courage make him truly deserving of leadership.

In the future, when you become a part of any organization, whether political or corporate, do not seek position for the sake of power alone. First, make yourself worthy–a person of integrity and a spirit of service. Only then will your position truly benefit both you and society.

❀❀❀

णाण-विज्जा-कलाणं, अवमाणोव्व उवेक्खा सुजोग्गाण।
विण्णाणीहि णिण्णयं, करिदव्वं विचिंतित्ता तं॥120॥

सुयोग्य जनों की उपेक्षा ज्ञान, विद्या व कला के अपमान के समान है, अतः विशेष ज्ञानियों को चिन्तन करके ही निर्णय करना चाहिए।

To neglect worthy individuals is equivalent to disrespecting knowledge, learning, and art. Therefore, important decisions should always be made after thoughtful consultation with the truly wise."

व्याख्या–जिस प्रकार किसी बगीचे में सबसे सुगन्धित पुष्प की उपेक्षा करना पूरे उपवन का अपमान है, उसी प्रकार यदि समाज योग्य, विद्वान और प्रतिभाशाली जनों की उपेक्षा करता है तो वह वस्तुतः ज्ञान, विद्या और कला का ही अपमान करता है। योग्य जन समाज की वास्तविक पूँजी होते हैं। यदि उन्हें उचित सम्मान न मिले तो प्रतिभाएँ धीरे-धीरे नष्ट हो जाती हैं और समाज का विकास रुक जाता है।

कहा गया है कि **"विद्वत्सम्मानः समाजस्य भूषणम्"**–अर्थात् विद्वानों का सम्मान समाज का आभूषण है। जो योग्यजनों का अनादर करता है, वह स्वयं अपने ही पुण्य को नष्ट करता है।

इतिहास में देखें तो सम्राट विक्रमादित्य ने अपनी सभा में नव रत्नों को प्रतिष्ठित किया। राजा भोज आदि राजाओं ने विद्वानों का सम्मान किया। उन्होंने यह भलीभाँति समझा कि राष्ट्र की समृद्धि और दीर्घजीविता का आधार योग्य विद्वानों और कलाकारों का सम्मान है। वहीं दूसरी ओर, जहाँ-जहाँ योग्य जनों की उपेक्षा हुई, वहाँ पतन निश्चित हुआ।

आज के युग में भी यही सत्य है। यदि योग्य शिक्षकों, वैज्ञानिकों, लेखकों, कलाकारों और समाजसेवियों की उपेक्षा होगी और केवल बाहरी चमक-दमक या धन के आधार पर मान-सम्मान मिलेगा, तो समाज में शिक्षा और संस्कृति की जड़ें खोखली हो जाएँगी। इसलिए पद आदि का निर्णय करते समय विशेष ज्ञानियों को गहन चिंतन करना अनिवार्य है।

सम्मान केवल धन या पद का नहीं, बल्कि योग्यता और चरित्र का होना चाहिए। सच्ची प्रगति वही है जहाँ प्रतिभा और विद्वत्ता का आदर होता है। समाज के भविष्य निर्माता के रूप में आपकी यह जिम्मेदारी है कि आप योग्य जनों को पहचानें, उनसे प्रेरणा लें और उनके आदर्शों को अपनाएँ।

Explanation–To overlook the most fragrant bloom in a garden is to dishonour the entire grove. Likewise, when a society disregards its worthy, learned, and gifted individuals, it is, in essence, rejecting the very spirit of knowledge, learning, and art.

The honour bestowed upon scholars is called the jewel of society. He who disrespects the worthy diminishes his own virtue. History teaches us this lesson clearly: Emperor Vikramaditya enriched his court with the famed Navaratnas, while King Bhoja and other illustrious rulers exalted scholars and artists, knowing well that the true foundation of a nation's strength and enduring legacy lies in reverence for the learned.

But wherever the wise were scorned and neglected, downfall was certain to follow.

This truth holds even today: if worthy teachers, doctors, engineers, scientists, writers, artists, and social workers are neglected, and honour is granted only on the basis of outward glitter or wealth, the roots of education and culture will become hollow. Therefore, when making decisions, it is essential to reflect on the insights of true experts, seek their counsel, and give due weight to their experience.

Honour must rest not upon wealth or status, but upon genuine merit and noble character. True progress flourishes where talent and learning are revered. As the architects of tomorrow's society, it is your solemn duty to identify the worthy, seek inspiration from their lives, and weave their ideals into your own actions.

❀❀❀

121,122

खे चंदक्को जावदु, पवाहिद-सरिदा ठिदो सुमेरू य।
सलिलं सीयल-मणलो, उण्हो वसुंधरा सहिण्हू॥121॥

सुमे गंधं इक्खुदंडेसु महुरिमा सिंधुम्मि रयणाणि।
तावदु गंथो विज्जदु, पवट्टदु सया सम्मसिक्खा॥122॥

जब तक आकाश में सूर्य-चन्द्रमा हैं, नदी बह रही है, सुमेरु स्थिर है, जल शीतल है, अग्नि ऊष्ण है, पृथ्वी सहनशील है, पुष्प में गन्ध है, गन्नों में मधुरता है, सागर में रत्न हैं, तब तक यह ग्रन्थ रहे एवं सम्यक् शिक्षा सदैव प्रवर्तमान रहे।

As long as the sun and the moon shine in the sky, the rivers keep flowing. Mount Sumeru stands firm, water remains cool, fire remains warm, the earth remains patient, flowers hold fragrance, sugarcane holds sweetness, and the ocean hold gems–So long shall this scripture endure, and true knowledge shall spread eternally.

व्याख्या–यह गाथा ग्रन्थ व शिक्षा की सनातनता और अमरता का घोष करती है। जैसे सृष्टि के मूलभूत तत्व–सूर्य का प्रकाश, चन्द्रमा की शीतलता, नदी का प्रवाह, सुमेरु की स्थिरता, जल की शीतलता, अग्नि की उष्णता, पृथ्वी की सहनशीलता, पुष्प की सुगन्ध, गन्ने की मधुरता और सागर के रत्न–अनादि और अविनाशी से प्रतीत होते हैं, वैसे ही शिक्षा का प्रवाह भी कभी रुकना नहीं चाहिए और यह ग्रन्थ भी उसी प्रकार हम सबको सम्यक् मार्ग प्रदर्शित करता रहे।

शिक्षा केवल पुस्तकों या कक्षाओं तक सीमित नहीं है, बल्कि वह जीवन का शाश्वत प्रवाह है। यदि शिक्षा रुक जाए, तो जीवन की चेतना भी रुक जाएगी। जैसे नदी के बिना भूमि सूख जाती है, वैसे ही शिक्षा के बिना समाज सूख जाता है।

णाणं णरस्स सारो–ज्ञान ही मनुष्य भव का सार है।

शिक्षा वह धारा है जो पीढ़ी दर पीढ़ी बहती रहती है। जिस समाज ने शिक्षा का प्रवाह रोक दिया, वह समाज सूखकर नष्ट हो गया।

Explanation– This sacred verse proclaims the timelessness and immortality of learning and scriptures. Just as the primal elements of the universe, the radiance of the sun, the soothing coolness of the moon, the ceaseless flow of rivers, the immovable grandeur of Mount Sumeru, the refreshing touch of water, the warmth of fire, the resilience of the earth, the fragrance of flowers, the sweetness of sugarcane, and the immeasurable depth of the ocean endure through all ages–so too may true wisdom forever illuminate the path of righteousness for all.

Education is far more than the confines of books and classrooms–it is the eternal radiance that gives life its meaning. When the stream of education dries up, the consciousness of life itself fades. As the earth cracks and withers without rivers, so does society decay without the nurturing flow of education. For knowledge is the very essence of humanity's being.

Education is the stream that flows from generation to generation. When a society blocks the flow of education, that society withers and perishes.

❀❀❀

123

जिणसासणे सुसिक्खा, विहि-पमाणरूवेण विणिद्दिट्ठा।
तस्सणुसारेण मए, रइदो इमो अप्पबुद्धीइ॥123॥

जिनशासन में विधि व प्रमाण रूप से सम्यक् शिक्षा कही गई है, उसी के अनुसार मुझ अल्पबुद्धि के द्वारा इस ग्रन्थ की रचना की गई है।

In the tradition of the Jina's teaching, where true education is prescribed with proper method and authority, this humble work has been composed by me, of little intellect.

व्याख्या–यह गाथा पूरे ग्रन्थ का नम्र समापन है। इसमें लेखक अपनी विनयपूर्ण भावना प्रकट करता है। वह कहता है कि यह ग्रन्थ मेरी बुद्धि या अहङ्कार का परिणाम नहीं है, बल्कि जिनशासन–अर्थात् तीर्थङ्करों और आचार्यों की शिक्षाओं–की परम्परा में विधिपूर्वक और प्रमाण सहित कही गई सम्यक शिक्षा के आधार पर रचा गया है।

यहाँ "मुझ अल्पबुद्धि" कहना लेखक की नम्रता और आत्मविनय का प्रतीक है। यही विनय शिक्षा का प्रथम आभूषण है। विनय सभी विद्याओं की जड़ है।

यह गाथा बताती है कि लेखक ने अपने श्रम का श्रेय स्वयं को नहीं, बल्कि जिनशासन और उसकी शिक्षा को दिया है।

यह गाथा हमें सिखाती है कि चाहे हम कितना भी पढ़ लें, कितना भी लिख लें, परन्तु विनय और नम्रता बनाए रखना अनिवार्य है। ज्ञान कभी अहङ्कार का कारण न बने।

सच्ची शिक्षा वही है, जो हमें ''मैं जानता हूँ सब कुछ'' के गर्व से बचाकर ''मैं तो अभी सीख रहा हूँ की भावना में रखे।'

Explanation–This verse serves as the humble conclusion of the entire text. In it, the author expresses his reverent humility, stating that this work is not the outcome of his own intellect or ego. Rather, it has been composed on the firm foundation of the authentic and well-documented teachings of the Jain tradition–the timeless wisdom of the Tirthankaras and Acharyas, preserved and passed down through generations.

When the author refers to himself as 'of limited understanding', it is a mark of his modesty and deep self-discipline. Such humility is the foremost ornament of education, for humility is the very root of all learning.

This verse shows that the author does not claim the credit for his efforts, but attributes it to the teachings and guidance of the Jain tradition. It teaches us that no matter how much we read or write, it is essential to always uphold humility and modesty. Knowledge should never become a cause for arrogance. True education is that which keeps us away from the pride of 'I know everything' and instead nurtures the spirit of 'I am still learning.'

❀❀❀

124,125

अन्तिम मङ्गलाचरण व प्रशस्ति

चरियचक्किं च सूरिं, संतिसायरं तहा पायसिंधुं।
जयकित्तिं सिरीदेस-भूसणं विज्जाणंद-गुरुं॥124॥

णमंसामि भत्तीए, जाण किवाए गंथिमो विरइदो।
वसुणंदि-सूरिणा मइ, अप्पबुद्धीइ सव्वहिदाय॥125॥ (जुम्मं)

मैं (आचार्य वसुनन्दी मुनि) उन चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागर जी मुनिराज, महातपस्वी आचार्य श्री पायसागर जी मुनिराज, अध्यात्मयोगी आचार्य श्री जयकीर्ति जी मुनिराज, भारतगौरव आचार्य श्री देशभूषण जी मुनिराज, सिद्धांत चक्रवर्ती राष्ट्रसन्त आचार्य श्री विद्यानन्द जी मुनिराज को भक्तिपूर्वक नमस्कार करता हूँ, जिनकी कृपा से मुझ अल्पबुद्धि आचार्य वसुनन्दी के द्वारा सर्वहित के लिए यह ग्रन्थ रचा गया।

I (Acharya Vasunandi) bow with deep reverence to those–Charitra Chakravarti (Supreme Sovereign of Righteous Conduct) Acharya Shri Shanti Sagar ji Muniraj, Mahatapasvi (great Ascetic) Acharya Shri Payasagar ji Muniraj, Adhyatma Yogi (Spiritual Yogi) Acharya Shri Jaikirti ji Muniraj, Bharat Gaurav (Pride of Bharat) Acharya shri Deshbhushan ji Muniraj, Siddhanta Chakravarti, Rashtra Sant (National Saint) Acharya Shri Vidyanand ji Muniraj, by whose grace this scripture has been composed by me, Acharya

Vasunandi, in a spirit of selflessness and for the welfare of all.

व्याख्या–यहाँ ग्रन्थकार उन सभी महान आचार्यों को भक्ति-भाव से नमस्कार करते हैं, जिनकी कृपा और प्रेरणा से उन्होंने अपने निजी स्वार्थ से रहित होकर, केवल समस्त प्राणियों के कल्याण हेतु इस ग्रन्थ की रचना की। यह ग्रन्थ न केवल ज्ञान का दीपक है, बल्कि साधना, शिक्षा और संस्कृति की अमूल्य धरोहर भी है।

गुरु-परम्परा का यह आदर्श यही सिखाता है कि वास्तविक शिक्षा और साहित्य वही है जो अहङ्कार-रहित, लोभ-रहित और जनहितकारी हो। जिस प्रकार गङ्गा अपने निर्मल प्रवाह से जन-जन को शीतलता प्रदान करती है, उसी प्रकार ऐसे आचार्यों की प्रेरणा से रचित ग्रन्थ युगों-युगों तक साधकों के लिए शान्ति और मार्गदर्शन का कारण बनते हैं।

जैसा कि कवि तुलसीदास ने भी कहा है–

गुरु बिन होइ न ज्ञान, गुरु बिन मिटइ न मोह।
गुरु बिन लखइ न सत्य को, गुरु बिन न होत उधोह।।

इसलिए गुरु-शिष्य परम्परा में आचार्य श्री वसुनन्दी जी मुनिराज का यह कार्य, केवल लेखन नहीं, बल्कि सम्पूर्ण मानव जाति के लिए अमूल्य उपहार है।

Explanation–Here, author bow with devotion to all those revered Acharyas, by whose grace and inspiration, he (Acharya Shri Vasunanadi ji Muniraj)

composed this scripture–not for his own self-interest, but solely for the welfare of all beings. This text is not merely a collection of words; it is a lamp of wisdom, a treasure of discipline, and a living heritage of culture.

The tradition of the Guru teaches us that true knowledge and literature are always free from ego, free from greed, and dedicated to the service of humanity. Just as the Ganga, in its pure flow, offers coolness and relief to all, so too the scriptures born from the selfless spirit of such masters remain a source of peace and guidance for seekers across generations.

As the poet Tulsidas has said:

"Without the Guru, there is no knowledge; without the Guru, delusion is never dispelled.

Without the Guru, truth cannot be realised; without the Guru, liberation cannot be attained."

Thus, in this noble lineage, the work of Acharya Shri Vasunanadi ji Muniraj is not merely writing–it is an invaluable boon for all of humanity.

❀❀❀

126

णह-गुरु-गव्व-चेयणा-वीरब्धे वइसाह-असिदपक्खे।
तिदियाइ गंथ-पुण्णो, इमो पुण्णाहे सुहजोगे॥126॥

वैशाख कृष्ण तृतीया, नभ (0), गुरु (5), गव्य (5), चेतना (2) "अङ्कानां वामतो गतिः" से 2550 वीर निर्वाण सम्वत् शुभ योग, शुभ दिन में यह ग्रन्थ पूर्ण हुआ।

In the Vira Nirvana Samvat 2550, on the third day of the dark half of Vaisakha, under an auspicious conjunction, on a sacred day–this scripture was completed."

व्याख्या–यह पंक्ति केवल एक तिथि का उल्लेख नहीं करती, बल्कि यह उस धार्मिक, ऐतिहासिक और आध्यात्मिक क्षण का साक्ष्य है, जब यह अमूल्य ग्रन्थ अपनी सम्पूर्णता को प्राप्त हुआ। जिस प्रकार किसी साधक के लिए दीक्षा का क्षण जीवन में मील का पत्थर होता है, उसी प्रकार यह तिथि इस ग्रन्थ की अक्षय ज्योति को स्थापित करने वाली है।

यह ग्रन्थ केवल उस युग के लिए नहीं, बल्कि भावी युगों के लिए भी मार्गदर्शक है। समय के प्रवाह में बहुत कुछ बदलता है, परन्तु जो शिक्षा, संस्कृति और धर्म से ओत-प्रोत हो–वह शाश्वत रहती है। इसीलिए, इस पूर्णता का दिन एक सांस्कृतिक उत्सव की भाँति माना जा सकता

है, जब ज्ञान, श्रद्धा और समर्पण एक साथ मिलकर अक्षुण्ण हो गए।

यह ग्रन्थ स्वयं में एक ज्ञानदीप है, जो आने वाली पीढ़ियों के लिए मार्ग प्रशस्त करता रहेगा।

Explanation–This statement is not merely a record of a date, but a testimony to the religious, historical, and spiritual significance of the moment when this invaluable work attained its completion. Just as initiation marks an eternal milestone in the life of a seeker, so too does this date mark the establishment of the imperishable light of this scripture.

This work is not confined to the time in which it was written; rather, it is a guiding beacon for generations to come. While the flow of time changes many things, that which is infused with education, culture, and dharma remains eternal. Thus, the day of its completion may be regarded as a cultural celebration, a moment when knowledge, devotion, and selfless service became one and were enshrined in permanence.

This scripture is a lamp of wisdom that shall continue to illuminate the path for future generations.

❀❀❀

परम पूज्य अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्य श्री 108

वसुनंदी जी मुनिराज द्वारा

रचित व संपादित साहित्य

मौलिक कृतियाँ

(प्राकृत साहित्य)			
क्र.सं.	नाम	क्र.सं.	नाम
1.	प्राकृत वाणी भाग-1	2.	प्राकृत वाणी भाग-2
3.	प्राकृत वाणी भाग-3	4.	प्राकृत वाणी भाग-4
5.	अहिंसगाहारो (अहिंसक आहार)	6.	अज्ज-सक्किदी (आर्य संस्कृति)
7.	अणुवेक्खा-सारो (अनुप्रेक्षा सार)	8.	जिणवर-थोत्तं (जिनवर स्तोत्र)
9.	जदि-किदि-कम्मं(यति कृतिकर्म)	10.	णंदिणंद-सुत्तं (नंदीनंद सूत्र)
11.	णिग्गंथ-थुदी (निर्ग्रन्थ स्तुति)	12.	तच्चसारो (तत्त्व सार)
13.	धम्म सुत्तं (धर्म सूत्र)	14.	अप्प-विहवो (आत्म वैभव)
15.	सुद्धप्पा (शुद्धात्मा)	16.	अप्पणिब्भर-भारदं (आत्मनिर्भर भारत)
17.	विज्जा-वसु-सावयायारो (विद्यावसु श्रावकाचार)	18.	रट्ठ-संति-महाजण्णो (राष्ट्र शांति महायज्ञ)
19.	अट्ठंग जोगो (अष्टांग योग)	20.	णमोयार महप्पुरो (णमोकार माहात्म्य)
21.	मूल-वण्णो (मूल वर्ण)	22.	मंगल-सुत्तं (मंगल सूत्र)
23.	विस्स-धम्मो (विश्व धर्म)	24.	विस्स-पुज्जो-दियंबरो (विश्व पूज्य दिगम्बर)
25.	समवसरण सोहा (समवसरण शोभा)	26.	वयण-पमाणत्तं (वचन प्रमाणत्व)
27.	अप्पसत्ती (आत्म शक्ति)	28.	कला-विण्णाणं (कला विज्ञान)
29.	को विवेगी (विवेकी कौन)	30.	पुण्णासव-णिलयो (पुण्यास्रव निलय)
31.	तित्थयर-णामत्थुदी (तीर्थंकर नाम स्तुति)	32.	रयणकंडो (सूक्ति कोश)
33.	धम्मस्स सुत्ति संगहो	34.	कम्म-सहावो (कर्म स्वभाव)
35.	खवगराय सिरोमणी (क्षपकराज शिरोमणि)	36.	सिरि सीयलणाह-चरियं (श्री शीतलनाथ चरित्र)
37.	अज्झप्प-सुत्ताणि (अध्यात्म सूत्र)	38.	समणायारो (श्रमणाचार)
39.	असोग-रोहिणी-चरियं (अशोक रोहिणी चरित्र) (महाकाव्य)	40.	लोगुत्तरविट्टी (लोकोत्तर वृत्ति)
41.	समणभावो (श्रमण भाव)	42.	झाणसारो (ध्यानसार)
43.	इड्डिसारो (ऋद्धिसार)	44.	जिणवयणसारो (जिनवचनसार)
45.	भत्तिगुच्छो (भक्ति गुच्छ)	46.	पसमभावो (प्रशम भाव)
47.	सम्मेदसिहर महप्पुरो (सम्मेदशिखर महात्म्य)	48.	अम्हाण आयवत्तो (हमारा आर्यावर्त्त)

49.	विणयसारो (विनय सार)	50.	तव-सारो (तप सार)
51.	भाव-सारो (भाव सार)	52.	दाण-सारो (दान सार)
53.	लेस्सा-सारो (लेश्या सार)	54.	वेरग्ग-सारो (वैराग्य सार)
55.	णाण-सारो (ज्ञान सार)	56.	णीदि-सारो (नीति सार)
57.	आयंस-सिक्खाविही (आदर्श शिक्षाविधि)	58.	दंसण-परिक्खा (दर्शन परीक्षा)
59.	महाणुभावो (महानुभाव)	60.	उववासो (उपवास)
61.	संजम-सारो (संयमसार)	62.	सम्मत्त-सारो (सम्यक्त्व सार)

टीका ग्रंथ

1.	प्रमेया टीका-रत्नमाला (संस्कृत)	2.	वसुधा टीका-द्रव्यसंग्रह (संस्कृत)
3.	नय प्रबोधिनी-आलाप पद्धति (हिंदी)	4.	श्रीनंदा टीका-सिद्धिप्रिय स्तोत्र (संस्कृत)

इंग्लिश साहित्य

1.	Inspirational Tales Part& 1&2	2.	Meethe Pravachan Part-I

वाचना साहित्य

1.	इष्टोपदेश (मुक्ति का वाग्दान)	2.	प्रश्नोत्तर रत्नमालिका (बोधि वृक्ष)
3.	सामायिक पाठ (शिवपथ का रथ)	4.	समाधि तंत्र (स्वात्मोपलब्धि)
5.	रत्नकरण्ड श्रावकाचार (श्रावकधर्म-संहिता)	6.	ज्ञानांकुश (तत्त्व चिंतन के सूत्र)

प्रवचन साहित्य

1.	आईना मेरे देश का	2.	उत्तम क्षमा धर्म (आत्मा का ए.सी. रूम)
3.	उत्तम मार्दव धर्म (मान महाविष रूप)	4.	उत्तम आर्जव धर्म (रंचक दगा बहुत दुःखदानी)
5.	उत्तम शौच धर्म (लोभ पाप का बाप बखाना)	6.	उत्तम सत्य धर्म (सतवादी जग में सुखी)
7.	उत्तम संयम धर्म (जिस बिना नहिं जिनराज सीझे)	8.	उत्तम तप धर्म (तप चाहे सुरराय)
9.	उत्तम त्याग धर्म (निज हाथ दीजे साथ लीजे)	10.	उत्तम आकिंचन धर्म (परिग्रह चिंता दुःख ही मानो)
11.	उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म (चेतना का भोग)	12.	खुशी के आँसू
13.	खोज क्यों रोज-रोज	14.	गुरुत्तं भाग 1
15.	गुरुत्तं भाग 2	16.	गुरुत्तं भाग 3
17.	गुरुत्तं भाग 4	18.	गुरुत्तं भाग 5
19.	गुरुत्तं भाग 6	20.	गुरुत्तं भाग 7

21.	गुरुत्तं भाग 8	22.	गुरुत्तं भाग 9
23.	गुरुत्तं भाग 10	24.	गुरुत्तं भाग 11
25.	गुरुत्तं भाग 12	26.	गुरुत्तं भाग 13
27.	गुरुत्तं भाग 14	28.	गुरुत्तं भाग 15
29.	गुरुत्तं भाग 16	30.	गुरुत्तं भाग 17
31.	गुरुत्तं भाग 18	32.	चूको मत
33.	जय बजरंगबली	34.	जीवन का सहारा
35.	ठहरो! ऐसे चलो	36.	तैयारी जीत की
37.	दशामृत	38.	धर्म की महिमा
39.	ना मिटना बुरा है न पिटना	40.	नारी का धवल पक्ष
41.	शायद यही सच है	42.	श्रुत निर्झरी
43.	सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य की शौर्य गाथा	44.	सीप का मोती (महावीर जयंती)
45.	स्वाती की बूँद		

हिंदी गद्य रचना

1.	अन्तर्यात्रा	2.	अच्छी बातें
3.	आज का निर्णय	4.	आ जाओ प्रकृति की गोद में
5.	आधुनिक समस्यायें प्रमाणिक समाधान	6.	आहारदान
7.	एक हजार आठ	8.	कलम पट्टी बुद्धिका
9.	गागर में सागर	10.	गुरु कृपा
11.	गुरुवर तेरा साथ	12.	जिन सिद्धांत महोदधि
13.	डॉक्टरों से मुक्ति	14.	दान के अचिन्त्य प्रभाव
15.	धर्म बोध संस्कार (भाग 1-4)	16.	धर्म संस्कार (भाग 1-2)
17.	निज अवलोकन	18.	वसु विचार
19.	वसुनन्दी उवाच	20.	मीठे प्रवचन (भाग 1)
21.	मीठे प्रवचन (भाग 2)	22.	मीठे प्रवचन (भाग 3)
23.	मीठे प्रवचन (भाग 4)	24.	मीठे प्रवचन (भाग 5)
25.	मीठे प्रवचन (भाग 6)	26.	रोहिणी व्रत कथा
27.	स्वप्न विचार	28.	सद्गुरु की सीख
29.	सफलता के सूत्र	30.	सर्वोदयी नैतिक धर्म
31.	संस्कारादित्य	32.	हमारे आदर्श

हिंदी काव्य रचना

1.	अक्षरातीत	2.	कल्याणी

3.	चैन की जिंदगी	4.	ना मैं चुप हूँ ना गाता हूँ
5.	मुक्ति दूत के मुक्तक	6.	हाइकू
7.	हीरों का खजाना	8.	सुसंस्कार वाटिका

विधान रचना

1.	कल्याण मंदिर विधान	2.	कलिकुण्ड पार्श्वनाथ विधान
3.	चौसठऋद्धि विधान	4.	णमोकार महार्चना
5.	दु:खों से मुक्ति (बृहद् सहस्रनाम महार्चना)	6.	यागमंडल विधान
7.	श्री समवशरण महार्चना	8.	श्री नंदीश्वर विधान
9.	श्री सम्मेदशिखर विधान	10.	श्री अजितनाथ विधान
11.	श्री संभवनाथ विधान	12.	श्री पद्मप्रभ विधान
13.	श्री चंद्रप्रभ विधान (देहरा तिजारा)	14.	श्री चंद्रप्रभ विधान
15.	श्री पुष्पदंत विधान	16.	श्री शांतिनाथ विधान
17.	श्री मुनिसुव्रतनाथ विधान	18.	श्री नेमिनाथ विधान
19.	श्री महावीर विधान	20.	श्री जम्बूस्वामी विधान
21.	श्री भक्तामर विधान	22.	श्री सर्वतोभद्र महार्चना
23.	श्री पंचमेरू विधान	24.	लघु नंदीश्वर विधान
25.	श्री चौबीसी महार्चना	26.	अभिनव सिद्धचक्र महार्चना
27.	अभिनव सिद्धचक्र मंत्रार्चना		

संपादित कृतियाँ (संस्कृत प्राकृत साहित्य)

1.	आराधना सार (श्रीमद्देवसेनाचार्य जी)	2.	आराधना समुच्चय (श्री रविचन्द्राचार्य)
3.	आध्यात्म तरंगिणी (आचार्य सोमदेव सूरी जी)	4.	कर्म विपाक (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
5.	कर्मप्रकृति (सिद्धांतचक्रवर्ती आ. श्री अभयचंद्र जी)	6.	गुणरत्नाकर (रत्नकरण्ड श्रावकाचार) (आ. श्री समंतभद्र स्वामी जी)
7.	चार श्रावकाचार संग्रह	8.	जिनकल्पि सूत्र (श्री प्रभाचंद्राचार्य जी)
9.	जिन श्रमण भारती (संकलन-भक्ति, स्तुति, ग्रंथादि)	10.	जिन सहस्रनाम स्तोत्र
11.	तत्त्वार्थ सार (श्री मदमृताचन्द्राचार्य सूरि)	12.	तत्त्वार्थस्य संसिद्धि
13.	तत्त्वार्थ सूत्र (आ. श्री उमास्वामी जी)	14.	तत्त्वज्ञान तरंगिणी (श्री मद्भट्टारक ज्ञानभूषण जी)
15.	तच्च वियारो सारो (आ. श्री वसुनंदी जी)	16.	तत्व भावना (आ. श्री अमितगति जी)

17.	धर्म रत्नाकर (श्री जयसेनाचार्य जी)	18.	धम्म रसायण (आ. श्री पद्मनंदी स्वामी जी)
19.	ध्यान सूत्राणि (श्री माघनंदी सूरी)	20.	नीतिसारसमुच्चय (आ. श्री इंद्रनंदीस्वामी जी)
21.	पंच विंशतिका (आ. श्री पद्मनंदी जी)	22.	प्रकृति समुत्कीर्तन (सिद्धांत चक्रवर्ती श्री नेमीचंद्राचार्य जी)
23.	पंचरत्न	24.	पुरुषार्थसिद्ध्युपाय (आ. श्री अमृतचंद्रस्वामी जी)
25.	मरणकण्डिका (आ. श्री अमितगति जी)	26.	भगवती आराधना (आ. श्री शिवकोटी स्वामी जी)
27.	भावत्रयफलप्रदर्शी (आ. श्री कुंथुसागर जी)	28.	मूलाचार प्रदीप (आ. श्री सकलकीर्तिस्वामी जी)
29.	योगामृत (भाग 1-2) (मुनि श्रीबाल चंद्र जी)	30.	योगसार (भाग 1, 2) (मुनि श्री बालचंद्र जी)
31.	रयणसार (आ. श्री कुंदकुंद स्वामी)	32.	वसुऋद्धि
*	रत्नमाला (आ. श्री शिवकोटि स्वामी जी)	*	स्वरूप संबोधन (आ. श्री अकलंक देव जी)
*	पूज्यपाद श्रावकाचार (आ. श्री पूज्यपाद जी)	*	इष्टोपदेश (आ. श्री पूज्यपाद स्वामी जी)
*	लघु द्रव्य संग्रह (आ. श्री नेमीचंद्र स्वामी जी)	*	वैराग्यमणिमाला (आ. श्री विशालकीर्ति जी)
*	अर्हत् प्रवचनम् (आ. श्री प्रभाचंद्र स्वामी जी)	*	ज्ञानांकुश (आ. श्री योगीन्द्र देव)
33.	सुभाषित रत्न संदोह (आ. श्री अमितगतिस्वामी जी)	34.	सिन्दूर प्रकरण (आ. श्री सोमदेव स्वामी जी)
35.	समाधि तंत्र (आ. श्री पूज्यपाद स्वामी जी)	36.	समाधि सार (आ. श्री समंतभद्र स्वामी जी)
37.	सार समुच्चय (आ. श्री कुलभद्र स्वामी जी)	38.	विषापहार स्तोत्र (महाकवि धनंजय)

प्रथमानुयोग साहित्य			
1.	अमरसेन चरित्र (कविवर माणिक्कराज जी)	2.	आराधना कथा कोश (ब्र. श्री नेमीदत्त जी) (भाग 1-2-3)
3.	करकण्डु चरित्र (मुनि श्री कनकामर जी)	4.	कोटिभट श्रीपाल चरित्र (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
5.	गौतम स्वामी चारित्र (मण्डलाचार्य श्री धर्मचंद्र जी)	6.	चारूदत्त चरित्र (ब्र. श्री नेमीदत्त जी)

7.	चित्रसेन पद्मावती चरित्र (पं. पूर्णमल्ल जी)	8.	चेलना चरित्र
9.	चंद्रप्रभ चरित्र	10.	चौबीसी पुराण
11.	जिनदत्त चरित्र (कविवर ब्रह्मराय)	12.	त्रिवेणी (संग्रह ग्रंथ)
13.	देशभूषण कुलभूषण चरित्र	14.	धर्मामृत (भाग 1-2) (श्री नयसेनाचार्य जी)
15.	धन्यकुमार चरित्र (आ. श्री सकलकीर्ति जी)	16.	नागकुमार चरित्र (आ. श्री मल्लिषेण जी)
17.	नंगानंग कुमार चरित्र (श्रीमान् देवदत्त)	18.	प्रभंजन चरित्र (कविवर ब्रह्मराय)
19.	पाण्डव पुराण (श्री मदाचार्य शुभचंद्र देव)	20.	पार्श्वनाथ पुराण (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
21.	पुण्याश्रव कथा कोष (भाग 1-2) (श्री रामचंद्र मुमुक्षु)	22.	पुराण सार संग्रह (भाग 1-2) (आ. श्री दामनंदी जी)
23.	भरतेश वैभव (कवि रत्नाकर)	24.	भद्रबाहु चरित्र
25.	मल्लिनाथ पुराण (आ. श्री सकलकीर्ति जी)	26.	महीपाल चरित्र (कविवर श्री चारित्र भूषण)
27.	महापुराण (भाग 1-2)	28.	महावीर पुराण (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
29.	मौनव्रत कथा (आ. श्री श्रीचंद्र स्वामी जी)	30.	यशोधर चरित्र
31.	रामचरित्र (भाग 1-2) (आ. श्री सोमदेव स्वामी)	32.	रोहिणी व्रत कथा
33.	व्रत कथा संग्रह	34.	वरांग चरित्र (आ. श्री जटासिंह नंदी)
35.	विमलनाथ पुराण (श्री ब्रह्मचारीश्वर कृष्णदास जी)	36.	वीर वर्धमान चरित्र
37.	श्रेणिक चरित्र	38.	श्रीपाल चरित्र (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
39.	श्री जम्बूस्वामी चरित्र (श्री वीर कवि)	40.	शांतिनाथ पुराण (भाग 1-2) (कवि असग जी)
41.	सप्तव्यसन चरित्र (आ. श्री सोमकीर्ति भट्टारक)	42.	सम्यक्त्व कौमुदी
43.	सती मनोरमा	44.	सीता चरित्र (श्री दयाचंद गोलीय)
45.	सुरसुंदरी चरित्र	46.	सुलोचना चरित्र
47.	सुकुमाल चरित्र	48.	सुशीला उपन्यास
49.	सुदर्शन चरित्र (पं. गोपालदास बरैया)	50.	सुभौम चक्रवर्ती चरित्र
51.	हनुमान चरित्र	52.	क्षत्र चूड़ामणि (जीवंधर चरित्र)

संपादित हिंदी साहित्य			
1.	अरिष्ट निवारक त्रय विधान • नवग्रह विधान • वास्तु निवारण विधान • मृत्युंजय विधान (पं. आशाधर जी कृत)		
2.	श्री जिनसहस्रनाम एवं पंचपरमेष्ठी विधान		
3.	श्री जिनसहस्रनाम विधान (लघु) आदि एक नाम अनेक		
4.	शाश्वत शांतिनाथ ऋद्धि विधान • भक्तामर विधान (आ. मानतुंग स्वामी जी (मूल) • शांतिनाथ विधान (पं. ताराचंद्र जी) • सम्मेदशिखर विधान (पं. जवाहर दास जी)		
5.	कुरल काव्य (संत तिरुवल्लुवर)	6.	तत्त्वोपदेश (छहढाला) (पं. प्रवर दौलतराम जी)
7.	दिव्य लक्ष्य (संकलन- हिंदी पाठ, स्तुति आदि)	8.	धर्म प्रश्नोत्तर (आ. श्री सकलकीर्ति जी)
9.	प्रश्नोत्तर श्रावकाचार (आ. श्री सकलकीर्ति जी)	10.	भक्तिसागर (चौबीसी चालीसा संग्रह)
11.	विद्यानंद उवाच (आ. श्री विद्यानंद जी मुनिराज)	12.	सुख का सागर (चौबीसी चालीसा)
13.	संसार का अंत	14.	स्वास्थ्य बोधामृत
15.	पिच्छि-कमण्डलु (आ. श्री विद्यानंद जी मुनिराज)		

गुरु पद विनयांजली साहित्य			
1.	आचार्य श्री विद्यानंद जी की यम सल्लेखना (मुनि प्रज्ञानंद)	2.	अक्षर शिल्पी (मुनि शिवानंद)
3.	पगवंदन (मुनि शिवानंद प्रशमानंद)	4.	वसुनंदी प्रश्नोत्तरी (मुनि जिनानंद, ऐ. विज्ञान सागर)
5.	दृष्टि दृश्यों के पार (आ. श्री वर्धस्व नंदनी, वर्चस्व नंदनी)	6.	स्मृति पटल से भाग-1 (आ. श्री वर्धस्व नंदनी)
7.	स्मृति पटल से भाग-2 (आ. श्री वर्धस्व नंदनी)	8.	अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी (ऐलक विज्ञान सागर)
9.	गुरु आस्था (ऐलक विज्ञान सागर)	10.	परिचय के गवाक्ष में (ऐलक विज्ञान सागर)
11.	स्वर्णोदय (ऐलक विज्ञान सागर)	12.	स्वर्ण जन्मजयंती महोत्सव (ऐलक विज्ञान सागर)
13.	हस्ताक्षर (ऐलक विज्ञान सागर)	14.	वसु संबुध (महाकाव्य) (प्रो. डॉ. उदयचंद जी जैन)
15.	समझाया रविन्दु न माना (सचिन जैन 'निकुंज')		

परम पूज्य आचार्य श्री वसुनंदी जी मुनिराज कृत

जिणवाणी-थुदी

महुरं विसदं पिय-गंभीरं

हिदयरं मिदं सिरिजिणवाणिं।

अणेगंतमयं सिआवायमयं

णिरुवमं समं सिरिजिणवाणिं।

जिणसव्वंगादो णिस्सरिदं

भविचित्तहरं सिरिजिणवाणिं।

बारस-अंगेहिं संजुत्तं

लोएपुज्जं सिरिजिणवाणिं।

कंठादिवचोकारणरहिदं

तयरोयहरं सिरिजिणवाणिं।

जगमंगल्लं जगकल्लाणिं

पणमामि सया सिरिजिणवाणिं।

NOTES

NOTES